साहित्य अमृत

मासिक

वर्ष-२३ अंक-११ ❖ पृष्ठ ८८ ज्येष्ठ-आषाढ़, संवत्-२०७५ जून २०१८

संस्थापक संपादक

स्व. पं. विद्यानिवास मिश्र

❖

पूर्व संपादक

स्व. डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

❖

संपादक

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

❖

प्रबंध संपादक

श्यामसुंदर

❖

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

❖

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड,

नई दिल्ली-११०००२

फोन : २३२८९७७७ • फैक्स : २३२५३२३३

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

❖

शुल्क

एक अंक —₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

❖

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी श्यामसुंदर द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं ग्राफिक वर्ल्ड, १६८६, कूचा दखनीराय, दरियागंज, नई दिल्ली-२ द्वारा मुद्रित।

❖

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

संपादकीय

कर्नाटक विधानसभा चुनाव ४

प्रतिस्मृति

एक कुत्ते की डायरी/ *प्रभाकर माचवे* ११

कहानी

तलाक, तलाक, तलाक/ *मदन मोहन वर्मा* १६

छुटकारा/ *प्रमोद कुमार सुमन* २१

ओल्ड एज होम/हॉस्टल/ *राहिला रईस* ३१

बैरी भए पालनहार/ *राजेंद्र परदेसी* ३६

कसक/ *रेखा लोढ़ा 'स्मित'* ५२

झुर्रियाँ/ *ममता चंद्रशेखर* ५६

रंग/ *रोचिका शर्मा* ६२

आलेख

भगवान् श्रीबदरीनाथजी की आरती/ *बालकवि बैरागी* १४

भारतीय दर्शन में आनंद/ *लक्ष्मीनिवास झुंझुनवाला* १८

क्या मृत्यु का पूर्वाभास संभव है/ *आनंद शर्मा* २८

भीषण गरमी का प्रकोप दुनिया को ले डूबेगा/ *राजकुमार कुंभज* ३४

तुलसीदास की प्रथम रचना—रामलला नहछू/ *मजीद अहमद* ५०

वैश्विक परिदृश्य में योग का महत्त्व/ *मारूफ उर रहमान* ५४

लघुकथा

सामाजिकता/ अशोक गुजराती १५

सच बताना/ अशोक गुजराती ५७

लत/ अशोक गुजराती ८०

कविता

रचना नव आख्यान/ दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय' १२

गड़े मुरदे मत उखाड़ो/ *मालती शर्मा* १३

अंधकार के वक्ष को''/ *दिनेश भारद्वाज* २३

दिन बदल गए हैं/ *कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'* २७

गिला किससे करती ?/ *हरीतिमा* ३३

सर्वव्यापी माँ आद्यशक्ति/ *जूही वैष्णव* ५१

रूह का शीतल आभास/ *गरिमा चारण* ६०

पानी की पहचान/ *राधाकांत भारती* ६४

गहन अनुभवों की कथा''/ *विनय मिश्र* ६५

तपन से त्रस्त जन''/ *राम सुमिरन पांडेय* ७५

जिसका जग में तोल नहीं/ *रीता सिंह* ७७

संस्मरण

विश्वप्रसिद्ध जंतुविज्ञानी डॉ. रामेश बेदी : कुछ संस्मरण/ *प्रेमपाल शर्मा* ६८

राम झरोखे बैठ के

पत्थर फेंको, सुखी रहो/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४७

स्मरण

लघुता में एक महामानव : बालकवि बैरागी/ *अशोक चक्रधर* २४

'विक्रम' के पराक्रम का सूर्य/ *राजशेखर व्यास* ३९

व्यंग्य

पुस्तक-प्रेमी/ *अश्विनी कुमार दुबे* ५८

साहित्य का भारतीय परिपार्श्व

मकान के किराए का सवाल/ *गुरदेव चौहान* ६१

साहित्य का विश्व परिपार्श्व

मिर्जा की दृष्टि/ *जोसेफ एडीसन* ६६

यात्रा-वृत्तांत

मायावी मस्ताना मतवाला मेलबोर्न/ *फूलचंद मानव* ७६

लोक-साहित्य

'रवांई' में सरनौल का पांडव नृत्य/ *महाबीर रवांल्टा* ७८

बाल-संसार

चाहत के सपने/ *फहीम अहमद* ८१

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८२

वर्ग-पहेली ८३

साहित्यिक गतिविधियाँ ८४

संपादकीय

कर्नाटक विधानसभा चुनाव

कर्नाटक विधानसभा चुनाव ने देश में एक नया रंग दिखाया। पंजाब के अतिरिक्त वही एक बड़ा राज्य है, जहाँ कांग्रेसी शासन था। भाजपा उसको अपने लिए दक्षिण का एक मुख्य द्वार मान रही थी। कांग्रेस का गुजरात में अच्छा प्रदर्शन रहा था; बाद में राजस्थान में लोकसभा के उपचुनाव में दो सीटें और विधानसभा की एक सीट जीतने के बाद कांग्रेस में एक नई आशा का संचार हुआ। कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी के भी तेवर बदले। उन्हें उम्मीद होने लगी कि मध्य प्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़, जहाँ इस वर्ष के अंत तक चुनाव होने हैं, वे सत्ता हासिल कर सकेंगे। इस सबका असर २०१९ के आम चुनाव पर होगा और यह आशा पनपने लगी कि राहुल गांधी के नेतृत्व में और विरोधी दलों की सहायता से केंद्र में सत्ता-परिवर्तन संभव है। कर्नाटक चुनाव पर सभी की आँखें लगी थीं कि वहाँ की जीत या हार २०१९ के आम चुनावों के संभावित नतीजों की ओर इशारा करेगी। कर्नाटक के चुनाव में कांग्रेस ने अपनी पूरी शक्ति झोंक दी। कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी ने तरह-तरह की कोशिशें कीं कि कांग्रेस की सरकार पुन: सत्ता में आए। उधर भाजपा अध्यक्ष अमित शाह ने भी वहाँ डेरा डाल दिया और कांग्रेस को अपदस्थ करने की रणनीति निर्मित की। तीनों दल अपनी-अपनी जीत का दावा करते रहे। कांग्रेस अपनी सरकार न बचा सकी और भाजपा की १०४ सीटों की जीत के बाद बढ़त पर विराम लग गया। कांग्रेस के पास ७८ और जे.डी.एस. के ३७ सदस्य हैं। ऐसे में जनता दल (सेकुलर) की चाँदी है, वह यह मानकर चल रही थी कि दोनों ही उसका समर्थन माँगेंगे।

पहले भी २००४ में ऐसी त्रिशंकु विधानसभा बनी थी और जे.डी.एस. ने कांग्रेस व भाजपा के साथ मिलकर सरकार बनाई। उस समय सिद्धरमैया, जो अब तक कांग्रेस के मुख्यमंत्री थे, जे.डी.एस. की ओर से उपमुख्यमंत्री नियुक्त हुए थे। देवगौड़ा और कुमारस्वामी से अनबन हो जाने पर सिद्धरमैया हटा दिए गए और वे कांग्रेस में चले गए। इस समय उसके विवेचन की जरूरत नहीं है। देवगौड़ा कब क्या रुख अपनाएँगे, कहा नहीं जा सकता। अब स्थिति यह पैदा हुई कि कांग्रेस ने बिना शर्त जे.डी.एस. के कुमारस्वामी को मुख्यमंत्री बनाना स्वीकार कर लिया, ताकि सबसे बड़ी पार्टी होने के नाते भाजपा किसी भी तरह सरकार न बना सके। भाजपा और कांग्रेस-जे.डी.एस. गठबंधन ने राज्यपाल के पास अपने-अपने दावे पेश किए; भाजपा का दावा सबसे बड़ी पार्टी होने और कांग्रेस-जेडीएस संगठन ने विजयी सदस्यों की संख्या भाजपा से ज्यादा होने के आधार पर। कांग्रेस ने सोचा कि अपनी नाक भले कटे, कोई बात नहीं, पर दूसरे का अपशकुन तो हो। अपने मुख्यमंत्री सिद्धरमैया को बलि का बकरा बना दिया। राज्यपाल ने भाजपा के दावे को मानकर उसके नेता येदुरप्पा को सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किया। कांग्रेस तथा जनता दल (सेकुलर) के मुख्यमंत्री के प्रत्याशी एच.डी. कुमारस्वामी तथा कांग्रेस ने शीर्ष न्यायालय का दरवाजा खटखटाया।

वैसे न्यायमूर्ति सरकारिया कमीशन, मुंशी कमीशन, जो केंद्र व राज्यों के संबंधों के विषय में नियुक्त हुए थे, उन्होंने कहा था कि सबसे बड़े दल के रूप में उभरनेवाले को सरकार बनाने का पहला मौका मिलना चाहिए। राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त राज्यपालों की समिति की भी यही राय थी। अधिकतर संविधान विज्ञों की यही राय रही है। वाजपेई सरकार के समय न्यायमूर्ति वेंकटचलैया की अध्यक्षता में संविधान पुनरावलोकन समिति बनाई थी, उसका भी यही सुझाव था। अगर चुनाव के पहले गठबंधन हो जाता है और उसकी संख्या अधिक है तो उसे बुलाया जाना चाहिए। चुनाव के बाद बने गठबंधन को तभी बुलाया जाना चाहिए, यदि सबसे अधिक सदस्यों वाली पार्टी विधानसभा में विश्वास प्राप्त नहीं कर सके या किन्हीं कारणों से सरकार बनाने के आमंत्रण को नकार दे। लेकिन पिछले दिनों गोवा के उदाहरण को देखते हुए जब कांग्रेस सबसे बड़ी पार्टी थी, किंतु भाजपा ने गठबंधन कर सरकार बनाने का अपना दावा पेश किया और राज्यपाल ने स्वीकार कर लिया। कांग्रेस ने तब तक अपना दावा पेश नहीं किया था, न सूचित किया था कि उसके सदस्यों की संख्या क्या है। शीर्ष न्यायालय ने गोवा के राज्यपाल के निर्णय को, जो उन्होंने अपने विवेक से लिया, उचित करार दिया था। गोवा में जो उस समय स्थिति पैदा हुई थी, शीर्ष न्यायालय का फैसला केवल उसी के संदर्भ में था अथवा उसका प्रभाव आगे भी पड़ सकती है और यह नया दृष्टांत बन सकता है, यह तो शीर्ष न्यायालय ही तय कर सकता है। इसके अतिरिक्त बिहार के राज्यपाल बूटा सिंह ने एन.डी.ए. की सरकार न बन सके, विधानसभा भंग कर दी थी, उसके विरुद्ध शीर्ष न्यायालय ने अपना फैसला दिया था, हालाँकि विधानसभा पुनर्जीवित नहीं की गई थी। शीर्ष न्यायालय शायद अब इस संबंध में दिए गए अपने सभी निर्णयों पर पुन: विचार करे, ताकि त्रिशंकु विधानसभा बनने की स्थिति में राज्यपाल अपने विवेक का प्रयोग किस प्रकार करें, यह स्पष्ट हो सके।

अंतत: न्यायालय ने विधानसभा में बहुमत सिद्ध करने के लिए दिए गए समय में कटौती कर दी। यदुरप्पा ने समयपूर्व पद से स्तीफा दे दिया तो राज्यपाल ने कांग्रेस-जे.डी.एस. को पंद्रह दिन में बहुमत सिद्ध करने को कहा है। राज्यपाल के विवेक में हस्तक्षेप या निर्णय को निरस्त करने का प्रश्न तभी उठ सकता है, यदि कोई बदनीयती अथवा कानून के उल्लंघन का प्रथम दृष्टया दिखाई दे। यदि जनता का मत भारतीय जनता पार्टी को १०४ सीटें जीतने पर भी नहीं माना जाए, तो यह कहना भी सही होगा कि जनता का मैंडेट कांग्रेस को ६७ सीटों पर विजयी होने के कारण नहीं कहा जा सकता है। मजे की बात यह है कि कांग्रेस चुनाव के दौरान जे.डी.एस. को बी.जे.पी. की बी टीम कहकर आलोचना करती थी। जब कांग्रेस को अपने बहुमत की आशा टूट गई तो उसे एक ही रास्ता सूझा कि वह देवगौड़ा की जे.डी.एस. के प्रति आत्मसमर्पण कर दे। उसे खुली छूट है, क्योंकि कांग्रेस का एकमात्र यही उद्देश्य रह गया

कि भाजपा को किसी तरह सत्ता में न आने देना।

कांग्रेस को लिंगायत विवाद उठाने पर भी कुछ खास हाथ नहीं आया। हिंदी और उत्तर भारत तथा दक्षिण भारत के प्रश्न उठाकर भी कांग्रेस जैसी ऐतिहासिक पार्टी ने दूरदर्शिता का परिचय नहीं दिया। त्रिशंकु विधान सभा में जो भी सरकार बनाने की चेष्टा करेगा, उसको न केवल प्रारंभ में जनता का विश्वास प्राप्त करना होगा बल्कि आगे भी राज्यपाल और बजट पेश करने के बाद बहुमत साबित करना होगा। विपक्षी एकता की बात कि २०१९ के आम चुनाव में भाजपा को टक्कर दे सके, बड़ी अनिश्चितता की स्थिति में है, क्योंकि विपक्षी दलों के नेताओं की सबकी अपनी प्रधानमंत्री बनने की आकांक्षाएँ हैं। चाहे कर्नाटक चुनाव में नरेंद्र मोदी की लहर न भी रही हो, राजनीति के पर्यवेक्षक और टिप्पणीकार यह मानते हैं कि नरेंद्र मोदी देश में लोकप्रियता में सबसे आगे हैं, और उन्हें आम जनता का विश्वास प्राप्त है। इस समय यह अवश्य है कि कर्नाटक में राज्यपाल की भूमिका विवाद का विषय बन गई है। कुछ मुद्दे फिर उठे हैं, जिनपर शीर्ष न्यायालय को स्पष्टता प्रदान करनी होगी।

भारत और वैश्विक परिदृश्य

भारत के संदर्भ में अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य को समय-समय पर संक्षेप में देखना आवश्यक है। भारत अपनी भौगोलिक स्थिति और एक उभरती आर्थिक व राजनीतिक शक्ति के कारण कुछ के लिए कुतूहल तथा कुछ के लिए ईर्ष्या का विषय रहा है। भारत की अंतरराष्ट्रीय कूटनीति को संवेदनशीलता और सतर्कता का एहसास इससे होता है कि भारत सब देशों से, विशेषतया पड़ोसी देशों से मित्रता एवं पारस्परिक सहयोग चाहता है, ताकि उसके विकास की गति धीमी न पड़े। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की विदेश यात्राओं का मंतव्य यही मालूम देता है, यद्यपि विरोधी नेता कभी-कभी उनका उपहास भी करते हैं, हँसी उड़ाते हैं। सरकार के लिए एक कठिनाई यह भी होती है कि अंतरराष्ट्रीय राजनीतिक संबंधों का पूरा खुलासा भी मुश्किल होता है कि क्या बातें आपस में हुईं, क्या मुद्दे उठाए गए, उनमें कुछ गोपनीयता भी आवश्यक हो जाती है तथा दूसरी पार्टी के मिजाज को भी देखना जरूरी हो जाता है। आज अमेरिका आर्थिक और सैनिक शक्ति की दृष्टि से सबसे अधिक बलशाली है, किंतु अमेरिका का राष्ट्रपति क्या सोचता है और आगे क्या करेगा, इसके कारण बड़ी चिंता रहती है। जिस प्रकार इस छोटे समय में ही उन्होंने अपने उच्च अधिकारियों की तब्दीलियाँ की हैं, उससे भी लोग समझ नहीं पा रहे हैं कि आखिर सबसे बलशाली राष्ट्र की मंशा क्या है? उसकी नीतियाँ क्या हैं? उधर चुनाव के पहले और चुनाव के समय रूस से उनके सहयोगियों, उनके दामाद और पुत्री के किस प्रकार के संबंध रहे, इसकी जाँच अलग-अलग स्तर पर हो रही है।

राष्ट्रपति ट्रंप के विरुद्ध व्यक्तिगत रूप से तरह-तरह के आरोप हैं। उनकी विश्वसनीयता, कार्यकुशलता और कार्यप्रणाली के प्रति भी गंभीर संदेह प्रकट किए गए हैं। इस समय अमेरिका में राजनीति बहुत विभाजित है और तरह-तरह के भ्रम बने हुए हैं। अधिक विवरण में जाना संभव नहीं है। कहने का तात्पर्य यह है कि अमेरिकी राष्ट्रपति स्वयं तरह-तरह के व्यक्तिगत और राजनीतिक विवादों में बुरी तरह ग्रस्त हैं। चुनाव के समय उन्होंने तरह-तरह की घोषणाएँ की थीं, लोग समझते थे कि ये चुनावी माहौल की बातें हैं। राष्ट्रपति ट्रंप ने उनमें से कुछ पर कार्य शुरू कर दिया है, जिससे वातावरण और भी अनिश्चित होता जा रहा है, जैसे एच.बी.वन. वीजा में परिवर्तन आदि। यही नहीं अमेरिका और चीन के बीच एक प्रकार टैरिफ या ड्यूटी लगाने की होड़ चल रही है। अमेरिका जितना टैरिफ जितनी वस्तुओं पर लगाएगा, उसका उत्तर चीन उसी प्रकार देता है। जिस वैश्वीकरण की बात हो रही थी, वह सिकुड़ता जा रहा है। माल आयात पर रोक, कुशल कार्यकर्ताओं के काम करने की सुविधा पर रोक। पिछली सदी के तीसरे दशक में जैसा वातावरण ग्रेट डिप्रेशन के समय बना था, विश्व उस तरफ बढ़ता हुआ दीख रहा है। इसे अर्थशास्त्री संरक्षण या प्रोटेक्शनिज्म कहते हैं, जो खुले बाजार के विरुद्ध है। खुले बाजार और वैश्वीकरण का विरोध भी मुखर हो रहा है। यूरोप के कई देशों में चुनाव इसी आधार पर लड़े जा रहे हैं।

इसी समय एक और हादसा हो गया, जिससे ब्रिटेन और रूस में तनातनी हो गई। ब्रिटेन की प्रधामंत्री थेरेसा मे का आरोप कि रासायनिक जहरीले पदार्थ द्वारा सेरमी स्किरपाल एक डबल एजेंट, जो पहले रूसी नागरिक था, ने ब्रिटेन में शरण ली थी, उसकी मृत्यु हो गई। रूस की सरकार उसके लिए जिम्मेदार है। अब चिकित्सा के बाद उसकी लड़की यूलिना बच गई। थेरेसा मे के अनुसार यह रासायनिक जहर रूस ने अपने एक शोध केंद्र में विकसित किया। दरवाजे के हैंडल पर लगाने से विष दरवाजा खोलने पर शरीर में फैल गया। रूस ने इनकार किया कि न इस तरह का पदार्थ उसने ईजाद किया है और न ही उसका सेरमी स्किरपाल की मृत्यु से कोई संबंध है। जाँच की प्रक्रिया के बारे में दो बड़े देशों में कोई समझौता नहीं हो सका। ब्रिटेन ने रूस के ६० राजनयिकों को ब्रिटेन से जाने के आदेश दिए, रूस ने भी ब्रिटेन के उतने ही अधिकारियों को रूस छोड़ने के आदेश दिए। दबाव का यह खेल चलता रहा। यूरोपीय यूनियन के कुछ अन्य देशों ने भी ब्रिटेन से सहमति प्रकट कर राजनायिकों को रूस वापस जाने के आदेश दे दिए। अमेरिका ने भी रूस का साथ दिया। अब यह मामला कुछ ठंडा पड़ गया है, पर कटुता तो पैदा हो ही गई। ऐसी स्थिति में भारत रूस से और यूरोपियन यूनियन के देशों तथा ब्रिटेन से अच्छे संबंध रखना चाहता है, अतः उसे फूँक-फूँककर कदम रखना पड़ता है। वैसे ब्रिटेन ने यूरोपीय यूनियन छोड़ने का निर्णय पहले ही कर लिया था और उसके अलग संभावित नतीजे हैं।

एक मुद्दा है, जिसके कारण अमेरिका ब्रिटेन तथा अन्य यूरोपीय यूनियन के सदस्यों से अलग-थलग हो गया है। राष्ट्रपति ट्रंप का चुनाव के समय से यह कहना था कि ओबामा ने ईरान से जो न्यूक्लियर समझौता किया था, उसमें गलतियाँ हैं और वे उसे नकार देंगे। यूरोप के कई देशों के प्रधानमंत्रियों ने राष्ट्रपति ट्रंप को समझाने की बहुत कोशिश की, पर वे नहीं माने। आखिर वे ईरान से हुए करार से मुकर गए। ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी आदि ईरान से हुए समझौते के साथ हैं। ईरान के राष्ट्रपति ने कहा है कि समझौते को नकारना अमेरिका के लिए महँगा पड़ेगा। मजे की बात यह है कि इस मामले में रूस, ब्रिटेन यूरोपीय यूनियन के देशों

के साथ है। अमेरिका का यह कहना कि जो ईरान के साथ व्यापारिक संबंध रखेगा, उस पर वह प्रतिबंध लगाएगा, यह अन्य देशों को स्वीकार नहीं है।

सद्दाम के पतन के बाद से इराक में राजनीतिक स्थिरता नहीं आई है। इसलामिक स्टेट की समाप्ति हो चुकी है। इस विषय में रूस, अमेरिका पश्चिमी देशों के साथ थे। इसलामिक स्टेट ने जो जहर के बीज बोए, वे अपना असर दिखा रहे हैं। इडोनेशिया में तीन चर्चों पर आत्मघाती हमले में ग्यारह से अधिक लोग मारे गए। अफगानिस्तान में आतंकवादियों के हमले में भी नौ लोग मारे गए। लिखते समय समाचार देखा कि पेरिस में अल्लाहो अकबर का नारा लगाते हुए, चाकू लिये हमलावर आतंकवादी समेत दो की मृत्यु हो गई और चार घायल हो गए। अब कोई भी देश सुरक्षित नहीं है। अफगानिस्तान और बगदाद में गाहे-बगाहे हादसे होते रहते हैं। अतिवादियों के हमले रोज का काम हो गया है। पाकिस्तान भी अछूता नहीं रहा, हालाँकि वहाँ की सैन्य खुफिया संस्था जम्मू-कश्मीर में आतंकवादियों को निरंतर भेज रही है और स्थानीय युवकों को गुमराह और उनको शह देने का काम कर रही है। अपदस्य पूर्व प्रधानमंत्री शरीफ ने यह स्वीकार किया है। इसलामिक स्टेट के गुर्गे अन्य देशों में भी सक्रिय हैं। उसके द्वारा प्रशिक्षित आतंकवादी जगह-जगह वारदात करते हैं, खौफ फैलाते हैं और युवकों को अपने में शामिल करने की कोशिश करते हैं। भारत में भी यह हो रहा है। उसके सुषुप्त सेल हैं, जो समय-समय पर किसी के इशारे पर जाग्रत् हो जाते हैं। भारत में केरल का 'पापुलर फ्रंट ऑफ इंडिया' इन सबका सरगना है, यद्यपि उसे अभी तक गैर-कानूनी घोषित नहीं किया है। इसलामिक स्टेट ऑफ सीरिया इराक के अतिरिक्त नाइजेरिया में बोले हराम तथा अलकायदा, अलशंवाव सोमालिया में सक्रिय हैं। इसलामिक स्टेट का तथाकथित राष्ट्रपति और स्वयंभू खलीफा का पता नहीं चल सका है। उसके नाम पर उसके अनुयायी स्थान-स्थान पर वज्रपात करते रहेंगे, ऐसा जनून उसने फैलाया है। सीरिया के मामले में रूस, तुर्की आदि आज राष्ट्रपति असद के पक्ष में हैं, उनका समर्थन करते हैं। अमेरिका, फ्रांस आदि उसको उखाड़ फेंकना चाहते हैं। दोनों पक्ष जिन्हें दुश्मन समझते हैं, उनके स्थानों पर गोलाबारी करते हैं, इससे नागरिक तबाह हो रहे हैं।

कुछ दिन पहले तक ऐसा लग रहा था कि अमेरिका और उत्तरी कोरिया में आणविक युद्ध न छिड़ जाए। माहौल इस तरह का बन रहा था, जब क्यूबा में मिसाइल लगाने के मामले में क्रूशेव और केनेडी के समय रूस और अमेरिका आमने-सामने थे। किसी प्रकार सद्बुद्धि आई। क्रूशेव ने अपने जहाज वापस बुला लिये और मिसाइलों के लिए जो ढाँचा क्यूबा में बनाया गया था, उसको समाप्त कर दिया गया। अमेरिका ने क्यूबा पर आक्रमण करने का इरादा छोड़ दिया। विश्व आणविक युद्ध की भयानकता से बच गया। उत्तर कोरिया नए अणु मिसाइलों का परीक्षण कर रहा था और अमरीका तक मारक मिसाइलों से हमले की धमकी दे रहा था। पड़ोसी जापान और दक्षिण कोरिया दहशत में थे। उत्तर कोरिया के विरुद्ध अमरीका नए-नए प्रतिबंध लगा रहा था। इस तनातनी का अंत क्या होगा, कहा नहीं जा सकता था। वातावरण को ठंडा करने में चीन ने भी कुछ भूमिका अदा की। सिओल (दक्षिण कोरिया) में जो ओलंपिक हो रहे थे, उसमें राष्ट्रपति जॉन की बहन आई तथा दक्षिण कोरिया के राष्ट्रपति से मिली, और बर्फ पिघलने लगी। परदे के पीछे भी कुछ संपर्क तथा बातचीत अमरीका से हो रही थी। उत्तर कोरिया और दक्षिण कोरिया के राष्ट्रपति सीमा पर मिले एवं प्रतीक रूप में उन्होंने उत्तर कोरिया के क्षेत्र में पैर रखे तथा उस समय दक्षिण कोरिया के राष्ट्रपति उनका हाथ थामे हुऐ थे। पाठक जानते हैं कि द्वितीय युद्ध के बाद १२ पैरलल की सीमा का जब जनरल मैकार्थर की सेना ने उल्लंघन किया तो युद्ध और भड़क उठा। उत्तर कोरिया के समर्थन में चीन था और दक्षिण कोरिया के समर्थन में अमेरिका आदि। अभी भी दोनों देशों (दोनों कोरिया) के बीच युद्ध विराम चल रहा है। जनरल थिमैया के नेतृत्व में एक टीम भारत से शांति बनाए रखने के लिए भेजी गई थी। अमरीका और उत्तर कोरिया के बीच लगातार बातचीत आणविक शस्त्रों का विनाश और जो केंद्र वहाँ स्थापित हैं, उन्हें समाप्त किया जाए, ऐसा करने पर अमरीका उत्तर कोरिया की पूर्ण सुरक्षा की गारंटी दे रहा है। अब राष्ट्रपति ट्रंप और राष्ट्रपति जोंग का १२ जून को सिंगापुर में वार्त्तालाप के लिए मिलना निश्चित हो गया है। आशा है कि इस बड़ी समस्या का कोई हल निकलेगा। आणविक निशस्त्रीकरण के बाद उत्तर कोरिया और दक्षिण कोरिया के एकीकरण की संभावना भी हो सकती है। इस समय दक्षिण कोरिया समृद्ध है और तेजी से विकास कर रहा है। उत्तर कोरिया कम्युनिस्ट सरकार के अंतर्गत अविकसित है और जनसाधारण गरीबी के शिकार हैं। भारत के राजनैतिक संबंध दोनों से हैं। विश्व में जो भी राजनैतिक अथवा आर्थिक संकट उठ रहे हैं, उसमें राष्ट्रसंघ तथा उससे संबंधित संस्थाएँ, आई.एन.एफ, विश्व बैंक, विश्व व्यापार ऑरगनाइजेशन उसी प्रकार अप्रभावी साबित हो रहे हैं, जैसा द्वितीय युद्ध के पहले लीग ऑफ नेशंस तथा उससे संबंधित संस्थाएँ हो गई थीं। इसलिए विश्व के देश क्षेत्रीय तथा आपसी संबंध बढ़ाने को तत्पर हैं।

राष्ट्रपति ट्रंप क्या कर बैठे, इससे सब देश चिंतत हैं। ट्रंप के अमेरिकी दूतावास यरूसलम में भेजने के अपने निर्णय के कार्यान्वयन के समय गाजा में पैलेस्टेनियनों ने विरोध किया और उसके कारण ५५ पैलेसटाइनियन मारे गए। अब सारे विश्व में मुसलमान विरोध कर रहे हैं। भारत भी अछूता नहीं है। जम्मू-कश्मीर में तो अलगाववादी पार्टियों ने विरोध शुरू कर दिया है। ट्रंप की आर्थिक और सुरक्षा नीतियों के परिवर्तन से सुदूर पूर्व के देशों में बेचैनी पैदा होती है। जापान भी साउथ चाइना में चीन की नीति से सशंकित है। छोटे-छोटे टापुओं के बारे में विवाद है। फिलीपींस और चीन का विवाद अंतरराष्ट्रीय अदालत में गया, जिसने फिलीपींस के हक में फैसला किया। पर चीन अपने स्थान पर अडिग है। तथाकथित वैश्विक दुनिया में भी 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' ही चरितार्थ है। प्रधानमंत्री मोदी की चीन की यकायक यात्रा और भूटान में चीनी राष्ट्रपति शी जिंयपिंग से अनौपचारिक बातचीत को इसी पृष्ठभूमि में देखना चाहिए। इसे अनौपचारिक शीर्ष बैठक कहा जाता है, वह यकायक नहीं होती है, उसके पीछे काफी तैयारी होती है। चीन और

भारत एशिया की दो बड़ी सैन्य और आर्थिक शाक्तियाँ हैं। जापान भी एक अन्य बड़ा विकसित देश है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने पिछले वर्षों में वहाँ के प्रधानमंत्री से निकटता के संबंध बनाने की कोशिश की है। अब दुनिया एक ध्रुवी नहीं है। अमरीका के अतिरिक्त यूरोपीय यूनियन है, चीन है, रूस है, सबको मिलकर काम करने की आवश्यकता है। बिना एजेंडे के दो दिन के अनौपचारिक वार्त्तालाप में न केवल चीन और भारत के बीच समस्याओं पर बातचीत हुई वरन् दोनों देश मिलकर बहुत सी वैश्विक समस्याओं के समाधान के लिए सहयोग कर सकते हैं। दोनों मिलकर अपनी-अपनी आर्थिक व्यवस्थाओं को और चुस्त कर सकते हैं। डोकलाम में दो महीने के आमने-सामने वाली स्थिति से बचा जा सकता है। सीमा विवाद पर अलग से बातचीत चलती रह सकती है। इस प्रकार मिलने-जुलने से एक-दूसरे को समझने में सहूलियत होती है, क्या कठिनाइयाँ हैं, उनका एक-दूसरे को एहसास हो सकता है। इसलिए चीन और भारत में ही इस प्रयास की सराहना नहीं हुई है और लोग भी चाहते हैं कि इस प्रकार के आपसी अनौपचारिक संबंध गति पकड़ते रहें। 'वूहान' जहाँ यह औपचारिक बैठक हुई, वह एक ऐतिहासिक स्थान है, जहाँ १९११ में यकायक क्रांति प्रारंभ हुई, जिसे सनयात सेन का नेतृत्व प्राप्त हो सका।

चीन के बाद इसी प्रकार की अनौपचारिक बैठक रूस में राष्ट्रपति प्यूटिन से भी सोची में होगी। सोची में विंटर ओलंपिक होते हैं। वह सुंदर स्थान है, जहाँ स्टालिन तथा अन्य सोवियत नेता आराम के लिए जाया करते थे। सोवियत यूनियन के विघटन के बाद रूस एक महाशक्ति के रूप में फिर उभरा है। भारत के सैन्य आयुधों का रूस मुख्य स्रोत रहा है। सुरक्षा परिषद् में जम्मू-कश्मीर के मसले पर उसने सदैव भारत का पक्ष लिया। अमरीका से भारत की बढ़ती निकटता के कारण कुछ ऐसे आसार नजर आए हैं कि शायद रूस अपनी नीति बदल रहा है। पाकिस्तान और रूस की सेनाओं का संयुक्त सैन्य अभ्यास तिब्बत में हुआ। रूस ने इस आशंका को बेबुनियाद बताया कि चीन की कम्युनिस्ट क्रांति की सफलता और उसके बाद विकास में बहुत बड़ी भूमिका रही, पर कुछ गलतफैमियाँ भी हैं। उनका असर भारत पर भी पड़ सकता है। यही बात रूस और जापान के संबंधों के विषय में भी है। सोची में मोदी और प्यूटिन की अनौपचारिक बैठक लाभदायक होगी। एक-दूसरे को समझने में और अगर कोई भ्रम पैदा हुआ है तो उसको दूर करने में। इसके बाद इंडोनेशिया, जो सबसे अधिक मुसलिम आबादी वाला देश है और जो आतंकवाद का शिकार है, वहाँ भी मोदी महीने के अंत में जानेवाले हैं। प्रधानमंत्री की इंडोनेशिया की यात्रा समुद्री भारतीय जहाज द्वारा होगी, सवांग के बंदरगाह में इसकी व्यवस्था हो रही है। प्रथम प्रधानमंत्री की यात्रा भी समुद्री जहाज द्वारा ही हुई थी। मोदी ने पश्चिम के मुसलिम देशों से संबंध बढ़ाने और मजबूत बनाने की कोशिश की है। अफगानिस्तान के पुनर्निर्माण में तो भारत अग्रसर है ही, यद्यपि पाकिस्तान तरह-तरह के रोड़े अटकाता है। पड़ोस के देशों में श्रीलंका से संबंध सुधारने की कोशिश हुई है। तमिल समस्या का समाधान बाकी है। राष्ट्रपति सिरीसेन की सरकार से बहुत आशा है। प्रधानमंत्री विक्रमसिंह के मंत्रिमंडल में फूट पड़ गई थी, पर वह अब संसद् के परीक्षण में विजयी रहे हैं और उनसे उम्मीद है कि दो दलों की मिली-जुली सरकार एकजुट होकर प्रभावी ढंग से कार्य करेगी। म्याँमार (बर्मा) और बँगलादेश सरकारें भारत से अच्छे संबंध बनाने का प्रयास कर रही हैं। बहुत से करार हुए। इस समय रोहिंग्या मुसलमान शरणार्थियों की समस्या पैदा हो गई है। म्याँमार से उन्होंने बँगलादेश में शरण ली है। भारत में भी आए हैं। विदेश मंत्री सुषमा स्वराज हाल ही में म्याँमार गईं और वहाँ के राष्ट्रपति, विदेशमंत्री तथा अन्य अधिकारियों से मिलीं और भारत के सहयोग व सहायता से रोहिग्यों के पुनर्स्थापन के लिए आश्वास्त किया। कोशिश है कि म्याँमार और बँगलादेश की समस्या सभी के हित में हल हो सके। एक उपलब्धि है प्रधानमंत्री मोदी की तीसरी नेपाल की यात्रा। प्रधानमंत्री मोदी की यात्रा जनकपुर से शरू हुई। इस यात्रा में नेपाल-भारत के सांस्कृतिक संबंधों पर जोर रहा। नेपाल के बाद सरकिट और अन्य तीर्थस्थानों को जोड़ने का मंतव्य भी था। पिछले दिनों भारत-नेपाल संबंधों में कुछ खटास आ गई थी। खासकर जब कुछ दिनों तराई के निवासियों ने आवश्यक सामान ले जानेवाले ट्रकों पर टोक लगाई, और उनको काबू लाना में भारत के लिए कठिन था। नेपाल में समझा गया कि यह सब भारत की मदद से हो रहा है। प्रधानमंत्री ओली का रुझान चीन की ओर बताया गया, जब वे पहले नेपाल के प्रधानमंत्री बने थे। उस समय प्रधानमंत्री ओली की पहली विदेश यात्रा चीन की थी। नए संविधान के अंतर्गत चुनाव संसद्, प्रांतीय एसेंबलियों तथा स्थानीय निकाया के बाद श्री ओली पुन: नेपाल के प्रधानमंत्री बने। उनकी स्थिति काफी दृढ़ हो गई थी। विदेश मंत्री सुषमा स्वराज काठमांडू उनको बधाई देने और भारत आने का निमंत्रण देने गईं। उन्होंने निमंत्रण स्वीकार किया। प्रधानमंत्री ओली भारत आए और बहुत से नए समझौते स्वीकार किए। रुकी हुई परियोजनाओं को शीघ्र पूरा करना तय हुआ। नेपाल और भारत के बीच कनेकटिविटी बढ़ाने की योजनाओं पर विशेष जोर रहा रेल, हवाई जहाज और सड़कों द्वारा। सौहार्द के वातावरण में बातचीत हुई और दोनों देशों ने श्री ओली की इस यात्रा की सफलता की सराहना की। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की यह तीसरी यात्रा थी। इसको काफी पुराने सांस्कृतिक संबंधों के रूप में प्रस्तुत किया। नेपाली प्रधानमंत्री ओली ने जनकपुर में प्रधानमंत्री मोदी की आवभगत की। एक बिजली परियोजना का संयुक्त उद्घाटन किया गया। मोदी काठमांडू भी गए। नेपाल के राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति से भी मिलने गए। उन्होंने वहाँ सरकार और जनता को आश्वस्त किया कि बिना किसी प्रकार के हस्तक्षेप के भारत नेपाल के विकास और समृद्धि के प्रयासों में सदैव भागीदार रहेगा। प्रधानमंत्री ओली ने भी कहा कि नेपाल की भूमि से भारत विरोधी किसी प्रकार की कररवाई पर कड़ा प्रतिबंध रहेगा। प्रधानमंत्री मोदी की नेपाल यात्रा नेपाल-भारत के पुराने संबंध पुन: पटरी पर आ सकेंगे। विदेश से संबंध का हर एक मसला विस्तार का है, किंतु यहाँ संक्षेप में अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य में भारत की भूमिका के दिग्दर्शन का प्रयास किया गया है।

आवश्यकतानुसार अलग मुद्दों पर पुनः चर्चा संभव होगी।

महात्मा गांधी १५०वीं जयंती आयोजन

महात्मा गांधी की १५०वीं जयंती के आयोजन की तैयारियां प्रारंभ हो गई हैं। प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में संस्कृति मंत्रालय द्वारा २५० सदस्यों की एक समिति का गठन किया गया है। सदस्यों में सभी राज्यों के मुख्यमंत्री, कुछ अन्य हस्तियाँ, राजनैतिक एवं प्रतिनिधि, गांधी विचारधारा के विशेषज्ञ आदि हैं। श्रीमती सोनिया गांधी और कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी सदस्य हैं। शीर्ष न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश भी सदस्य हैं। २ मई को समिति की पहली बैठक नई दिल्ली में हुई। कर्नाटक के चुनाव के कारण राहुल और सोनिया तथा कुछ कांग्रेस राज्य सरकारों के मुख्यमंत्री इसमें नहीं सम्मिलित हो सके। पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी सम्मिलित हुईं। सदस्यों की राय ली गई कि किस प्रकार के कार्यक्रम किए जाएँ। लोकसभा के पूर्व सेक्रेटरी जनरल डॉ. सुभाष कश्यप ने सुझाव दिया कि एक सुंदर सुविचारित संस्मरणात्मक ग्रंथ इस अवसर पर प्रकाशित होना चाहिए। बैठक के पूरे विवरण की जानकारी नहीं है कि क्या सुझाव आए। प्रधानमंत्री ने कहा कि गांधी जयंती को एक वैश्विक रूप दिया जाना चाहिए। यह उचित ही है। गांधीजी की वैश्विक मान्यता है। यू.एन.ओ. ने २ अक्तूबर को 'अहिंसा दिवस' की संज्ञा दी है। स्वच्छ भारत का जो अभियान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने छेड़ा है, उसको और अधिक गहन एवं सार्थक बनाया जाना चाहिए। गांधीजी की शती बड़ी धूमधाम से मनाई गई थी, हालाँकि १२५वें जन्मदिवस के आयोजन उतने सफल नहीं रहे। प्रतिवर्ष गांधीजी पर अन्य देशों में, खासकर अमरीका, इंग्लैंड, ऑस्ट्रेलिया आदि से अच्छी पुस्तकें प्रकाशित होकर आ रही हैं। इस स्तंभ में उनके विषय में चर्चा भी होती रहती है। कभी-कभार एक-दो अच्छी पुस्तकें भारत में प्रकाशित होती हैं, जो गांधीजी पर एक नई रोशनी डालती हैं। समग्र गांधी साहित्य के १०० वॉल्यूम भारत सरकार ने प्रकाशित किए हैं, जिन्हें डिजिटिलाइज भी किया गया है। गांधीजी के जीवन का कोई पक्ष अछूता नहीं रहा है। अलग-अलग विषयों और समस्याओं पर गांधीजी के विचार पुस्तकाकार उपलब्ध हैं। आवश्यकता इस बात की है कि आज के भोगवादी युग में जब हर जगह अशांति है, वैश्विक और सामाजिक स्तरों पर, उनके संदेश जनसाधारण तक कैसे पहुँचें। गांधीजी ने तीन पुस्तकें लिखीं—'हिंद स्वराज', 'सत्य के प्रयोग' (आत्मकथा) एवं दक्षिण अफ्रीका में 'सत्याग्रह'। लेकिन लोग उनसे हर प्रकार के प्रश्न करते, अपनी दिक्कतें बताते, पत्र लिखते और गांधीजी अपनी पत्रिकाओं में उनका समाधान करते। उनको चिट्ठी-पत्री विशाल हैं। गांधीजी से हुए वार्त्तालाप भी बहुत से व्यक्तियों ने प्रस्तुत किए हैं। वे सब अब इन पुस्तकों द्वारा उपलब्ध हैं।

प्रसिद्ध फ्रैंक मोरेस ने लिखा है कि गांधीजी ने उन्हें एक बार मिलने के लिए तीन मिनट दिए, और उन्हें संशय था कि इतने अल्प समय में क्या बातचीत होगी। वे लिखते हैं कि इस मनोयोग से गांधीजी ने उनके प्रश्न सुने और उत्तर दिए, मानो उस समय गांधीजी की पूरी दुनिया उन्हीं पर केंद्रित थी। अपने साक्षात्कार से वे पूरी तरह संतुष्ट होकर निकले। आज जब विकास और पर्यावरण की समस्याएँ उग्र होती जा रही हैं, गांधीजी के विचार इन विषयों पर विचारणीय हैं। दो मई की बैठक में निश्चय हुआ कि उसको मूर्तरूप देने के लिए एक छोटी उपसमिति प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में बनाई जाए, जो पूरी परिकल्पना को रूपायित करे। इस उपसमिति की सेक्रेटेरियट कैसी सूझ-बूझ की होगी, उसी पर बहुत कुछ निर्भर करेगा। परिकल्पना और कार्यान्वयन दोनों वैचारिक धरातल पर समृद्ध होने चाहिए, तभी इस प्रकार का आयोजन सफल एवं प्रभावी होगा।

एक समाचार-पत्र से पता लगा है कि सार्वजनिक पुस्तकालयों के रख-रखाव और पुनरोद्धार के लिए संस्कृति मंत्रालय ने ४० करोड़ का प्रावधान किया है। यह स्वागत योग्य है किंतु देश की आवश्यकताओं को देखते हुए अपर्याप्त है। आशा है, यह आगे ध्यान में रखा जाएगा। देश में सार्वजनिक पुस्तकालयों की बहुत दुर्दशा है। उनका पुनरुत्थान और आधुनीकरण बहुत आवश्यक है।

सार्वजनिक पुस्तकालयों के लिए प्रावधान

उन्नीसवीं शती के प्रारंभ और २०वीं शती के पाँच दशकों में कुछ जगह प्रबुद्ध व्यक्तियों ने अपने कुछ सहयोगियों के साथ पुस्तकालयों की स्थापना की, ताकि लोगों में एक सामाजिक जागृति उत्पन्न हो। कुछ समृद्ध व्यक्तियों, जमींदारों, राजघरानों ने भी अपने यहाँ पुस्तकालय बनाने में रुचि ली, यद्यपि उनका उपयोग सीमित था। जम्मू में डॉ. करन सिंह का पैतृक पुस्तकालय दर्शनीय है, उसमें निरंतर वृद्धि हो रही है। देश में जगह-जगह कुछ व्यक्तियों के निजी पुस्तकालय भी सार्वजनिक हो गए हैं। आगे आनेवाली पीढ़ियों की अपनी रुचि और सामर्थ्य पर उनका यह रख-रखाव निर्भर था, पर अब वे देश की धरोहर हैं और इनकी देखभाल जरूरी है, अब ये नागरिकों के लाभ के लिए उपलब्ध हैं। पुस्तकालयों की स्थापना भारतीय पुनर्जागरण का ही एक अंग था, जैसे कि पत्रिकाओं का प्रकाशन। रामकृष्ण ऐंड संस पुस्तकों की एक बहुत प्रसिद्ध दुकान दिल्ली के कनाट प्लेस (अब राजीव चौक) में थी। देश विभाजन के बाद वह लाहौर से दिल्ली में स्थानांतरित हुई थी। लाहौर में भी उसकी ख्याति थी। १९८०-८२ के अंत में संचालक की मृत्यु के बाद वह बंद हो गई। पुस्तक खरीदने हम भी वहाँ जाते थे, जब कभी दिल्ली आना होता था तो वहाँ आना-जाना अकसर होता ही था। उनसे पता चला कि डॉ. श्री कृष्ण सिन्हा, जो बिहार के तत्कालीन मुख्यमंत्री थे, बड़े पुस्तक-प्रेमी हैं और दिल्ली में अपना काम-काज समाप्त कर रात को आठ बजे के बाद वे आते और पुस्तकों का चयन करते। एक बार हमें भी यह देखने का अवसर मिला। अब इस प्रकार के कितने मुख्यमंत्री या मंत्री हैं, हम कह नहीं सकते। सुना है कि उनके परिवार ने उनके संग्रह को एक पब्लिक लाइब्रेरी का रूप दे दिया है। एक बार 'स्टेटसमैन' समाचार-पत्र में पश्चिम बंगाल की पुरानी लाइब्रेरियों के बारे में एक शृंखला प्रकाशित की थी, जिनकी देखभाल की जरूरत है।

हर बड़े शहर या कस्बे में एक-न-एक पुराने पुस्तकालय की जानकारी मिलती है और यह भी पता चलता है कि वह कितनी खस्ता हालत में है। पुस्तकालय विचार-विमर्श, गोष्ठियों, कवि-सम्मेलनों और

किसी व्यक्ति विशेष के विचार सुनने का भी स्थान हुआ करता था। बाल-वृद्ध सभी आते थे। प्रबुद्ध नागरिकता की जननी पुस्तकालय हुआ करते थे। हमें स्मरण है कि राज्यसभा में कई बार सार्वजनिक पुस्तकालयों के बारे में चर्चा हुई, पर कोई विशेष नतीजा नहीं निकला। दिल्ली में ही मारवाड़ी पुस्तकालय के बारे में बहुत कुछ सुना, यद्यपि व्यक्तिगत जानकारी नहीं है। उसकी दशा भी अब अच्छी नहीं बताई जाती है, पुरानी किताबें गायब हैं। प्रबंधन समिति का कहना है कि पैसे की तंगी है। और तो और दिल्ली की हरदयाल लाइब्रेरी को ही ले लीजिए, यह पहले हॉर्डिंग लाइब्रेरी के नाम से जानी जाती थी। दिल्ली राजधानी बनने के बाद वाइसराय लार्ड हार्डिंग पर बम फेंका गया था, जिसमें वे बाल-बाल बच गए। उनके नाम से दिल्ली के कुछ रइसों ने इस पुस्तकालय की स्थापना की। सन् २०१६ इस पुस्तकालय का शती स्थापना दिवस था। पुस्तकालय में दुर्लभ और अमूल्य दस्तावेज एवं पुस्तकें हैं। एक तरफ शती मानने का आयोजन था और साथ-साथ अखबारों में समाचार आ रहे थे वहाँ की अव्यवस्था के विषय में। स्टाफ की भारी कमी, बिजली-पानी के बिलों का भुगतान नहीं किया गया, अतएव उसके कारण दिक्कतें हैं। कर्मचारियों को वेतन नहीं मिल पा रहा आदि-आदि। चिराग तले अँधेरा। पता नहीं, केंद्र या दिल्ली सरकार कौन इसका संचालन करती है! दिल्ली पब्लिक लाइब्रेरी की जब स्थापना हुई थी, पं. नेहरू और मौलाना आजाद को बड़ी आशाएँ थीं। उस पैमाने पर कितनी खरी उतरी है, देखने की बात है। इलाहाबाद की पब्लिक लाइब्रेरी के बारे में हम इस स्तंभ में एक बार चर्चा कर चुके हैं। इसकी गोथिक शैली में बनी इमारत में ही सबसे पहले जब संयुक्त प्रांत में लेजिस्लेटिव कौंसिल की स्थापना हुई, पहली बैठक यहीं हुई थी। संतोष इस बात का है कि कुछ प्रयत्न के बाद तत्कालीन मुख्यमंत्री अखिलेश यादव ने हमारे पत्राचार पर करीब ९० लाख रुपए इमारत के रखरखाव के लिए स्वीकृत किए। तात्पर्य यही है कि सार्वजनिक पुस्तकालयों पर केंद्र सरकार और राज्य सरकारों का ध्यान जाना चाहिए। केंद्र सरकार समय-समय पर सहायता कर सकती है, किंतु मुख्यत: राज्य सरकारों का यह दायित्व है। अमरीका और इंग्लैंड में सार्वजनिक पुस्तकालयों, बड़े शहरों में नहीं, छोटी-छोटी काउंटियों में, जो तहसील के बराबर होंगी, की इतनी सुविधाजनक व्यवस्था है कि देखकर आश्यर्च होता है। कुछ समय के लिए जानेवाले पर्यटक भी उनका पूरा लाभ उठा सकते हैं। हमारे सांसदों और विधानसभा सदस्यों तथा जिला परिषदों को इस विषय में रुचि लेनी चाहिए। उत्तर प्रदेश में नए-नए जिले बन गए हैं। किंतु मुख्यालय में एक अच्छे सार्वजनिक पुस्तकालय का अभाव है। ये पुस्तकालय बालक-बालिकाओं और महिलाओं के मनोरंजन एवं ज्ञानवर्धन में सहायक हो सकते हैं। जिला परिषदों को यह जिम्मेदारी लेनी चाहिए। केंद्र सरकार को एक कमीशन बनाना चाहिए, जो देशव्यापी सार्वजनिक पुस्तकालयों को कैसे उपयोगी और समृद्ध बनाया जा सकता है, इस पर अपनी रिपोर्ट दे। आज की बदलती परिस्थितियों और आवश्यकताओं को देखते हुए सार्वजनिक पुस्तकालयों के आधुनिकीकरण और इन्हें सशक्त बनाने की आवश्यकता है। उनके रख-रखाव और प्रबंधन की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।

भारतीय राष्ट्रीयता एक संकलन

एस. इरफान हबीब की संपादित पुस्तक 'इंडियन नेशनलिज्म' यानी 'भारतीय राष्ट्रीयता' रूपा पब्लिकेशन दिल्ली से प्रकाशित हुई। इसके संपादक डॉ. इरफान हबीब अलीगढ़ मार्किसिस्ट इतिहासकार नहीं हैं, जैसा कुछ लोगों को भ्रम हो गया। हबीब नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ एजूकेशनल प्लानिंग ऐंड एडमिनिस्ट्रेशन में मौलाना आजाद पीठ के अध्यक्ष रहे हैं। वे विज्ञान के इतिहास एवं आधुनिक राजनीतिक इतिहास के विज्ञान के विशेषज्ञ हैं। इतिहास संबंधी उनकी कई पुस्तकें हैं। उन्होंने सरदार भगत सिंह के संबंध में एक पुस्तक लिखी है, जिसकी बहुत प्रशंसा हुई। राष्ट्रीयता के संबंध में आजकल बहुत वाद-विवाद चल रहा है। राष्ट्रीयता का क्या स्वभाव है? क्या यह एक संकुचित अवधारणा है अथवा एक विशद् परिकल्पना? देश के प्रमुख विचारकों, राजनेताओं के आलेखों और भाषणों से उन्होंने उद्धरण संकलित किए हैं कि उनकी दृष्टि में राष्ट्रीयता एवं देशप्रेम क्या है। विचारकों की अपनी अवधारणाओं को उन्होंने बारह भागों में विभक्त किया है। महादेव गोविंद रानाडे से प्रारंभ कर जयप्रकाश नारायण तक के विचारों को संकलित करने की चेष्टा की है। सुरेंद्रनाथ बनर्जी ने अपनी आत्मकथा का नाम 'ए नेशन इन मेकिंग' रखा है। वर्गीकरण को जो संज्ञा डॉ. इरफान हबीब ने दी है, वह उनका अपना दृष्टिकोण है। संपादक ने सब विचारधाराओं को प्रतिनिधित्व देने का प्रयास किया है। लोकमान्य तिलक, लाला लाजपत राय, विपिन चंद्र पाल, श्रीअरविंद, टैगोर, सरोजनी नायडू, प्रफुल्ल चंद्र रे, महात्मा गांधी, पटेल, नेहरू, डॉ. अंबेडकर, राजगोपालाचारी, बोस, भगतसिंह, मानवेंद्र नाथ राय, मो. हसन मदनी, अल्लमा इकबाल, मौलाना आजाद, खान अब्दुल गफार खाँ इत्यादि शामिल हैं। रचनाकार ख्वाजा अहमद अब्बास को भी शामिल किया गया है। सर सय्यद अहमद खाँ और जिन्ना को उन्होंने शामिल नहीं किया है, क्योंकि उनके विचारों में अतिवाद है। सर सय्यद के पहले की सोच और अंग्रेजों के प्रभाव के बाद की सोच में बहुत अंतर है। सावरकर को भी शामिल नहीं किया गया है। दीनदयाल उपाध्याय भी नहीं हैं। संकलन के प्रारंभ में उन्होंने अपनी लंबी टिप्पणी दी है, जो बताती है कि उन्होंने यह संकलन निकालने की क्यों सोची। यह ध्यान देने की जरूरत है कि जिन विचारकों को उद्धृत किया गया है, उन्होंने उस समय की समस्याओं की पृष्ठभूमि में ही अपने विचार प्रस्तुत किए हैं। संपादक के अपने विचार, जो उन्होंने अपने प्रारंभिक वक्तव्य में दिए, उनसे पाठक का कहीं-कहीं मतभेद संभव है। उसमें संपादक का अपना नजरिया या दृष्टिकोण परिलक्षित होता है। राष्ट्रवाद अथवा देशप्रेम की आधारशिला भारत में सहनशीलता, उदारता और विचार वैषम्य को समझने की रही है भारत का राष्ट्रवाद कभी संकीर्ण नहीं रहा। यह परंपरा जारी रहनी चाहिए। भारतीय राष्ट्रीयता विषयक प्रो. इरफान हबीब का संकलन सामयिक और आवश्यक है, जो हमें स्वयं इस विषय के विभिन्न पक्षों और विविधताओं के बारे में सोचने के लिए प्रेरित करता है।

गुरु नानक देव विषयक एक उल्लेखनीय पुस्तक

एक महत्त्वपूर्ण पुस्तक, जिसके रचयिता हैं पाकिस्तान के हारुन खालिद और पुस्तक का नाम है 'वॉकिंग विद नानक' (प्रकाशक

वेस्टलैंड पब्लिकेशंस), लेखक आंथ्रोपोलॉजी के विद्यार्थी रहे हैं। स्वतंत्र पत्रकार एवं पर्यटक लेखक के रूप में २००८ से कार्य कर रहे हैं। पाकिस्तान ऐतिहासिक और सांस्कृतिक धरोहर के विभिन्न पक्षों के बारे में अनेक पत्र-पत्रिकाओं में वे लिखते रहते हैं। यह लेखक की तीसरी पुस्तक है। दो अन्य पुस्तकें हैं—'A White Trail : A journey into the heart of Pakistan's Religious Minorities' और दूसरी है—'In Search of Shiva : A study of Folk Religions Practices in Pakistan.' उनकी जो एकेडमिक पृष्ठभूमि है, उसके अनुकूल है। उनकी तीसरी पुस्तक—'Walking with Nanak' अपने आप में एक अनूठी पुस्तक है। लेखक लिखता है कि गुरु नानकदेव का अधिक समय, जो प्रदेश अब पाकिस्तान कहलाता है, वहाँ व्यतीत हुआ। सिक्ख मत के जन्मदाता के रूप में हारुन खालिद का रुझान गुरु नानकदेव के विषय में जानने का हुआ, जब उन्होंने उनकी बाबर वाणी एक मित्र के मुहँ से सुनी, उनसे वे बहुत प्रभावित हुए। बाबर वाणी की रचना गुरु नानकदेव ने बाबर के आक्रमण और तदुपरांत उसके अत्याचारों के विषय में की थी। वे स्वयं भी कैद में रहे थे। गुरु नानक और सिक्ख पंथ के विषय में लेखक को और जानने की उत्सुकता बढ़ी। उन्होंने 'जन्म साखी' एवं अन्य साहित्य पढ़ा, किंतु संतोष नहीं हुआ। अपने मित्र इकबाल कौसर के साथ उन्होंने पाकिस्तान में गुरु नानक से संबंधित स्थानों और गुरुद्वारों को देखने का निश्चय किया। वे लिखते हैं—जहाँ भी उन गुरुद्वारों को देखने गए, जो गुरु नानक की स्मृति में स्थापित किए गए हैं, तो उन्हें हर जगह गुरु नानक की उपस्थिति का आभास हुआ। वे अपने मानसिक चक्षु से उन्हें देख सके अपने साथी मरदाना के साथ। उनको एहसास हुआ कि उनका अपने मित्र इकबाल कौसर के साथ सफर गुरु नानकदेव की यात्राओं का ही एक प्रकार से विस्तार और विवरण है। पुस्तक में न केवल गुरु नानक देव की यात्राओं और गुरुद्वारों का वर्णन है, वरन् उनका समग्र चित्र बड़े सुंदर शैली में रूपायित करने का प्रयास है। पुस्तक का दूसरा भाग अन्य गुरुओं के विषय में समुचित जानकारी प्रस्तुत करती है और इंगित करती है कि किस प्रकार तथा क्यों गुरु नानकदेव द्वारा स्थापित मत ने खालसा का रूप धारण कर लिया। पाकिस्तान में स्थित गुरुद्वारों के सुंदर रंगीन चित्र हैं। व्यक्तिगत जानकारी और पर्याप्त शोध के उपरांत हारुन खालिद ने अपनी पुस्तक का प्रणयन किया है। पुस्तक लेखन शैली आकर्षक, अत्यंत रोचक और पठनीय है। हमारे एक सिख मित्र ने पूछा कि हारुन खालिद की पुस्तक के विषय में हमें जानकारी है क्या, तो हमें प्रसन्नता हुई कि सिख समुदाय में पुस्तक सराही जा रही है। पुस्तक का अनुवाद हिंदी और गुरुमुखी में होना चाहिए। इस प्रकार के प्रयास स्तुत्य हैं।

भारतीय विद्या मंदिर की पत्रिका 'वैचारिकी' का जनवरी-फरवरी, २०१८ (भाग-३४, अंक-१) प्राप्त हुआ। शोध आधारित कई लेख तो हमेशा की भाँति पठनीय हैं ही, किंतु इस अंक की विशेषता है कि इसमें त्रिदिवसीय अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन (५,६,७ जनवरी, २०१८) की कारवाई की अच्छी जानकारी प्रस्तुत की गई है। सम्मेलन का विषय था—'हिंदी प्रांतों एवं विदेशों में हिंदी भाषा-साहित्य : दशा-दिशा।' इस प्रस्तावित सम्मेलन की चर्चा और सराहना इस स्तंभ में पहले की गई थी। सम्मेलन की परिकल्पना संस्था अध्यक्ष डॉ. विट्ठलदास मूँधड़ा की थी। पश्चिम बंगाल के राज्यपाल श्री केशरीनाथ त्रिपाठी ने आयोजन का उद्घाटन किया। मुख्य विषय के अंग-प्रत्यंग के बारे में विद्वानों ने अपने विचार प्रकट किए और आलेख प्रस्तुत किए। डॉ. मूँधड़ा का संक्षिप्त स्वागत-संबोधन कई व्यावहारिक मुद्दों पर ध्यान आकर्षित करता है, जिनपर विचार देने की आवश्यकता है। 'वैचारिकी' के संपादक डॉ. बाबूलाल शर्मा का संयोजकीय वक्तव्य अत्यंत विद्वत्तापूर्ण है एवं जिन बिंदुओं की ओर उन्होंने ध्यान दिलाया, उनको यदि कार्यान्वयन करने का प्रयास किया जाए तो हिंदी भाषा, साहित्य और राष्ट्रीय एकता को बल मिलेगा। साथ-ही-साथ सब क्षेत्रीय भाषाओं और उनके साहित्य को और गति मिल सकती है। ऐसे सार्थक आयोजन की सफलता पर कोटिश: बधाई।

मध्य प्रदेश राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की द्विमासिक पात्रिका अब मासिक हो गई है। पिछले ३६ वर्षों से 'अक्षरा' साहित्य और भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए प्रयत्नशील है। 'अक्षरा' ऐसी साहित्यिक पत्रिका है, जो न केवल विद्वानों के लिए है, बल्कि सुरुचिपूर्ण साधारण पाठक के लिए भी यह अत्यंत लाभदायक है। इस अंक का संपादकीय कई ऐसे बिंदुओं की विवेचना करता है, जो चिंता के विषय है। अतएव देश की लोकतांत्रिक सफलता के लिए यह हम सबके लिए विचारणीय है। साहित्य की मासिका 'अक्षरा' के संपादक मंडल को बहुत-बहुत बधाई एवं शुभकामनाएँ!

बड़े दु:ख के साथ कहना पड़ता है कि 'साहित्य अमृत' के इस अंक में प्रख्यात कवि और विचारक बालकवि बैरागी, जिनका एक आलेख प्रकाशित कर रहे हैं, अब हमारे बीच में नहीं हैं। 'साहित्य अमृत' से उनका प्रारंभ से ही स्नेह था। प्राय: वे अपनी कविताएँ या आलेख भेजते रहते थे, जो सुधी पाठकों को पसंद आते थे। वे रचनाकार कवि और विचारक के साथ संवेदनशील समाजसेवी और राजनेता भी थे। वे समतामूलक समाज के हामी थे। वे मध्य प्रदेश में कई विभागों के मंत्री भी रहे। पिछले कुछ समय में विकृत प्रवृत्तियाँ राजनीति में आने के कारण उनका राजनीति से मोहभंग हो गया था। वे लोकसभा और राज्यसभा दोनों के सदस्य रहे। जब वे राज्यसभा में सदस्य थे, हम भी राज्यसभा के लिए चुने गए। उस समय उनको और निकट से जानने का अवसर मिला। कविता और साहित्य के क्षेत्र में उनकी कमी सभी को खलती रहेगी। एक कार्यक्रम में भाग लेने के उपरांत अपने घर वे चिर निद्रा में लीन हो गए। उनके लिए उनके निर्मल जीवन का तो यह परमात्मा का प्रसाद ही कहा जाएगा, चाहे उनके परिवार और मित्रों के लिए यह विषाद का कारण रहा हो। अंत समय में न स्वयं को कोई कष्ट और न दूसरों को ही कोई कष्ट दिया। संतप्त परिजनों के लिए हमारी गहरी सहानुभूति और संवेदना है। बालकवि बैरागीजी अपनी रचनाओं के माध्यम से सदैव जीवित रहेंगे। उनकी पुण्य स्मृति को हमारा सादर नमन!

त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

(त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी)

एक कुत्ते की डायरी

● प्रभाकर माचवे

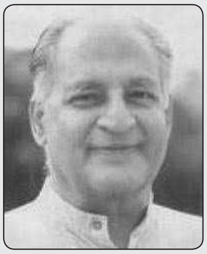

प्रभाकर माचवे का जन्म ग्वालियर में २६ दिसंबर, १९१७ में हुआ। अंग्रेजी साहित्य विषय लेकर एम.ए. किया। मूलतः वे दर्शन के विद्यार्थी थे पर मराठी व हिंदी में समान रूप से लिखते थे—कविता, कहानी, परिहास, आलोचना और भूमिकाएँ भी। छह वर्ष ऑल इंडिया रेडियो में रहे—इलाहाबाद, नागपुर और दिल्ली। गद्य-पद्य में समाभ्यस्त डॉ. प्रभाकर माचवे की मातृभाषा मराठी थी। वे सफल कवि, कथाकार, व्यंग्य-लेखक, चित्रकार और संपादक थे तो सरस कवि, चिंतनशील कहानी-एकांकी लेखक एवं प्रखर समालोचक भी। उनके निबंधों में उनके इन तीनों रूपों का सुंदर समन्वय हुआ है। अज्ञेय द्वारा संपादित 'तार सप्तक' के प्रमुख कवि माचवेजी न केवल हिंदी-जगत् में बल्कि पूरे देश में अपनी बहुज्ञता और सहृदयता के लिए लोकप्रिय थे। लगभग सभी विधाओं में माचवेजी की लेखनी सक्रिय रही। हिंदी साहित्य सम्मेलन के मानक शब्दकोश के अतिरिक्त हिंदी साहित्य की विविध विधाओं में अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा से समृद्ध किया। चर्चित कृतियाँ हैं—'स्वप्न भंग', 'अनुक्षण', 'तेल की पकौड़ियाँ' (कविता-संग्रह), 'परंतु' (उपन्यास), 'खरगोश के सींग' और 'बेरंग' (निबंध-संग्रह)। वर्ष १९९१ में उनका स्वर्गवास हुआ। हम यहाँ उनका एक चर्चित मजेदार निबंध 'एक कुत्ते की डायरी' प्रस्तुत कर रहे हैं।

मेरा नाम 'टाइगर' है, गो शक्ल-सूरत और रंग-रूप में मेरा किसी भी शेर या 'सिंह' से कोई साम्य नहीं है। मैं दानवीर लाला अमुक-अमुक का प्रिय सेवक हूँ; यद्यपि वे मुझे प्रेम से कभी-कभी थपथपाते हुए अपना मित्र और प्रियतम भी कह देते हैं। वैसे मैं किस लायक हूँ? मतलब यह है कि लालाजी का मुझ पर पुत्रवत् प्रेम है। नीचे मैं अपने एक दिन के कार्यक्रम का ब्योरा आपके मनोरंजनार्थ उपस्थित करता हूँ—

६ बजे सबेरे—घर की महरी बहुत बदमाश हो गई है। मेरी पूँछ पर पैर रखकर चली गई। अंधी हो गई क्या? और ऊपर से कहती है—अँधेरा था। किसी दिन काट खाऊँगा। गुर्र-गुर्र…अच्छा-चंगा हड्डीदार सपना देख रहा था और यह महरी आ गई, इसने मेरे सपने के स्वर्ण-संसार पर पानी फेर दिया। विचार-शृंखला टूट गई। बात यह है कि मैं एक शाकाहारी घर में पल रहा हूँ। अत: कभी-कभी मांसाहार का सपना आ जाना पाप नहीं!…यह मेरी अतृप्त वासना है, ऐसा परसों मालिक से मिलने को आए एक बड़े मनोवैज्ञानिकजी कह रहे थे।…फिर सो गया।

७ बजे—कोई कमबख्त आ ही गया। नवागंतुक दिखाई देता है। बहुत भूँका, पर नहीं माना। जरूर परिचित होगा। जाने दो, अपने बाबा का क्या जाता है? डेढ़ सौ वर्षों से ब्रिटिश नौकरशाही ने हमें यही सिखाया है—किसी की सारी, किसी का सर—अपने से क्या? हम तो भुस में आग लगाकर दूर खड़े हैं तापते!

८ बजे—नाश्ता-पानी। आज ब्रेकफास्ट की चाय पर बहुत गरमागरम बहस हो रही है! क्या कारण है? मालिक कह रहे हैं कि इन मजदूरों ने आजकल जहाँ देखो वहाँ सिर उठा रखा है। कुचलना होगा इन्हें! जान पड़ता है—मजदूर कोई साँप है। मालिक के मित्र बतला रहे थे कि उत्पादन में कमी हो रही है। हड़तालों के मारे तबाही मची हुई है। ऐसा कहते हुए उन्होंने अपनी नई 'सुपरफाइन' धोती से चश्मे की काँच पोंछकर साफ की थी। मालिक की लड़की कुछ उद्यत जान पड़ती है; बाप से मतभेद रखती है। यही तो कुत्तों की जाति और मानव-जाति में अंतर है—कुत्ता सदा वफादार रहता है; आदमी, ये एहसान-फरामोश हो जाते हैं!

९ बजे—बगीचे में मालिक के छोटे लड़के (और आया उनके साथ) सैर के लिए आए। फूलों के विषय में आया कुछ भिन्न मत रखती है; मालिक की लड़की का कुछ और मत है। मेरी दृष्टि से तो ये सब काट-तराश बेकार-सी चीज है, मगर नहीं, मैं अपना मत नहीं दूँगा, पहले मैं यह जान लूँ कि फूलों के बारे में मालिक का क्या मत है, तभी अपना मत देना कुछ 'सेफ' होगा।

१० बजे—एक नए ढंग के जानवर से मुलाकात हो गई। यह 'फट्-फट्-फट्' आवाज बहुत करता है, नथुनों से धुआँ उगलता है। मालिक चाहता है, तब रुकता है, चाहता है, तब सरपट दौड़ता है। बड़ी चमकीली आँख है उसकी। मैंने भरसक उसकी नकल में भूँकने और दौड़ने की

कोशिश की, मगर यह किसी विदेश से आया हुआ प्राणी जान पड़ता है। जाने दो, अपने को विदेशियों से क्या पड़ी है? अपने राम तो 'स्वदेशी' के पुरस्कर्ता हैं—चाहे नाम ही स्वदेशी हो और बनाने के यंत्र सब विदेश से आते हों।

११ बजे—भोजन। इस संबंध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि अच्छे-अच्छे तनख्वाहवाले बाबुओं को जो नसीब न होगा, ऐसा उम्दा पकवान हमें मिल जाता है। सब भगवान् की लीला है। जब वह खाता हूँ तो भूल जाता हूँ कि मेरे गले में कोई पट्टा भी है या मुझे भी कभी मालिक ठोकर मारता है। मुझे स्वामी की ठोकर अतिशय प्रिय पुचकार की भाँति जान पड़ती है।

१२ बजे से ३ बजे तक—विश्रांति।

३ बजे—सहसा किसी का स्वर। निश्चय ही वह मालिक की बड़ी लड़की का मुलाकाती, भूरे-भूरे बालोंवाला तरुण है! वह मखमल का पैंट पहनता है, पहले मैंने उसे किसी चितकबरी बिल्ली का बदन ही समझा, वह गरीबों की बात बहुत करता है। आज उसने जो चर्चा की, उसमें कला का भी बहुत उल्लेख था। जान पड़ता है कि शिकारी कुत्ते को जैसे एक खास काम के लिए पालकर बड़ा किया जाता है; वैसे ही यह कलाकार नाम का प्राणी भी समाज में किसी खास हेतु से बढ़ाया जाता है।

४ बजे—शाम की चाय के वक्त बहुत मंडली जुटी थी। घर खासा चायघर बन गया था। आज 'हिंदुत्व', हिंदू-सभा, 'हिंदू-वीर', 'हिंदू-दर्शन' आदि विषयों पर बड़ी बहस हुई। कई लोग थे, जो इस बारे में उदासीन थे कि वे अपने को हिंदू कहें या अहिंदू। दो-चार नौजवान इस बारे में बहुत 'टची' थे। जैसे कुत्ते की थूथड़ी पर कोई बेंत मारे तो वह तिलमिला उठता है; वैसे ही उनके हिंदुत्व पर चोट करने से ऐसा जान पड़ता था कि उनके सतीत्व पर चोट हो रही है। मैं जानना चाहता हूँ कि हिंदू क्या चीज है? यह किस चिड़िया का नाम है? मेरा पुराना मालिक ईरानी था, और तब भी मैं सुखी था, अब भी हूँ। गुलाम का कोई धर्म नहीं होता, कहते हैं कि अब यहाँ के आदमी आजाद हो गए हैं, मगर पैसे की गुलामी तो अभी बाकी ही है। जैसे प्रसन्न होकर मेरी जाति के प्राणी अपनी पूँछ हिलाने लगते हैं; वैसे मैंने कई विद्वान्, चरित्रवान्, निष्ठावान्, धर्मवान् (माने जानेवाले) महानुभावों को पैसे की सत्ता के आगे पिघलते हुए देखा है। हिंदुत्व बड़ा है या पूँजीत्व?

५ बजे—बाहर फिर घूमने के लिए चला। मालकिन मेमसाहिबा खास कपड़े पहने, ऊँची एड़ी के जूते, रंगीन साड़ी वगैरह के साथ थीं। मेरी भी चेन खास ढंग की थी। यह तभी पहनाई जाती है, जब मालकिन किसी उत्सव-विशेष या बाइस्कोप वगैरह में शामिल होती हैं। आज भी कुछ भीड़ देखने को मिलेगी। मेरी दृष्टि में सभा-समाजों की भीड़ और सिनेमा-थिएटरों की भीड़ में खास अंतर नहीं है।

६ से ८.३० बजे तक—एक सफेद परदे पर हिलती-बोलती तसवीरें देखीं। अरे, तो यह आदमी, जो अपने आपको बहुत सभ्य समझता है, सो कुछ नहीं है। जैसे हम लोगों में प्रेमातुरता होती है, वैसे ही इनके चलचित्रों की नायक-नायिकाएँ दिखाती हैं। कोई खास अंतर लड़ने-भिड़ने में भी नहीं, जैसे दो श्वान एक हड्डी के लिए लड़ते हैं, दो मानव एक मानवी के लिए या मत के लिए या पराये देश के लिए। अच्छा हुआ मैंने यह दृश्य देख लिया, जिसे हजारों मानव चुप बैठे हुए आँखों के सहारे निगल रहे थे। मेरा स्वप्न भंग हो गया। मानव जाति को मैं बड़ा आदर्श समझता था, परंतु वैसी कोई विशेष बात नहीं।

९ बजे—सोया। क्योंकि फिर सबेरे जागना है, वही पूँछ हिलाना है, तब डबलरोटी का टुकड़ा शायद मिले; और ज्यादा खुशामद करने पर दूध भी मिल सकता है।

अच्छा भुः भुः (मानवों की भाषा में अनुवाद : अच्छा तो राम-राम!)

सा अ

प्रस्तुति : डॉ. राहुल

रचता नव आख्यान

दोहे

● **दयाकृष्ण विजयवर्गीय 'विजय'**

आँगन में तुलसी रहे, बाहर घर के नीम।
सौख्य लिखेगी स्वस्थता बनकर देह मुनीम॥

सूरज से पहले उठें, निमट करे व्यायाम।
धूम स्वस्थता के करें, स्थापित नव आयाम॥

दें न कभी आलस्य को, आने अपने पास।
परे कुशलता नित्य नव, पूर्व किया अभ्यास॥

बुरि नहीं स्पर्धा कभी, बुरा सदा विद्वेष।
भाव यही मन में रहे, पर से बने विशेष॥

भाव रहा वैशिष्ट्य का, रचता नव आख्यान।
बढ़ा इसी से विश्व में सदा ज्ञान-विज्ञान॥

घटती सुविधाएँ सदा, बढ़ते आविष्कार।
लेती नूतन सभ्यता, नित्य नए आकार॥

भरता जीवन स्फूर्ति से, बढ़ा सुखद नावीन्य।
शिखर कलश की बन ध्वजा, लहराता प्रावीण्य॥

सृजन सृजन में हो निहित मंगल ही संप्रेष्य।
सृष्टि प्रगति करती रहे, यही रहे उद्देश्य॥

सृजन सृजन की नींव में रहता मौलिक सोच।
पंख पुरातन के सदा लेता जड़ से नोच॥

मिली नभ के साथ ही यहाँ मनुज को वाक्।
धूम श्रेष्ठता का रहा अग जग जिसका चाक॥

सा अ

सिविल लाइंस, कोटा-३२४००१ (राज.)
दूरभाष : ०९४६०५७०८३३

गड़े मुरदे मत उखाड़ो…

• मालती शर्मा

गड़े मुर्दों को दफन ही रहने दो

इतिहास की, मजबूर बेजुबान धरोहरों से
गड़े मुर्दे मत उखाड़ो!
इसके बजाय मृत, अर्धमृत
और जो जीवन में आ रहे उन्हें
ठिकाने लगाने, बचाने और
उन्हें जिलाने की तजबीज सोचो
पुरजोर कोशिशें करो
कि विश्व-इतिहास की ये धरोहरें
जीवनयात्रा में कभी किसी के बनाए
पड़ाव थे और हैं…
चलते रहने, आगे बढ़ने की गति
शक्ति और ऊर्जा देने के स्रोत
इन्हें इसने नहीं उसने…
नहीं-नहीं उन्होंने बनाया था,
इस व्यर्थ की खोज-बहस में
वक्त और शक्ति की बरबादी क्यों?
क्योंकि बीता वक्त
किसी नाम की खोज के साथ
वापस नहीं आएगा
हाँ, मन में एक फिजूल का
रोमांच जरूर जगा जाएगा।

कोई हो, कोई तो हो

भावनाओं के मानव-विश्व में
'कोई' हो अपना 'कोई' तो हो
किसी के अपना होने की प्रतीक्षा
यह चाह सनातन जरूरत है
जिंदगी के कुछ क्षणों में
दुख में आँसू पोंछने के लिए
हर्ष में बाँहों में भर गले लगाने को
सफलता पर पीठ थपथपाने को
कठिनाइयों, दु:चिंताओं में साझेदारी को
संदेशे देने, भेजने को
कोई हो…
'समवन' 'समबडी' तो सभी को मालूम हैं
पर अपना तो यह पक्का विश्वास है
कि हर भाषा में कोई के लिए शब्द होगा
इस भरी दुनिया में जब अपना कोई
नहीं मिलता है तो
प्रकृति के उपादान चाँद, सूरज, हवा, बादल,
पंखी-पखेरुओं का संसार
'कोई' बनते हैं
नल-दमयंती की प्रेम-कहानी नैषध चरित्र
मेघदूत पवनदूत भ्रमरगीत रचे जाते हैं
आज जब मोबाइल गूगल पर
संदेश और संदेशा देने-लेनेवाले मिलते हैं
'कोई' की दरकार अपनी जगह बनी जरूरत है
कभी-कभी किसी की उम्र ही कोई अपना
होने की प्रतीक्षा में निकल जाती है
और कभी-कभी जो किसी को कोई मिलता भी है
वह मन के जैसा नहीं होता, कहाँ होता है?
'कोई' कि अपना कोई तो होने की
चाहत की व्यथा विश्वव्यापी है।
इस व्यथा से थोड़ी राहत मिल सकती है
कि कोई न मिलनेवाला मनुष्य यह सोचे कि
वह स्वयं खुद के जीवन में किस-किसका
और कब-कब 'कोई' बना है? यह सोचना…
कोई न मिलने, न होने के तथ्य से साक्षात् होगा।

कौवों की शोकसभा

आज
मेरे बगल के ब्लॉक में
सृष्टि का युग्मराग
एक कौवे को अपने से
बाहर निकाल चला गया
कौवे चिल्ला रहे थे—ध्यान टूटा
'क्या हुआ?' देखने को कहा
स्नेह ने बताया—'एक कौवा मर गया है
बहुत सारे कौवे मरने पर रो रहे हैं।'
मैं उठी तो देखी, अभी तक न देखी
कौवों की शोकसभा

सुप्रसिद्ध वरिष्ठ लेखिका। कविता, लोकवार्त्ता, लोक-संस्कृति, समीक्षा, बाल साहित्य तथा अद्यतन सामाजिक-राजनीतिक विषयों पर विगत अड़तालीस वर्षों से अनवरत लेखन। प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में लगभग नौ सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित, विविध संग्रहों तथा शोधग्रंथों में शामिल। छोटे-बड़े कई दर्जन पुरस्कार-सम्मानों से अलंकृत। संप्रति लेखन में रत।

कार पार्किंग के पास कौवा मरा पड़ा था
उसके चारों ओर जोर-जोर से
कौवे चिल्ला रहे थे
शायद किसी आदमजात को बुला रहे थे?
पर सारे फ्लैट खाली थे और चुप
अब असहनीय हो उठा था कागारोर
स्नेह ने पूछा, 'इन्हें कुछ खाने को दूँ क्या?'
'हाँ दो, पर ये खाएँगे नहीं।
डालकर तो देखो, एक रोटी है और ब्रेड ले लो
स्नेह! टुकड़े कर डाल दो।'
स्नेह ने यही किया
थोड़ी देर में शोर शांत था…
अब न वहाँ रोटी-ब्रेड के टुकड़े थे
न कौवे-पेट की भूख अंतिम सत्य
तभी वहाँ दो बिल्लियाँ आईं
मुझे लगा ये कौवे को खा लेंगी,
पर एक पास जाकर
दूसरी थोड़ी दूर से ही चली गई
शायद भरे पेट थीं?
वैसे भी सृष्टि के युग्मराग से
छूटे में क्या रहता, कौन साथ रहता है?

सा अ

१०३४/१ मॉडल कॉलोनी, कैनाल रोड,
पुणे-४११०१६
दूरभाष : ०२०-२५६६३३१६

आलेख

भगवान् श्रीबदरीनाथजी की आरती

• बालकवि बैरागी

सुप्रसिद्ध कवि एवं विचारक। कविता, कहानी, उपन्यास, संस्मरण और यात्रा-वृत्तांत समेत साहित्य की अनेक विधाओं में विपुल लेखन। काव्यानुवाद और मालवी गीतों का संग्रह भी प्रकाशित। आकाशवाणी और दूरदर्शन से निरंतर प्रसारण। कई फिल्मों के भी गीत लिखे। लोकसभा तथा राज्यसभा के सदस्य रहे।

आप-हम जब भी श्री चार धाम यात्रा और दर्शन की बात करते हैं तो अमूमन हमारे दिमाग में भारत के चारों सीमा क्षेत्र में आदिशंकराचार्य द्वारा स्थापित परम पावन एवं पूज्य तीर्थ श्री बदरीनाथजी उत्तर में हिमालय शृंखला की चोटी पर, फिर पश्चिम में अरब सागर की गोद गुजराम में पूजित दर्शनीय व पूजनीय मंदिर श्री द्वारिकाधीशजी, उसके बाद धुर दक्षिण में हिंद महासागर में रचे-बसे परम पूज्य तीर्थ रामेश्वरम् और पूर्व में बंगाल सागर की लहरों एवं रेतीले टीलों पर विश्वपूजित तीर्थ श्री जगन्नाथजी के ही नाम आते हैं। उड़ीसा स्थित यह पावन धाम विश्व पर्यटन का केंद्र भी है। इन चारों तीर्थों की धाम धारणा में हमारे ऋषियों, तपस्वियों और मनीषियों ने चार धाम और भी जोड़ दिए। उन्हें भी धर्मभक्त भारतीय चार धमा की यात्रा ही मानते और तीर्थपूजा करते हैं। ये चारों धाम विशाल हिमालय में भारत के ठेठ उत्तर में स्थित हैं। चारों हैं—(१) श्रीबदरीनाथ (२) श्रीकेदारनाथ (३) जमुना नदी का उद्गम स्थल जमुनोत्तरी या यमुनोत्तरी और (४) विश्व पावनी माँ गंगा नदी का गोमुख या उद्गम स्थल गंगोत्तरी। इन्हें भी चार धाम मानकर इनका दर्शन व पूजन सारे भारत और विश्व में बसे भारतीयों द्वारा समय-समय पर किया जाता है। इस तरह दोनों चार धामों में परम पावन श्रीबदरीनाथ ही वह एक धाम है, जो दोनों समूहों में पूजा जाता है।

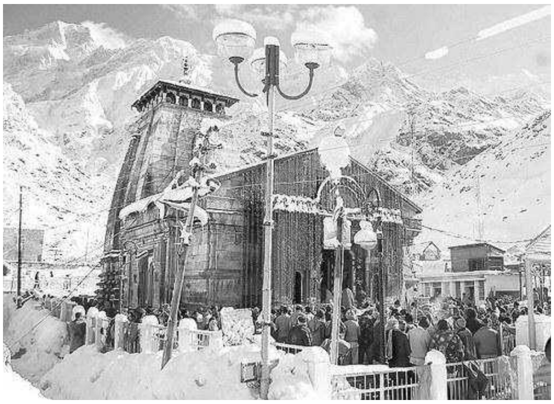

श्रीबदरीनाथ धाम के बारे में हम समय-समय पर कुछ विवादास्पद बातें सुनते हैं। उन बातों में मुख्य विमर्श यह सामने आता है कि श्रीबदरीनाथ मूलत: भारतीय जैन मंदिर था और भगवान् श्रीआदिनाथजी या ऋषभदेवजी की मूर्ति ही श्रीबदरीनाथजी की प्रतिमा है, जो पूजी जा रही है। भारत के हिंदू समाज ने एक जैन मंदिर को अपना मंदिर जैसे-तैसे बना लिया है। अपने जैन मित्रों से यह बात आजकल भी यदा-कदा मैं सुनता हूँ। इन पंक्तियों में यह बिंदु न तो विचार का है, न विमर्श का और न ही बहस का है। इस आलेख में मैं दूसरा बिंदु प्रस्तुत कर रहा हूँ। सौभाग्य से और प्रभु की कृपा से मैं स्वयं सपत्नीक एवं सपरिवार दो-तीन बार हिमालय वाले चारों धामों का दर्शन कर चुका हूँ। वहाँ के पंडों, पुजारियों, बस्तीजनों और अन्य निवासियों तथा गाइडों से तरह-तरह की जानकारियाँ सदैव मिलती रही हैं। कैसी भी प्राकृतिक तबाहियाँ आईं, पर चारों धामों के मूल स्वरूप को व्यवस्था और व्यवस्थापकों ने सुरक्षित रखा, बचाया तथा सोच-समझकर सँवारा-सजाया, यह गर्व की बात है। छोटे-बड़े सामयिक बदलाव और निर्माण होते रहते हैं, पर मूल जस-का-तस है। जो भी जाता है श्रद्धा और भक्ति से, पुण्य कमाकर आता है। किंवदंतियाँ हजारों, पर मूल कथानक हजारों वर्षों से वही चला आ रहा है।

इस बार मेरे एक पत्राचारी सुपरिचित मित्र श्री केशव चंद्र एम. शर्मा (जिनका पता है—१/८ नीलम पार्क, बापू नगर, अहमदाबाद-२४ (गुजरात) दिनांक २५-१२-२००१ (यानी बड़ा दिन, त्योहार क्रिसमस) पर वहीं श्रीबदरीनाथ धाम में थे। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयीजी का जन्मदिन उन्होंने वहीं मनाया। श्री शर्माजी ने मुझे २५-१२-२०१७ वहीं से एक पत्र लिखा। उस पत्र में (जो मेरे पास सुरक्षित है) उन्होंने मुझे जो लिखा, वह मेरे लिए नई बात नहीं थी। यह बात मैं अपनी स्वयं की यात्राओं में सुन चुका हूँ। वे लिखते हैं कि भगवान् श्रीबदरीनाथ की आरती, जो वहाँ पूरी श्रद्धा से गाई जाती है, वह आरती एक मुसलमान भक्त द्वारा लिखी गई है। उस भक्त का मूलनाम फखरुद्दीन था, पर उसकी लिखी आरती जब मंदिर में गूँजने लगी, तब उसने अपना नाम बदलकर बदरुद्दीन कर लिया। फखरुद्दीन जब १८ वर्ष की उम्र में उत्तराखंड के चमोली जिले के नंद प्रयाग में पोस्ट मास्टर था। नंद प्रयाग में ही वह निवास करता

था। उसने सन् १८६५ में मात्र १८ वर्ष की आयु में यह आरती लिखी। इस लिहाज से गणित कहता है कि फखरुद्दीन का जन्म सन् १८४७ होता है। श्री फखरुद्दीन का निधन पूरे १०४ वर्ष की उम्र में सन् १९५१ में हुआ। वे जब तक जिए, तब तक बदरी केदार समिति के सदस्य रहे। उनके परिवार वाले आज भी बदरीनाथ में रहते हैं। 'बदरीनाथ माहात्म्य' नामक पुस्तिका में इसका उल्लेख है। श्री बदरुद्दीन के पौत्र का कहना है कि पहले श्री बदरीनाथजी के मंदिर की दीवार पर यह आरती लिखी गई थी, ताकि लोगों को याद रहे। दीवार पर पढ़कर लोग इस आरती को गाते थे। गंगा-जमुनी संस्कृति का यह बेजोड़ उदाहरण है। यह सारी जानकारी गुजराती अखबारों में प्रकाशित हुई थी। भगवान् बदरीनाथ की यह आरती है—

श्रीबदरीनाथजी की आरती

पवन मंद सुगंध शीतल हेम मंदिर शोभितम्।
निकट गंगा बहत निर्मल, श्रीबद्रीनाथ विश्वंभरम्॥ १॥
शेष सुमिरन करत निशिदिन, ध्यान धरत महेश्वरम्।
श्रीवेद ब्रह्मा करत स्तुति श्रीबद्रीनाथ विश्वंभरम्॥ २॥
इंद्र चंद्र कुबेर दिनकर धूप दीप निवेदितम्।
सिद्धि मुनिजन करत जै जो, श्रीबद्रीनाथ विश्वंभरम्॥ ३॥
शक्ति गौरी गणेश शारद नारदमुनि उच्चारणम्।
योग ध्यान अपार लीला श्रीबद्रीनाथ विश्वंभरम्॥ ४॥
यक्ष किन्नर करत कौतुक गान गंधर्व प्रकाशितम्।
श्रीलक्ष्मी कमला चँवर डोलें श्रीबद्रीनाथ विशंभरम्॥ ५॥
कैलास में देव निरंजन शैल-शिखर महेश्वरम्।
राजा युधिष्ठिर करत स्तुति श्रीबद्रीनाथ विश्वंभरम्॥ ६॥
श्रीबदरीनाथजी की परम स्तुति यह पढ़त पाप विनाशम्।
कोटि तीर्थ सुपुण्य सुंदर सहज अति फलदायकम्॥ ७॥

हमारे देश में यह कोई विचित्र प्रसंग नहीं लगता। महाकवि रसखान, कवि श्रेष्ठ रहीम, महाकाव्यकार मलिक मोहम्मद जायसी जैसे अनेक मुसलिम कवि-गीतकार हमारे मंदिरों, मठों, आश्रमों में गाए जाते हैं। इस सदी का एक जीवित नाम है—कवि भाई श्री अब्दुल जब्बार, जो चित्तौड़गढ़ (राजस्थान) के निवासी हैं और पिछले ५० वर्षों से हिंदी कवि-सम्मेलनों के मंच पर सुसम्मानित हैं। उनका लिखा 'गंगा-गीत' 'निर्मल नीर गंगा का' आज भी हरिद्वार तीर्थ में हरकी पौढ़ी पर अकसर गाया-बजाया, सुना और सुनाया जाता है। हमारी संस्कृति में साहित्य का शिखर सर्वोपरि है। एक महाकवि ने ठीक ही लिखा है, ''ऐसे मुसलमान पर कोटिन हिंदू बारिये।''

जब कभी भी आप हिमालय के अपने चार धामों की यात्रा पर पधारें तो स्व. बदरुद्दीन (मूलत: स्व. फखरुद्दीन) के परिजनों से मिल सकते हैं।

भगवान् बदरीनाथ आपका मंगल करें। शुभम्!

सा अ

कविनगर, पोस्ट मनासा,
जिला-नीमच-४५७९९० (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२५१०६१३६

सामाजिकता

लघुकथा

• अशोक गुजराती

बूढ़ी-बूढ़ी साथ रहते थे निसंतान, दोनों अल्पभाषी और गैर-मिलनसार। उनकी इमारत के अन्य फ्लैटवाले उन्हें आते-जाते आदर से नमस्कार करते। वे जवाब देकर चुप ही रह जाते। न किसी से अधिक बोलते, न ही कोई संबंध रखते। फिर भी कुछ उनकी उम्र का लिहाज कर तो कुछ उनके कम बोलने की वजह से ही उनकी ज्यादा इज्जत करते।

बूढ़ा सत्तर का था, पर बासठ की बुढ़िया का भरपूर खयाल रखता। बूढ़ी अकसर बीमार रहती, ठीक से चल-फिर भी नहीं पाती। बूढ़ा हमेशा तत्पर उसे डॉक्टर के पास ले जाने और इलाज करवाने में कोई कसर नहीं छोड़ता था। पेंशन अच्छी-खासी थी, इसलिए किसी प्रकार का आर्थिक संकट भी नहीं था।

लेकिन आपदा आ गई। इस बार बूढ़ा अस्वस्थ हो गया। अस्वस्थ ही नहीं, चक्कर खाकर गिर गया और बेहोश हो गया। बूढ़ी परेशान कि किसे मदद को बुलाए? खुद तो कुछ कर नहीं सकती थी। औरों से हरदम अलगाव ही बनाए रखा था।

अंतत: वही हुआ। जोर-जोर से रोने लगी। तुरंत ऊपर-नीचे के फ्लैटवाले दौड़े-भागे आए। मुँह पर पानी के छींटे मारे। बूढ़ा था कि फिर भी अचेत। किसी ने कोई उपाय किया, किसी ने कोई। फायदा नहीं हो पा रहा था।

तभी नीचे के फ्लैटवाले ने आकर फूली साँस को काबू करते हुए कहा, ''ले चलो इन्हें, मैंने कार निकाल ली है। डॉक्टर के पास ले चलते हैं।''

बूढ़े को हॉस्पिटल ले गए। उनका बी.पी. बढ़ गया था। डॉक्टर ने इंजेक्शन लगाया। वे होश में आ गए थे। दवाइयाँ लिख दीं, जो उनके ऊपर के फ्लैटवाला खरीद लाया और फिर घर ले आए।

लगभग दस दिनों में बूढ़ा चंगा हो गया। बूढ़ी ने बड़े संकोच से अपने मन की बात कही, ''देखा, हम सबसे रूखा व्यवहार करते रहे, पर समय आने पर वे ही काम आए।''

बूढ़े के होंठों पर मुसकान थी और आँख में आँसू।

सा अ

बी-४०, एफ-१, दिलशाद कॉलोनी, दिल्ली-११००९५
दूरभाष : ०९९७१७४४१६४

कहानी

तलाक, तलाक, तलाक

● मदन मोहन वर्मा

सुपरिचित साहित्यकार। अंग्रेजी में सात पुस्तकें तथा हिंदी में लघुकथा संग्रह, कविता-संग्रह, तीन कहानी-संग्रह, 'गांधी अर्थ दर्शन' दो संस्करण। लगभग १,५०० आलेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। संप्रति पठन-पाठन, सामाजिक कार्यों में रुचि एवं कार्यरत।

ईद के दिन सेवइयों में थोड़ा मीठा ज्यादा हो गया और गोश्त में मिर्च-मसाले की अधिकता ने घर का माहौल पहले से थोड़ा-थोड़ा बिगाड़ा, पर जब ईद के जश्ननुमा-खुशनुमा तसवीर के धुँधलाने पर उसी रात कहा खाविंद ने बेगम से, ''क्या मैं नहीं समझता कि आज के दिन मेरी रुसवाई करने के लिए ही तुमने मिर्चों की भरमार कर दी थी गोश्त में और सेवइयों में इतनी मिठास भर दी थी कि जुबान तालू के साथ चिपट-चिपट जा रही थी। ऐसा तुमने जान-बूझकर मेरी जग-हँसाई के लिए किया था न?''

''नहीं मेरे सरताज, ऐसा मैं क्यों करूँगी? इस सोलह साल की शादीशुदा जिंदगी में क्या कभी ऐसा किया है मैंने, जो आज करूँगी?''

''आज तो किया ही है न बेगम आपने।''

''नहीं मेरे आका! ऐसा अनजाने में हो गया है शायद।'' मुझसे कहते तो सही, मुझे तीन मिनट से ज्यादा नहीं लगता दोनों को आपके स्वादानुसार लजीज कर देने में। आपने तो पहले चखा था न? बता देते। सोलह वर्षों के इम्तिहान में न भी पास हुई हूँ तो भी आज जरूर हो जाती, परंतु कहते तो सही, बताते तो सही। मैं तो आखिर में बचा-खुचा ही खाती हूँ। अपनी ओर से तो उम्दा, मुहब्बत में डूबा हुआ पकवान परोसने की कोशिश की थी मैंने।''

''चुप रहो बेगम, चुप रहो। एक तो गलती की और दूसरे गलत बयानी भी कर रही हो।''

''यह गलत बयानी नहीं, हकीकत है मेरे प्यारे खाविंद।''

''अभी भी जुबानदराजी किए जा रही हो तुम, बेगम।'' मियाँ अशरफ जामे से बाहर हुए जा रहे थे। उनकी नाक पर चढ़ा गुस्सा नथुने से बाहर निकलने को बेताब सा नजर आने लगा था।

''मियाँ, काहे लाल-पीले हो रहे हैं आप। आज ईद है, खुशियाँ बाँटिए। बच्चे बड़े हो रहे हैं, उन्हें दुलारिए-पुचकारिए, ईदी दीजिए। आइए, चलिए खुश रहने के लिए ख्वाबगाह में।''

''बेगम, ख्वाबगाह में जाएँ मेरे दुश्मन। मैं तो तुम्हें तलाक देता हूँ—तलाक, तलाक, तलाक।''

अचानक बेगम रुबिया पर वज्राघात हो गया जैसे। मियाँ अशरफ इस तीन बार के तलाक उच्चारणोपरांत बाहर निकल गए। रुबिया काठ मारने की स्थिति में आ गई। न वह रो पा रही थी और न हँस पा रही थी। साँप सूँघ गया जैसी स्थिति में घंटों बैठी रही वह। बच्चे सो गए। खाविंद बाहर चले गए थे—कहाँ? नहीं जानती वह। स्वयं वहीं बैठी-बैठी ऊँघने लगी वह, संभवत: सो भी गई। तभी खिड़की से आती आफताब की किरणों ने उसे छुआ और उसकी आँखें खुल गईं। आँखें खुलते ही रात के वे तीन उच्चारित शब्द कानों में गूँजने लगे। हाँ, चुभ जरूर नहीं रहे थे वे। वह नित्य-क्रिया से निवृत्त हुई। बच्चे खुशी-खुशी स्कूल चले गए। मियाँ अशरफ लगता है कि रात ही लौट आए थे। परंतु टेबुल पर रखे नाश्ते की ओर बिना निगाह किए ही घर से बाहर निकल गए और जब साँझ गए आए तो आग-बबूला हो गए, ''बेगम रुबिया! मैंने कल रात आपको तलाक दे दिया था, फिर भी आप मेरे दौलतखाने में कैसे दिखाई पड़ रही हैं?''

''अशरफ मियाँ, वह तलाक मुकम्मल नहीं है?''

कुरान शरीफ के विषयों पर शोध कर चुकी और तीन शोध-पत्रों के साया होने के पश्चात् रुबिया बेगम काफी आश्वस्त थीं तथा उन्हें किसी प्रकार का कोई भय भी नहीं सता रहा था। थोड़ी देर तो ऐसा लगा कि खाविंद अशरफ पर रुबिया की बातों का माकूल प्रभाव पड़ा है, क्योंकि वे थोड़े गंभीर और शांत नजर आने लगे थे। वे भी पी-एच.डी. थे। भले ही इसलामिक विषयों पर नहीं, पर मुगलकालीन इतिहास के भारत प्रसिद्ध विद्वानों में से एक थे वे। भारत के इतिहासकार उन्हें पहली पंक्ति में बैठाकर गौरवान्वित महसूस करते थे। हाँ, यह जरूर था कि वे क्रोधी स्वभाव के थे और क्रोध में पूरी तरह अपना विवेक खो देते थे। केवल इतना ही नहीं, क्रोध! वह भी अशरफ मियाँ का, महीनों अपनी जकड़ में रखता था और कोई भी तर्क उन्हें शांत करने में सक्षम नहीं हुआ करता था। रुबिया के इस तर्क 'तलाक मुकम्मल नहीं हुआ है' ने आग में घी का काम किया। ''रुबिया बेगम! तीन बार तलाक मुँह से निकल जाने पर मुकम्मल हो जाता है और अब आप से हमारा खाविंद-बेगम का रिश्ता खत्म हो चुका है।''

''नहीं, अशरफ मियाँ! यह आपके नावाकिफ होने की कहानी दोहरा रहा है। आप मुगलकालीन इतिहास के विद्वान् अवश्य हैं, परंतु इसलाम और कुरान की बारीकियों से पूरी तरह नावाकिफ हैं। कहीं क्रोध में तीन बार तलाक कह देने से विवाह-संबंध टूटता है भला, मेरे पति-परमेश्वर।''

''बेगम किस खाम-खयाली में हो तुम?''

''जिसमें तुम हो, मेरे कामदेव।''

''ये चोंचले हैं।''

''नहीं, यह हकीकत है।''

''नहीं, यह बदतमीजी है, जिसे बेगैरत करने में मुझे कोई हर्ज नहीं होगा। आज तुम मुझे बेगैरती से भरी दिख रही हो।''

''नहीं अशरफ मियाँ, मैं तलाकशुदा नहीं हूँ, कल रात के उच्चारणों के बाद भी।''

''वह कैसे भला?''

चुप रही रुबिया बहुत देर तक। जवाब देना तो चाह रही थी, पर गुत्थी सुलझाने की ब्योंत में लगी हुई थी। वह जानती थी कि अशरफ मियाँ को समझ में तो आएगा, पर जब तक उनका गुस्सा शांत नहीं होता, तब तक तार्किक होना बुद्धिमानी नहीं। उनका क्रोध तो क्रमागति से नीचे की ओर आएगा, पर तब तक उनकी चटोरी जुबान और पेट की चाहत को ध्यान में रखकर उन्हें थोड़ा समय देने की जरूरत पर उसने गौर करना शुरू कर दिया तथा योजनाबद्ध तरीके से कार्य को अंजाम देने के लिए उठी। रात के गोश्त के मिर्च को अपने तकनीक का प्रयोग करके कम करके भून लिया, ऐसा जैसे अभी-अभी नई डिश तैयार की हो और सेवइयों में मलाई की बहुतायत करके उसके मीठेपन को नीचे उतारा तथा दो रुमाली रोटी ताती-ताजी बनाईं। सबकुछ डाइनिंग टेबल पर सजाकर, ''मेरे हुजूर आइए, नोश फरमाइए। क्षुधा तो शांत होनी चाहिए न, शेष फिर कभी।''

''नहीं, रुबिया बेगम! शेष फिर कभी नहीं, बल्कि अभी और इसी वक्त।''

''चलिए आपकी बातें सिर-माथे पर। हाँ, खाने से क्या बेवफाई। आइए, नोश फरमाइए।''

अशरफ मियाँ को भूख तो लगी ही थी। थोड़ा इसरार भी था और रुबिया के व्यंजन की खुशबू नाक में समाती जा रही थी। वे खाने का लोभ सँवरण न कर सके और टेबल से लगी कुरसी पर बैठ ही गए। रुबिया ने भी सुगढ़ता से परोस दिया। हलकी सी मुसकान तैर गई मियाँजी के होंठों पर और बड़ी ही शालीनता से उन्होंने खाना खत्म किया। हाथ-मुँह धोया, ब्रश किया और अपने बेडरूम में पहुँच गए।

बच्चों को खिलाकर उनके कमरे में उनको भेजकर रुबिया भी बेडरूम में पहुँची तो मियाँ अशरफ की आँखें लाल हो गईं।

''बेगम! आप यहाँ कैसे? तलाक हो चुका है हमारा।''

''नहीं, अशरफ मियाँ! अब आप वह राग तो अलापिए मत। सोइए और सोने दीजिए। ईद तो काली कर दी थी आपने।''

''बेगम, काली-गोरी मैं नहीं जानता। मेरा बिस्तर अब आप शेयर नहीं कर सकतीं।''

''चलिए, अभी तो गरमी ही है। हम आपके बगल में जमीन पर लोटायमान हो जाते हैं। नींद तो आ ही जाएगी। आपका सान्निध्य न सही, आपके पलंग का किनारा ही सही।''

''नहीं बेगम रुबिया, आप मेरा कमरा भी इस्तेमाल नहीं कर सकतीं तलाक के बाद।''

''छोड़िए इन बातों को, हुजूर। थूक दीजिए गुस्सा। आज न तो आपको मिर्च ज्यादा लगी और न ही चीनी की मिठास ज्यादा थी। हाँ, मेरे हाथों की मिठास और मेरी उँगलियों का स्पर्श तो मिला ही न आपको, फिर काहे की यह बेमुरव्वती?''

''बेगम रुबिया, फुसलाओ नहीं मुझे। अब आप तलाकशुदा हैं।''

''हरगिज नहीं, मिस्टर अशरफ!'' तिलमिला गई इस बार रुबिया बेगम। अशरफ की आँखें भी खौफजदा सी दिखने लगीं। वे कुछ कह नहीं सके। आँखें मुँद सी रही थीं। माथे पर चिंता नहीं, एक डर की रेखा दिखने सी लगी थी। तभी रुबिया शांत, परंतु बहुत ही गंभीर आवाज में बोली, ''अशरफ मियाँ! आप अब भी शौहर हैं और नौ माह तक रहेंगे, क्योंकि मैं एक महीने के पेट से हूँ और मेरे दोनों बच्चे दस-दस महीने मेरे गर्भ में रह चुके हैं। तीसरा भी ऐसे ही दस महीने बाद ही पैदा होगा।''

''तो?''

''तो कुरआन शरीफ की विभिन्न आयतों, कानूनजादों एवं न्यायालयों के उद्घोषों के मुताबिक एक ही बार में तीन बार तलाक कह देने से तलाक पूरा नहीं होता। उसके लिए 'इद्दत' (इंतजार समय) का भी ध्यान रखना पड़ता है। अर्थात् या तो तीन रजस्वला समयावधि अथवा तीन माह अथवा बच्चा होने तक, वह भी एक समयावधि के मध्य केवल एक, एक, एक बार 'तलाक' कहने से, जिससे छह माह का समय तो निकल ही जाता है, और खाविंद अशरफ मियाँ, मेरी स्थिति में तो पूरे नौ महीने बाकी हैं। साथ ही हम-आप आपसी पति-पत्नी का संबंध कायम रखने के लिए एक बार समझौता का रास्ता तो अपना ही सकते हैं, इतिहास विद्वानजी। इतिहास में तो बड़े-बड़े समझौते हुए हैं। अकबर ने जोधाबाई से निकाह इसलिए किया था, जिससे मुगलों-राजपूतों के बीच रोटी-बेटी का संबंध हो जाए। बोलो मेरे सरताज, बोलो। मैं गलत हूँ क्या?''

अशरफ मियाँ ने रुबिया बेगम को खींच लिया पलंग पर। अपने आगोश में लेते हुए अस्फुट स्वर में फुसफुसाए, ''मैंने तलाक ही कब दिया था मेरी जानेमन, वह तो जुबान की दरिंदगी थी। ऐसी जुबान को तुम ही अपनी जुबान के मीठेपन से रसदार बना सकती हो, बेगम।''

एस.बी. ९७, शास्त्री नगर
गाजियाबाद-२०१००२
दूरभाष : ०९८६८६४६०२१

भारतीय दर्शन में आनंद

• लक्ष्मीनिवास झुंझुनवाला

१७ अक्तूबर, १९२८ को ग्राम मुकुंदगढ़ (राजस्थान) में जन्म। कलकत्ता विश्वविद्यालय से स्नातक, गणित ऑनर्स में स्वर्ण पदक प्राप्त, एम.ए.। औद्योगिक जगत् में रहकर भी सांस्कृतिक कार्यों में सक्रिय योगदान; अनेक सांस्कृतिक संस्थानों से जुड़े हुए।

नौ बजे बिस्तर पर लेटा। नींद नहीं आई, फिर भी पड़ा रहा। किरीटजी की पुस्तक 'वेद व भारतीय संस्कृति' दो दिन पहले अरविंद आश्रम से खरीदी थी, उसे पढ़ने लगा। यह तो पता था कि वेद विश्व का प्रचीनतम ग्रंथ है—करीब १० हजार ईस्वी पूर्व। पर आश्चर्य हुआ कि पाश्चात्य विद्वानों ने वेदों का इतना अध्ययन किया। मैक्स मूलर का प्रयास प्रशंसनीय है। यद्यपि उसका उद्‍देश्य संपूर्ण भारत को ईसाई बनाने का था। वे वेदों का रचनाकाल १२०० ई.पू. मानते हैं। मैकाले ने उनसे प्रेरणा ली तथा भारत में अंग्रेजी शिक्षा प्रारंभ की। उसने कहा था, ''मैंने अंग्रेजी से भारतीय मानस को इतना प्रभावित कर दिया है कि अंग्रेजी राज तो चला जाएगा, पर अंग्रेजी भाषा भारत पर छाई रहेगी।'' आज यह सत्य लग रहा है।

प्रोफेसर हारा, लुडविग, जैकोबी वेदों का रचनाकाल ५००० ई.पू. मानते हैं। प्रोफेसर हिल्टर्न इसे २००० ई.पू. मानते हैं। भारतीय इतिहासकार श्री अविनाशचंद्र दास वेद का रचनाकाल ३७,५०० ई.पू. के भी पहले का मानते हैं। वेदों का पुरुष सूक्त और सृष्टिविद्या प्रतिपादक वेद का नासदीय सूक्त पढ़ना चाहें तो वहाँ भी अंग्रेजी विद्वानों ने ही उस पर भाष्य लिखे हैं। वेदों में ऋग्वेद सबसे प्रमुख है। इसके पदों व अक्षरों तक की गणना की गई है। पदों की संख्या एक लाख तिरपन हजार आठ सौ छब्बीस है तथा अक्षरों की संख्या चार लाख बत्तीस हजार है।

रामकृष्ण मिशन दिल्ली में रामकृष्ण, विवेकानंद, शारदा माँ आदि की जन्मतिथि में प्रात: छह बजे से बारह बजे तक हवन आदि का कार्यक्रम रहता है। इससे एक उदात्त वातावरण की सृष्टि हो जाती है। हाल ही में शिक्षा क्षेत्र का नेतृत्व करनेवाले ९० वर्षीय एक प्रख्यात शिक्षाविद् के जन्मोत्सव में गया था। वहाँ भी यज्ञ हो रहा था। वैदिक परंपरा और ज्ञान का सबसे प्रमुख प्रतीक यज्ञ है। यज्ञ प्रतीक है आंतरिक अर्पण व देवताओं जैसी उच्चतर शक्तियों के प्रति समर्पण के भाव का। बाह्य स्तर पर अर्पण के इस भाव को यज्ञाग्नि प्रज्वलित करके उसमें यज्ञ सामग्री डालने का स्थूल रूप दिया गया है। इसमें मंत्रों का विधिपूर्वक उच्चारण आवश्यक है। मंत्रोच्चारण में हस्तचालन व मुद्राओं का भी अत्यंत महत्त्व है। विश्व हिंदू परिषद् के स्वर्गीय अशोक सिंघल ने वेदपाठ का एक आयोजन किया था। तब वेदपाठ सुनने का अवसर मिला। हस्तचालन व मुद्राओं से वातावरण में तरंगें उत्पन्न होने की अनुभूति होती बताई जाती है। वेद की अपनी उच्चारण विधि है। ध्वनि, अक्षर, उच्चारण पर शोध किया गया है। ३२ विधियों का वर्णन मिलता है। वेदों की शिक्षा के लिए तक्षशिला प्रसिद्ध था। वहाँ वेदों के अतिरिक्त व्याकरण, दर्शन और १८ शिल्पों की शिक्षा दी जाती थी—१. नृत्य, २. चित्रकला, ३. गणित ४. निधि, ५. अभियांत्रिकी, ६. मूर्ति, ७. कृषि, ८. पशु , ९. वाणिज्य, १०. आयुर्वेद, ११. परिवहन, १२. प्रशासिकी, १३. धनुर्वेद, १४. धातु विद्या, १५. सर्प विद्या, १६. निधिशोधन, १७. विधिपाल, १८. युद्ध विद्या। इस प्राचीन भारत का दृश्य पढ़कर मन गौरव से भर जाता है।

वेद समझने के लिए तपस्या करनी पड़ती है। कई बार प्रश्न उठता है कि इन्हें सरल क्यों नहीं बनाया गया है। एक विद्वान् मित्र ने बताया कि वेदों को अपात्रों के लिए जान-बूझकर अबोधगम्य बनाया गया। इंद्रिय-गम्य ज्ञान से जब व्यक्ति को संतोष नहीं होता, तब वह तपस्या करता है—अनुभूतियाँ होने लगती हैं। वर्तमान काल में ऐसा एक उदाहरण ऋषि विनोबा का है। उन्होंने स्वयं लिखा है कि जब वे गीता-प्रवचन करते थे तो उन्हें समाधि की अवस्था हो जाती थी।

वैदिक ऋषियों के नाम विश्वामित्र, वामदेव, भरद्वाज, मधुच्छंदा, दीर्घतमा, गृत्समद, मेधातिथि तथा महिलाओं में गार्गी, मैत्रेयी आज भी सद्‌भाव नमन के भाव जाग्रत् करते हैं। भौतिक लोकों का अति लौकिक लोकों से संबंध वैदिक ऋषियों के अनुसंधान का विषय रहा है। इस संबंध के बिना मनुष्य पूर्णता को प्राप्त नहीं कर सकता। वेदों के उपरांत ब्राह्मण व अरण्यक आते हैं, उसके बाद उपनिषद् आते हैं। उपनिषद् के ऋषियों ने वैदिक ज्ञान, जो कालक्रम से मंद पड़ गया था, उसे पुनर्जीवित करने का प्रयास किया।

इसी काल में कश्यप-अदिति से प्रवर गोत्रों में ऋषियों का जन्म हुआ। वर्तमान में जो भी जातियाँ हैं, उनका नाम ऊपरलिखित किसी-न-किसी ऋषि के नाम पर है। पृथ्वी पर हम सब पृथु के वंशज हैं और वैवस्वत् मन्वंतर में जल प्रलय के बाद मनु के कारण हमें 'मानव' संज्ञा

मिली। एक कथा है कि याज्ञवल्क्य ने अपनी पत्नी मैत्रेयी से कहा, ''अरी ओ मैत्रेयी! पति पत्नी को इसलिए प्यार नहीं करता कि वह पत्नी है। वह प्यार इसलिए करता है कि वह मेरी पत्नी है। यही बात पत्नी के लिए भी है। वह पति से इसलिए प्यार नहीं करती कि वह पति है, बल्कि इसलिए प्यार करती है कि वह मेरा पति है। जहाँ मेरापन है, वहाँ मन है, जहाँ मन है, वहाँ कायदे-कानून हैं, वहाँ टूटन है। जुड़ाव नहीं, खाइयाँ हैं, भराव नहीं, और जहाँ भराव नहीं, वहाँ धरती पर घाव-ही-घाव हैं।''

भागवत और मार्कंडेय पुराण के अनुस्तर महर्षि कश्यप की १३ पत्नियाँ थीं—१. दिति २. अदिति ३. दनु ४. विवता ५. खसा ६. कद्रु ७. मुनि ८. क्रोधा ९. रिष्टा १०. इरा ११. ताभ्रा १२. इला १३. प्रधा।

वेदों के रचनाकाल के संबंध में डॉ. सुरेंद्र भटनागर अपनी पुस्तक 'भारतीय ज्ञान परंपरा' में लिखते हैं कि इनकी रचना वैवस्वत मन्वंतर में की गई। पं. रघुनंदन शर्मा (२०११) पं. भगवतदत्तजी के शोध के आधार पर व तैत्तिरीय संहिता, ऐतरेय ब्राह्मण और मैत्रायणी संहिता के अनुसार वैवश्वत मनु ने अपने पुत्रों को उत्तराधिकार में वेद व ब्राह्मण ग्रंथ दिया तो वेदों का रचनाकाल कम-से-कम दस हजार वर्ष पूर्व (नियोलिथिक काल) ठहरता है। उस समय एकाक्षरी भाषा चलती थी। क्रम से उसका ह्रास हो गया, फिर भी चीनी भाषा में आज भी सैकड़ों शब्द एकाक्षर रूप में मिलते हैं। पुराणों के अनुसार, भारत का इतिहास वैवस्वत मन्वंतर के जल प्रलय के बाद आए कृषि युग से भी कई हजार वर्ष पुराना है। भारत में अनेक समानांतर संस्कृतियाँ थीं—नाग भारत, शबर भारत, निषाद भारत, किरात भारत। कृषकों को अपने खेतों की सुरक्षा के लिए समूहों में रहना पड़ता था। इसीलिए ग्रामों और ग्राम्य संस्कृति का विकास हुआ। आज जो भारत का इतिहास मिलता है, वह कृषकों का ही है। विकसित होने के कारण वे अपने को 'आर्य' कहते थे और अन्य को अनार्य कहते थे। अनार्य और आर्य कोई भिन्न लोग नहीं थे। अनार्य गुणवाचक शब्द है, जातिवाचक नहीं। आर्य कृषक संस्कृति सिंधु-सरस्वती के क्षेत्र से आरंभ होकर भारत के अन्य क्षेत्रों में फैलती गई।

स्टीफेन ओपेनहेमर संस्कृत के विद्वान् थे। उन्होंने ही १९४५ में जापान पर एटम बम डाला था। वायुयान से विध्वंस का दृश्य देखकर उन्होंने गीता के श्लोक का उदाहरण देकर समझाया था। उनके अनुसार, ९९,००० वर्ष पहले थोड़े से मानव से भारत आरंभ हुआ। भारत के प्रारंभ का मत्स्यपुराण में इस प्रकार वर्णन है—कंदु कृषि व अप्सरा प्रलोचना ने एक पुत्री को जन्म दिया। उसका नाम मारिया था। उसे वन में छोड़ दिया गया व राजा सोम ने उसका पालन किया। पृथुवंश के दस प्रचेता पुत्रों ने मारिया से विवाह किया था। उन्हीं से प्रजापति दक्ष का जन्म हुआ। उस समय विश्व व भारत की जनसंख्या बहुत कम थी। अत: जनसंख्या बढ़ाने के लिए अनेक पति रखने की प्रथा थी। जैसे महाभारत में द्रौपदी के पाँच पति थे। आगे चलकर दक्ष के वंश में पुत्रों का नाश हो गया व केवल पुत्रियाँ बचीं। उन्हीं में से एक पुत्री अदिति थी। उसने कश्यप मुनि से विवाह किया।

प्राचीन भारत की बात छोड़िए। अभी १२५ वर्ष पहले का दृश्य देखिए। रामकृष्ण-अरविंद-रमण महर्षि का अवतरण हुआ। परतंत्र भारत में तीन आध्यात्मिक पुरुषों के अवतरण के पीछे ईश्वर का अवश्य कुछ उद्देश्य रहा होगा। नोबेल लारिएट रोम्याँ रोलाँ ने, जर्मन मैक्स मूलर ने, अमेरिकन क्रिस्टोफर ईश्वरवुड ने सुंदर पुस्तक रामकृष्ण पर लिखी। रमण महर्षि को विदेशी ओसबोर्न एवं पॉल ब्रंटन ने विख्यात किया। महायोगी अरविंद की प्रेरणा से यूनेस्को ने पांडिचेरी में ओरोविल बनाने में सहयोग दिया। विदेशियों के बीच अध्ययन से हमें गौरव-बोध तो होता है, पर हमारा प्रयास यथेष्ट नहीं है।

वेद में ही एक कहानी बालक सत्यकाम की है। वह वेश्या पुत्र है। गुरु के पास जाता है और उनसे सत्य को छिपाता नहीं। गुरु प्रसन्न हो जाते हैं और उसे अमरत्व प्राप्त होता है। छांदोग्य उपनिषद् में भी एक कहानी आरुणी की है। यह गुरु से कहता है कि इतने प्रकार के विषय हैं—गणित, इतिहास, भूगोल, दर्शन, संगीत, यह सब कैसे एक जन्म में प्राप्त किया जा सकता है? वह कौन सा ज्ञान है, जिसके जानने से समस्त ज्ञात हो जाता है। इसका उत्तर वैदिक ऋषि देते हैं कि तत्त्व का ज्ञान संपूर्ण व्याप्त जगत् का आधार है। उस तत्त्व का ज्ञान प्राप्त करो और वह तुम्हारी स्वयं की आत्मा है। 'तत् त्वं असि' वैदिक सूत्र है। ऐसी अनेक कहानियाँ हैं। नारद सनत कुमार की कच-देवयानी, वेद के शिष्य उत्तंक, अंगिरस, रेक्व, याज्ञवल्क्य, मैत्रेयी, कात्यायनी आदि। वेद ज्ञान का भंडार है। उपनिषद् उसका एक अंशमात्र है। वर्तमान काल में पढ़ने की रुचि कम होने लगी है। पढ़ने के लिए समय का अभाव है, क्योंकि समय अभी राजनीति की व्यर्थ चर्चा, अखबारों के राजनीति पर लंबे-लंबे लेख पढ़ने में लग जाता है।

चिन्मय मिशन के तेजामयानंद महाराज ने 'उपनिषद् गंगा' के शीर्षक से कुछ फिल्में बनाई हैं, इसमें सत्यकाम के जीवन पर फिल्म भी एक है। ऐसी फिल्में अत्यंत प्रभावोत्पादक हैं। प्राचीन भारत में संगीत-नृत्य-नाटक में संस्कृत साहित्य में सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रंथ है 'भरत का नाट्यशास्त्र'। नाट्यशास्त्र के ऊपर दो संहिताएँ हैं। उनके नाम हैं—द्वादश साहस्री और षद् साहस्री। आज भी भरत गुप्त नाट्य शास्त्र के विद्वान् हैं। पाश्चात्य देशों ने उन्हें अभी भाषण देने के लिए आमंत्रित किया था।

वेदों को समझने के लिए छंदज्ञान अत्यंत आवश्यक है। वैदिक मंत्रों से स्पष्ट है कि छंदज्ञान उस समय पूर्णता पर पहुँच चुका था, इसका विवेचन शंखायन स्रोतसूत्र व महर्षि पिंगल के छंद सूत्र में प्राप्त होता है। वेदों में मुख्यत: सात छंद पाए जाते हैं—१. गायत्री २. उष्टिराध ३. अनुष्टुप ४. वृहती ५. पंक्ति ६. त्रिष्टुप और ७. जगती। इनपर अनेक टीकाएँ लिखी गई हैं। इन आचार्यों के नाम हैं—कोष्टकि, यास्क, कश्यप और मांडव्य। इसी छंद शास्त्र से संगीत विद्या का विकास हुआ। सामवेद गेय है। वहाँ षड्ज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम ,धैवत, निषाद स्वरों की चर्चा मिलती है। वहाँ वीणा का उल्लेख है। संगीत को भगवत् प्राप्ति का साधन माना गया है। स्वामी हरिदास का नाम इसी श्रेणी में आता है। तानसेन उन्हीं का शिष्य था।

वैदिक काल के बाद दूसरा युग ५६० ई.पू. से २०० ई.पू. तक

का था। इसमें बुद्ध-महाबीर का जन्म हुआ। भारत पर पहला विदेशी आक्रमण सिकंदर का हुआ, जिसको हराने में ऋषि चाणक्य की मुख्य भूमिका रही। इस युग में अशोक की गलत नीतियों से मौर्य साम्राज्य का अंत हुआ। २०० ई.पू. से ७०० ई. तक का काल आता है, जिसमें हर्षवर्धन अंतिम राजा है। इस काल में समृद्धि, बाहुल्य, वैभव व यश भारत को प्राप्त हुआ। ७०० ई. पूर्व में भारत का प्राचीन काल समाप्त हो गया तथा भारत पतन के मार्ग पर अग्रसर हो गया। फिर भी इस पतन काल में भी शंकर-रामानुजम, वल्लभ आदि ने इसलाम के प्रभाव से हिंदू धर्म की रक्षा की। परतंत्र भारत में रामकृष्ण, रमण महर्षि एवं अरविंद का अवतरण हुआ, पाश्चात्य संस्कृति के कुप्रभाव से देश की रक्षा की।

महात्मा गांधी का युग १९२० से प्रारंभ होता है। एक ओर उन्होंने अत्यंत सादगी के जीवन का आदर्श रखा, सारे देश को प्रेरित किया, अंग्रेजों से लड़ने का साहस दिया, पर जिनको उन्होंने भारत की राजगद्दी सौंपी, वह एक गलत निर्णय भारत के लिए अभिशाप साबित हुआ। जिसका दुष्परिणाम हमें आज भी भोगना पड़ रहा है। विवेकानंद ने १८९८ में कहा था कि पचास साल में देश आजाद हो जाएगा, पर चीन से हमें सावधान रहना चाहिए, पर नेहरू ने इसे गंभीरता से नहीं लिया। अरविंद ने १९४२ में क्रिप्स मिशन से समझौता करने के लिए कहा था तो गांधीजी ने अरविंद की अवहेलना की। यदि अरविंद की बात पर गौर करते तो भारत का विभाजन व सत्तर-अस्सी लाख लोगों की हत्या नहीं हाती। सत्ता की भूख के कारण विभाजन हुआ, जो कुछ भी हुआ, वह व्यक्तिगत व सामूहिक सत्ता-सुख की कामना से प्रेरित हुआ।

यहाँ भी भारतीय मीमांसा आनंद को पढ़ने पर लगता है कि जिस चीज के पीछे आज जगत् दौड़ रहा है, उसकी तुलना एक भूखे आदमी को भरपेट स्वादिष्ट भोजन मिल जाए, के आनंद जैसा है। तैत्तिरीय उपनिषद् के आठवें अनुवाक में आनंद संबंधी ग्यारह श्लोक हैं। प्रथम श्लोक में आनंद के पहले स्तर का वर्णन है—मनुष्य का पूर्ण यौवन हो, श्रेष्ठ हो, ज्ञानी हो, पुरुषार्थी हो, सुदृढ़ हो, अतिशय बलवान् हो, जिस पृथ्वी पर उसका आवास है, वह धन से पूर्ण हो जाए तथा उस पृथ्वी पर उसका स्वामित्व हो जाए। यह आनंद का पहला स्तर है। इसे मनुष्य आनंद कहा गया है। अब दूसरे स्तर का आनंद संगीत-नृत्य का आनंद है। यह पहले स्तर के आनंद से सौ गुना है। पर उसे कामना के वशीभूत नहीं होना है तथा वेद का विद्वान् होना है। इस आनंद को गंधर्वानंद कहा गया है। इसी प्रकार तीसरे स्तर का आनंद देव गंधर्वानंद है। इसी प्रकार चौथा स्तर पितरलोकानंद है। हमें स्मरण रखना चाहिए कि आज जो हमें सुख-सुविधाएँ प्राप्त हैं, वे हमारे पूर्वजों द्वारा दी गई हैं—कृषि, देवनागरी लिपि, वैदिक साहित्य। इसी प्रकार पाँचवाँ स्तर ज्ञानजदेवों का आनंद है। छठा स्तर कर्मदेवानंद है। सातवाँ शुद्धदेवों का आनंद। आठवाँ इंद्रलोक, नौवाँ बृहस्पति लोक, दसवाँ प्रजापति लोक और ग्यारहवाँ अंतिम सोपान है—ब्रह्मानंद। इन आनंदों का वर्णन गणित के हिसाब से नापने पर यदि पहला स्तर $१०^{१}$ है तो अंतिम स्तर $१०^{२१}$ है। यह वैदिक ऋषियों के आनंद की कल्पना है। एक बार मैंने रामकृष्ण मिशन के अध्यक्ष स्वामी भूतेशानंदजी से पूछा था कि यह माप क्या सत्य है? उन्होंने कहा कि हमारे ऋषियों ने जो कुछ भी लिखा है, उसकी अनुभूति करके लिखा है।

डार्विन के सिद्धांत पर अभी भारत में अत्यंत चर्चा हुई। डार्विन ने जो घोषणा की है, वह श्रमसाध्य है। उनके ज्ञान की हम प्रशंसा करते हैं। पर प्राच्य का डार्विन से मतभेद है। सृष्टि आरंभ होने के पहले केवल ब्रह्मा थे। उनकी इच्छा हुई कि वे एक से अनेक हों। उनकी इच्छा के बल से चार मानस पुत्र हुए—सनत, सनत कुमार, सनंदन व सनातन। सैकड़ों वर्ष बीत गए और उनके भी मानस पुत्र हुए, फिर विवाह शुरू हुआ एवं सृष्टि का विस्तार हुआ। ब्रह्मा के मानस पुत्र आनंद में रहे—पूर्ण कामना रहित। धीरे-धीरे स्तर नीचा होता गया, इसी प्रकार सत्ययुग से त्रेता-द्वापर-कलियुग आए। ऐसा वैदिक युग का मस्तिष्क था। दुर्भाग्य है कि आज हमारे विद्वान् भी वेदों को अप्रासंगिक मानते हैं।

आज हम शिक्षा की चर्चा करते हैं तो भूल जाते हैं कि वैदिक काल में ऐसे आदर्श विद्यार्थी का वर्णन है, जैसे नचिकेता। नचिकेता का यमराज से संवाद अद्‍भुत है। उसकी जिज्ञासा है कि मरने के बाद क्या होता है, अगले जन्म की नींव वर्तमान जन्म में पड़ती है। नचिकेता-यम संवाद श्रेय एवं प्रेय का विश्लेषण करता है। आज यह केवल भौतिक सुखों की दौड़ है। अत: नीरभ मोदी एवं माल्या समाज उत्पन्न करता है। उनपर दया आती है। क्या वे मरेंगे नहीं? क्या अगले जन्म में वे असहनीय पीड़ा नहीं भोगेंगे? ईश्वर क्या उन्हें दंड नहीं देगा? भारतीय न्यायपालिका सारे समाज की तरह पंगु हो गई है। वहाँ पैसे हों तो आजीवन आप मुकदमा लड़ते रहो। एक कचहरी के ऊपर दूसरी, दूसरी के ऊपर तीसरी, तीसरी पर चौथी। इंग्लैंड भागकर वे अपने को सुखी मान रहे हैं। भारत की इंग्लैंड को परवाह नहीं है। क्या जर्मनी का कोई व्यक्ति ऐसा कार्य कर इग्लैंड में रह सकता था? पर कमजोर होने का यह अभिशाप है। वर्तमान जन्म की नींव पूर्व जन्म में पड़ी थी। इसी कारण कोई आइंस्टाइन बनता है तो कोई अशिक्षित रह जाता है। यह कल्पना नहीं, सत्य है। ये जो जालसाजियाँ करते हैं, वे अज्ञानवश इसे कल्पना मात्र समझते हैं। इस अज्ञान के वातावरण के लिए हम जिम्मेदार हैं।

प्रात:काल हो गया। बिस्तर से निकला। सूर्योदय होनेवाला था, पर चंद्रमा आकाश में दिख रहा था। उद्यान में गया। गंधराज—जूही, बेला, चमेली खिली हुई थीं। इनकी सुगंध से ही पवित्रता का भाव जाग्रत् हो जाता है। पेरिस के इत्र की सुगंध भी अत्यंत अच्छी लगती है, पर पता नहीं क्यों, उससे वह भाव उदित नहीं होता। छत पर घूमने के लिए गया। पूर्व में ललाई अत्यंत सुंदर लग रही थी। सूर्य निकलनेवाला था। घूमना समाप्त कर बैठ गया। आकाश में करीब एक सौ चिड़ियों का समूह त्रिकोण आकार बनाकर उड़ रहा था। सुग्गा-चील तरह-तरह के कबूतर, मैना, बटेर उड़ने लगे। प्रभु ने कैसी सृष्टि बनाई है। क्या हम इनके आनंद का अनुभव करते हैं।

सा अ

६३ फ्रेंड्स कॉलोनी ईस्ट,
नई दिल्ली
फोन : ०१२०४३९०३००

छुटकारा

• प्रमोद कुमार सुमन

सुपरिचित साहित्य कार। अब तक 'सेमल के श्वेत परिंदे' (गीत-गजल संग्रह) तथा पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानियाँ निरंतर प्रकाशित। संप्रति स्वतंत्र लेखन।

''काकी! मैं तुमसे कुछ कहना चाहता हूँ।''

लक्ष्मी की माँ ने देखा कि शंकर उसके रास्ते में खड़ा है। पति के जाने के बाद उसकी तेरही बस तीन-पाँच की रस्म अदायगी ही थी। बीड़ी कारखाने की चाकरी के चलते रामनिहोर टी.बी. के आगोश में जा बैठा। खैरात की सरकारी दवा डूबते को तिनके का सहारा थी और वह उम्र का दूसरा पड़ाव भी पार नहीं कर सका। पत्नी और जवान हो रही बेटी को समय के हाथों सौंपकर चलता बना। दरिद्रता और गरीबी की झीनी चादर के भीतर ताका-झाँकी करने हेतु मनचले हमदर्दी जताने का कोई मौका हाथ से जाने नहीं देते थे, लेकिन लक्ष्मी की माँ स्वयं और अपनी बेटी को सहेजने का पूरा जतन करती थी।

उसने एक बार शंकर को घूरकर देखा, फिर पल्लू से चेहरे का पसीना पोंछते हुए प्रश्न दाग दिया, ''कहो, क्या बात है?'' वह अच्छी तरह से जानती थी कि शंकर लंपट किस्म का लड़का नहीं है और कभी कोई ऊँची-नीची बात सुनने में नहीं आई थी। इसलिए उसकी बात सुन लेने में उसे कोई हर्ज नहीं दिखाई दिया।

लक्ष्मी की माँ की सहजता से उत्साहित होकर शंकर बोला, ''तुम्हें तो मालूम ही है कि मेरे घर में कोई रोटी-पानी करनेवाला नहीं है। मैं तो सवेरे ही दुकान पर चला जाता हूँ। अभी तक बाबा कच्ची-पक्की बना लेते थे, लेकिन अब उन्हें ठीक से सूझता नहीं है।''

वह आश्चर्य से बोली, ''तो यह सब मुझे क्यों सुना रहे हो?''

''क्योंकि तुम मेरी मदद कर सकती हो।''

''वह कैसे?''

''तुम लक्ष्मी का हाथ मुझे सौंप दो।''

लक्ष्मी की माँ को लगा कि जैसे किसी ने ठहरे पानी में कंकड़ मार दिया हो। वह जानती थी कि शंकर कामकाजी लड़का है, लेकिन इसके लिए तैयार नहीं थी, सो बिलबिलाकर बोली, ''पागल हुए हो, तुम्हारी बिरादरीवाले हम माँ-बेटी को जिंदा गाड़ देंगे।''

बात बिल्कुल सीधी थी, क्योंकि दोनों ही अलग-अलग बिरादरी के थे। वह शूद्र थी, जबकि शंकर वेदपाठी ब्राह्मण कुल का दीपक था।

उसने तर्क दिया, ''मटरू साब ने पप्पू धोबी की बहन और जोगी मिसिर ने नन्हकी तेलिन को घर बैठा लिया। तब तो बिरादरी वालों ने कुछ नहीं कहा।''

''अरे पगले! उन्होंने ब्याह थोड़े ही किया है।''

''फिर?''

''वे तो उनकी रखैलें हैं।''

''यह भी खूब रही! गैर-बिरादरी की औरतों को लुगाई बनाने में ऊँची बिरादरी की नाक कटती है, लेकिन रखैल बनाने में नाक पर कोई असर नहीं होता है। अजीब नाकबाजी है।''

''मैं यह सब नहीं जानती। जो मेरी समझ में आया, कह दिया। बाकी तुम जानो।'' और बात यहीं समाप्त हो गई।

उसी दिन रात में जब बाप-बेटे खाट पर सोने गए, तो शंकर अपने पिता के पैर दबाने लगा। शंकर का हाथ पैर पर पड़ते ही बुड्ढा उछलकर बैठ गया, मानो उसके पैर पर साँप चढ़ गया हो। वह सनक गया और व्यंग्य भरे लहजे में बोला, ''क्या बात है, आज यह नौटंकी क्यों?''

''बापू, तुमसे कुछ कहूँ...।'' शंकर अटक-अटककर बोला।

''अच्छा बेटा! तो यह पैर भी अपने मतलब से दबाया जा रहा है। बको, क्या बात है?''

''बापू!...मैं...''

''अब बात को रबड़ की तरह लंबा मत खींच। क्या बात है?''

''मैं रामनिहोर काका की लड़की को अपनी जोरू बनाना चाहता हूँ?''

बुड्ढा पैर छुड़ाकर झटके से चारपाई पर बैठ गया और दाँत पीसते हुए बोला, ''क्या बोला? तेरी मति मारी गई है क्या?''

''अब जो भी समझो। मैंने तो फैसला कर लिया है।''

''अच्छी तरह सोच-समझ ले, बेटा। मेरा क्या है। लेकिन तुम इस समाज से कैसे लड़ोगे? बस मेरी यही चिंता है।''

दूसरे दिन शंकर ने दुकान पहुँचकर पिता से हुई बात का ब्योरा अपने मालिक को बताया और आगे कैसे-क्या करना है, इस पर विचार-विमर्श किया।

अगले दिन शंकर अपने बापू और लक्ष्मी की माँ के साथ थाने जा

पहुँचा और सारी बात थानेदार ठाकुर रघुवंश सिंह को बताई। थानेदार ने मुंशी से शंकर की ओर से एक दरख्वास्त तैयार कराई, जिसमें यह आशंका जताई गई थी कि उसके ब्याह में बिरादरीवाले अड़ंगा डालेंगे। शंकर से दरख्वास्त लेने के बाद थानेदार दोनों पक्षों को निश्चिंत करते हुए बोला, ''जब लड़का-लड़की दोनों ही बालिग हैं, तो ऐसी शादी को रोकनेवाले कानून के गुनाहगार हैं।''

लक्ष्मी की माँ बोली, ''यह सब तो ठीक है साहब, लेकिन ब्याह का खर्चा कहाँ से आएगा? मेरे पास तो फूटी कौड़ी तक नहीं है।''

शंकर तपाक से बोला, ''किस खर्चे की बात कर रही हो, काकी? बस तुम दो जोड़ी कपड़ों में अपनी बिटिया को विदा कर देना। मुझे और कुछ नहीं चाहिए।''

''शाबाश शंकर! यदि सभी नौजवान तुम्हारी जैसी सोचवाले हो जाएँ तो जाति-पाँति के बंधन के साथ ही समाज को दान-दहेज की समस्या से भी छुटकारा मिल जाए।'' थानेदार चहककर बोला।

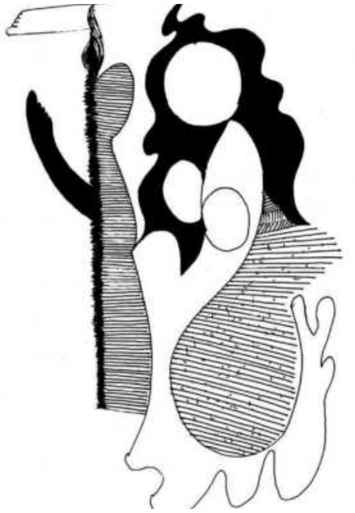

सीधे मुद्दे की बात करता हुआ शंकर बोला, ''यदि ब्याहवाले दिन आप खड़े हो जाते तो सहूलियत हो जाती।''

''ठीक है, मैं छोटे दरोगा को कह दूँगा। वह पुलिस का बंदोबस्त कर देंगे।''

''मेहरबानी साहब!'' शंकर उसके पैर छूता हुआ बोला।

''इसमें मेहरबानी की क्या बात है। शांति और कानून-व्यवस्था बनाए रखना हमारी ड्यूटी है।''

''सही है साहब, लेकिन ऐसा कितने लोग सोचते हैं?''

समय कुलाँचें भरता हुआ भागता रहा। तीन महीने कब बीत गए, पता ही नहीं चला। कैसे पता चलता, ख़ुशी की उमंग भरे दिन जो थे। शंकर पूरे उत्साह में अपनी गृहस्थी बसाने की तैयारी कर ही रहा था, लेकिन ऐसी बातें ज्यादा दिनों तक ढकी नहीं रहती हैं। धीरे-धीरे इसकी चर्चा लोगों की जुबान पर आ गई। कुछ लोग तो चटकारे ले-लेकर ऐसी चर्चा में बढ़-चढ़कर भाग ले रहे थे।

इस पूरी चर्चा का मुख्य विषय लक्ष्मी की सुंदरता और उसकी नवविकसित जवानी होती थी। बात उड़ते-उड़ते थानेदार के कानों तक पहुँची तो वह उसे पचा नहीं सका। उसने अपनी पूरी काबिलीयत का इस्तेमाल करते हुए इस विषय में अपने मातहतों से बात न करके गाँव के चौकीदार से जानकारी लेने का निश्चय किया, क्योंकि ऐसा करने से उसके चरित्र पर सीधे-सीधे कोई उँगली नहीं उठा सकता था। एक दिन मौका ताड़कर उसने चौकीदार से पूछ ही लिया, ''क्यों रे, आजकल गाँव का कोई नया समाचार नहीं बता रहा है?''

''अब क्या बताऊँ, और क्या न बताऊँ सरकार?''

''कोई खास बात है क्या?''

''अब क्या कहें, शंकरवा पगला गया है। रामनिहोरवा की लड़की पर लट्टू होई गवा है।''

थानेदार की बेचैनी हर पल बढ़ती ही जा रही थी, क्योंकि वह जो सुनना चाहता था, उसे चौकीदार नहीं बता रहा था। अतः वह सीधे मुद्दे पर आते हुए बोला, ''ऐसी क्या बात है? क्या शंकर को बिरादरी में कोई लड़की नहीं मिली?''

''अरे सरकार! उसकी बिरादरी में ही क्या, किसी भी बिरादरी में ऐसी सुघड़, सलोनी और सुंदर लड़की नहीं है।''

बात यहीं पर खत्म हो गई, क्योंकि थानेदार का मकसद पूरा हो गया था। अब थानेदार पहले से अधिक गाँव का गश्त लगाने लगा था और उसका ज्यादा समय शूद्रों की बस्ती को खँगालने में ही बीतता था। उसकी कोशिश रंग लाई और एक दिन लक्ष्मी की माँ अचानक उसकी जीप के आगे आ गई। ब्रेक पर पाँव का दबाव बढ़ाते हुए उसने झटके से जीप को रोक दिया और डाँटते हुए बोला, ''देखकर नहीं चलती हो?'' उसने ऐसे जताया, जैसे उसे पहचानता न हो, फिर रंग बदलते हुए बोला, ''अरे, तुम लक्ष्मी की माँ हो न! इधर कहाँ?''

''सरकार, पास ही में मेरा घर है।''

''अच्छा-अच्छा! मैं भी उधर ही जा रहा हूँ। पीछे बैठ जाओ।''

''नहीं सरकार! ज्यादा दूर नहीं है। वह चौथा खपरैलवाला घर अपना ही है।'' इतना कहकर लक्ष्मी की माँ जल्दी-जल्दी पैदल अपने घर की ओर बढ़ गई। थानेदार उसके पीछे धीरे-धीरे जीप चलाता हुआ घर के सामने आ गया। उसने देखा कि घर के बाहर अहाते में एक नवयौवना झुककर झाड़ू लगा रही है। लक्ष्मी की माँ सकुचाते हुए बोली, ''सरकार! यही है लक्ष्मी।'' वह कुछ नहीं बोला, बस टकटकी लगाए लक्ष्मी को घूरता रहा। अपनी ओर किसी को इस तरह देखता पाकर लक्ष्मी घर के भीतर जाने को हुई तो उसकी माँ ने आवाज देकर कहा, ''अरी सुन, थानेदार बाबू को राम-राम तो कर दे। तेरा सब कुछ इन्हीं के सहारे है।''

स्त्रियों को मर्दों की नजर पहचानने की अद्भुत क्षमता ऊपरवाले ने दी है। अपनी ओर थानेदार का इस तरह एकटक घूरना उसे बिल्कुल अच्छा नहीं लगा, फिर भी उसने अनमने ढंग से माँ की आज्ञा का पालन किया और घर के अंदर भाग गई। उस दिन के बाद थानेदार की गश्त कुछ ज्यादा ही बढ़ गई। वह भी खासकर लक्ष्मी के घर की ओर, अब वह दिन में ही नहीं, रात में भी चक्कर काटने लगा था। थानेदार का यह बदलाव लक्ष्मी की माँ से छुपा नहीं रह सका। यद्यपि थानेदार की ओर से ऐसी कोई भी पहल नहीं हुई थी, जिससे ठीक-ठीक कुछ अंदाजा लगाया जा सकता।

फिर भी न जाने क्यों लक्ष्मी की माँ के मन में एक अनजानी

असुरक्षा का बीजारोपण हो गया। वह अब अधिक-से-अधिक समय लक्ष्मी को संरक्षण देने में बिताने लगी। घर के बाहर के सारे काम, जैसे झाड़ू-बुहारू, कुएँ से पानी लाना इत्यादि का जिम्मा उसने स्वयं ले लिया था। उसे हर समय बस एक ही धुन लगी रहती कि किसी तरह लक्ष्मी का ब्याह हो जाए तो वह गंगा नहा ले। इसके लिए उसने कई बार शंकर से टोका-टाकी भी की। किंतु शंकर पैसों की तंगी का हवाला देकर उसका मुँह बंद कर देता था।

इसी उधेड़बुन में धीरे-धीरे आठ महीने बीत गए। लक्ष्मी के माँ की सतर्कता धीरे-धीरे ढीली पड़ती जा रही थी, क्योंकि थानेदार भी कम घाघ नहीं था। उसने लक्ष्मी की माँ के बदलते व्यवहार को ताड़ लिया और अपने उतावलेपन की डोर को ढील दे दी।

एक दिन भोर के समय गाँव में जाग हो गई। शोरगुल के कारण कुछ समझ में नहीं आ रहा था। बस पूरा-का-पूरा गाँव रामनिहोर के घर की ओर भागा जा रहा था। इसी शोरगुल में एक आवाज आई, ''अरे, थानेदार का कत्ल हो गया!'' पूरा गाँव रामनिहोर के घर के चारों ओर जमा था। बीच में थानेदार की लाश पड़ी थी और उसके ठीक बगल में लक्ष्मी खून से सनी कुल्हाड़ी लेकर खड़ी थी।

गफ़ूर खाँ की गली,
वासलीगंज, मिर्जापुर-२३१००१
दूरभाष : ९९३५४५९५५०

दोहे

अंधकार के वक्ष को…

• दिनेश भारद्वाज

सुपरिचित कवि। 'जन्म और जिंदगी', 'तृष्णा से तृप्ति तक' (काव्य-संग्रह), 'एकात्म' (दोहा-संग्रह) पत्र-पत्रिकाओं में रचनाओं का नियमित प्रकाशन। साहित्य साधक सम्मान एवं 'राष्ट्रभाषा' सम्मान सहित कई संस्थाओं द्वारा सम्मानित एवं पुरस्कृत।

धरती के आँसुओं में, नभ का नीला घोल।
लिखती है मानव कथा, कवि की कलम अमोल॥

कलाकार की तूलिका, कवि के कोमल छंद।
मोह पाश में बाँधती, कमल रूप रस गंध॥

शब्द शक्ति से लड़ रहे, यहाँ कलम के वीर।
तम की स्याही से लिखें, सूरज की तकदीर॥

तोप आणविक बम सभी, हो जाते बेकाम।
जब कोई साधक सृजन, करता युग के नाम॥

यवन आमगन से किया, अंग्रेजों तक युद्ध।
सृजित हुई साहित्य में, राष्ट्रभक्ति ही शुद्ध॥

दोनों दाएँ हाथ के, होते हैं हथियार।
जीवन देती है कलम, और मृत्यु तलवार॥

अंधकार के वक्ष को, फाड़ लेखनी धार।
बने नई युग चेतना, लेखन विश्व विचार॥

राजा की जननी प्रजा, शोषित रहती मौन।
याचक बनता सृजन तो, महिमा मंडित कौन॥

कथा ग्रंथ साहित्य के, चुन उपयोगी सार।
हंस वृत्ति से कीजिए, नीर-क्षीर व्यवहार॥

संबल दे संघर्ष में, दुःख में देता धीर।
सृजन सिद्धि साहित्य का, पत्थर खिंची लकीर॥

कला सृजन में गूँथ लो, मानव का उत्थान।
लोभ-पाप का स्वयं ही, मर्दित होगा मान॥

शब्द रूप स्पर्श रस, गंध अतींद्रिय वेश।
करता है साकार कवि, सांस्कृतिक परिवेश॥

भाषा से सौरभ झरे, और भाव मकरंद।
अर्थ पराग विचार से, नौ रस पल्लवित छंद॥

रचना रचनाकार की, नए नियम की खोज।
अपनी-अपनी शैलियाँ, अपने-अपने ओज।

साहित्यिक हर बिंब में, सांस्कृतिक परिवेश।
संस्कृति गौरव गान से, मूल्यवान् हो देश॥

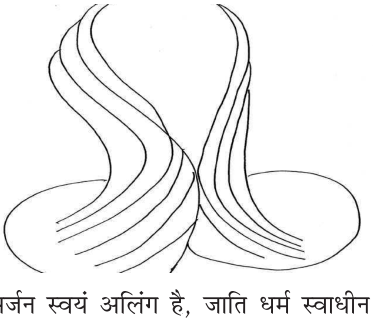

सर्जन स्वयं अलिंग है, जाति धर्म स्वाधीन।
उसका सृजन स्वरूप है, संस्कृति के आधीन॥

विकसित होती सभ्यता, विकसित हो अनुभूति।
विकसित हो अभिव्यक्तियाँ, कवि की नई प्रसूति॥

सृजन शक्ति से कीजिए, विषाक्तता का ध्वंस।
सद्भावी शालीनता, मिटे पतन का वंश॥

बने पखेरू कल्पना, उड़े शून्य आकाश।
तब उसको नव चेतना, देती है वातास॥

संस्कृति का पर्यावरण, बने प्रदूषण मुक्त।
त्याग सभी प्रतिबद्धता, लेखन हो उन्मुक्त॥

स्वतंत्रता अभिव्यक्ति की, मूल्यवान् है आज।
किंतु रखे स्वछंदता, मर्यादा की लाज॥

चित्रकार की तूलिका, सृजनशील का भाव।
मूर्तिकार की छेनियाँ, झेलें सभी अभाव॥

धड़कन होती समय की, भाषा औ' संघर्ष।
विकासोन्मुखी चेतना, साहित्यिक उत्कर्ष॥

राष्ट्रीय औ' विश्व की, संस्कृति के सापेक्ष।
मूल्यात्म की वरीयता, रचनात्मक निरपेक्ष॥

अंधे को आँखें मिलें, और मूढ़ को ज्ञान।
यही सृजन का धर्म है, साहित्यिक अवदान॥

एम.एस. रोड जौरा
जिला-मुरैना (म.प्र.)
दूरभाष : ९९०७०३३२८२

लघुता में एक महामानव : बालकवि बैरागी

● अशोक चक्रधर

'हैं करोड़ों सूर्य लेकिन सूर्य हैं बस नाम के,
जो न दें सबको उजाला, सूर्य वे किस काम के!'

कविवर बालकवि बैरागी निरंतर गूँज रहे हैं। गूँज रहा है लघुता में एक महामानव। उस विराट् की अनुगूँज सुनाई दे रही है। अनुगूँज उनकी गगनचुंबी कविताओं की, उनकी लोकप्रियता की, बिन माँगे की तालियों की, हिंदी के प्रबलतम समर्थन की। अनुगूँज यारानापूर्ण यायावरी की, आवारा फक्कड़पन की, दूसरों को परास्त करनेवाली हँसी की, बुक्काफाड़ ठहाकों की, भावनाजन्य निर्भीकता की, विदेशी शत्रु के प्रति हुंकार की, देशी के प्रति प्यार की। अनुगूँज की भी अनुगूँजें सुनाई दे रही हैं, लगभग छह दशक के सान्निध्य की स्मृतियों की अनुगूँजें।

(१०-२-१९३१—१३-५-२०१८)

मेरे पिता श्री राधेश्याम प्रगल्भ को वे अपना बड़ा भाई मानते थे। वे हमारे घर आते थे। हम जिन-जिन शहरों में रहे, वे घर आए—खुर्जा, हाथरस, मथुरा और दिल्ली, कोई भी शहर रहा हो। वे कहीं भी रहे, हम उनके घर गए—मनासा, नीमच, भोपाल और दिल्ली। दरअसल, हमारे घुमंतू घरों में कवियों का आना-जाना निरंतर रहता था। बैरागी चचे, काका हाथरसीजी और मेरे पिताजी छोटी-छोटी बातों पर खूब हँसा करते थे। और उनके हास्य का कारण चलित-प्रचलित लतीफे नहीं होते थे, बल्कि वे लतीफे बनाते थे, गढ़ते थे। प्रत्युत्पन्न मतियाँ गतिपूर्वक संवाद करती थीं। वे जो कह देते थे, हास्य का नया प्रकार बन जाता था। कविता में तरह-तरह के वाद उन्होंने चलाए, जैसे पर्यायवाद, वर्णविपर्ययवाद। खेलो शब्दों के साथ, नए गढ़ो। शब्दों के आगे-पीछे विशेषण-उपमान मढ़ो। वर्णों का क्रम बदल दो। शब्दों को नई अर्थवत्ता दे दो। अर्थों को नए शब्द दे दो। सिर्फ दो नहीं तीन-तीन चार-चार दे दो। बैरागीजी पूछते हैं मेरे पिता से, कहाँ हो? पिताजी उत्तर देते हैं, व्योम के, आकाश के, नीले गगन में! काकाजी पूछते हैं, वहाँ कौन मिलौ? उत्तर मिला, एक विद्युत्, एक बिजली, दामिनी थी। बैरागीजी पुनः पूछते हैं, महल के, प्रासाद के, ऊँचे भवन में कौन था? पिताजी कहते हैं, एक महिला, एक रमणी, कामिनी थी। काकाजी सराहना में छड़ी उठा लेते हैं, पिटौगे दोनों! काकाजी मुसकराते हैं, शेष दो ठहाके लगाते हैं।

काकाजी मेरे पिता को बेटा राधेश्याम कहते थे। बैरागीजी काकाजी को गोद लिये हुए पिताजी कहते थे। वर्ण-विपर्यय का खेल चला तो सबके नाम बदल गए। काका हाथरसी, हाका काथरसी हो गए। राधे श्याम प्रगल्भ, प्रादेशाम रगल्भ हो गए। बाल कवि बैरागी, काल बबी गैराबी हो गए। फिर मिलते तो परस्पर इन्हीं नामों से संबोधित भी करते। हाँ, काथरसी जी! सुना रगल्भ! हाँ, गैराबी बोल! यहाँ तक तो ठीक, कुछ भदेस प्रयोग भी कर लेते थे, उन पर तो और ज्यादा हँसते थे। समझ की सीमा के कारण मेरे किशोर मन को पता नहीं कैसा लगता था। जैसे लोहे के पुल को पोहे का लुल कहते थे। काकाजी विकट शब्द-शोधी थे। उन्होंने वर्ण-विपर्यय, नाम-विपर्यय, काम-विपर्यय की अनेक कविताएँ रचीं। उन्नीस सौ सत्तावन में अठारह सौ सत्तावन के मुक्ति-संग्राम की शत-वार्षिकी मनाई जा रही थी। लाल किले के कवि-सम्मेलन में काकाजी ने वीररस में हास्य घोल दिया। 'युद्ध-भूमि में मैंने मुर्दे पटक-पटककर दे मारे। इतनी ताकत है मेरी इस टूटी हुई कलाई में, आज्ञा दें तो आग लगा दूँ फौरन दियासलाई में। लालकिले का घंटाघर मेरे धक्के से टूटा है।' मैंने बैरागीजी को कहते हुए सुना लालकिले का धक्काघर, मेरे घंटे से टूटा है। मैंने मंच के पीछे दबे-घुटे, कम आवाज के अथमनीय ठहाके सुने हैं।

स्मृतियों से स्मृतियाँ जुड़ी हैं। सन् चौंसठ या पैंसठ की बात होगी, लालकिले के कवि-सम्मेलन के अगले दिन इंडियन एक्सप्रेस में खबर छपी, *कवि-सम्मेलन वाज स्टार्टेड बाई ए चाइल्ड पोएट अशोक शर्मा, अनदर चाइल्ड पोएट बैरागी ऑल्सो रिसाइटेड हिज पोयम्स।* मैं तो बालकवि था ही, बैरागीजी मुझसे दो दिन कम बीस साल बड़े थे, उनके नाम के बालकवि को भी चाइल्ड पोएट कर दिया। अखबार बैरागीजी ने ही मुझे दिखाया था। अब तक है मेरे पास वह कतरन।

नाम तो उनका नंदराम था। बालकवि बैरागी कैसे हुआ, डॉ. वेदप्रताप वैदिक ने बताया कि तब की बात है जब बैरागीजी मुश्किल से आठ-नौ बरस के रहे होंगे। जावरा के कैलाशनाथ काटजूजी ने, जो बाद

में गृहमंत्री रहे, बालक से कहा, कोई कविता सुनाओ! बालक नंदराम ने राष्ट्रप्रेम की ऐसी जबरदस्त कविता सुनाई कि वे ही नहीं, आसपास के सब लोग गद्गद हो गए! काटजू बोले, अब से इस लड़के का नाम होगा—बालकवि बैरागी।

बैरागीजी के बचपन में गरीबी गूँजती थी। अपने दिव्यांग पिता को चार छोटे-छोटे पहियों की गाड़ी पर बिठाकर वे रस्सी से खींचते थे, और टीपदार स्वर में देशभक्ति के गीत गाते थे। लोग कटोरे में सिक्के डाल देते थे। उनसे घर का खर्च और स्वाभिमान से उनकी पढ़ाई चलती थी। अपनी गरीबी का गौरवीकरण करने में उन्हें अंत तक कोई संकोच नहीं हुआ। मँगता से मिनिस्टर होने की अपनी गाथा गर्व से सुनाते थे।

जब मैं किशोर से युवा होने की दहलीज पर था, तब हमने एक प्रिंटिंग प्रेस लगाई थी। कम पूँजी में बढ़िया काम करने के संकल्प के साथ उसका नाम पिताजी ने 'संकल्प प्रेस' रख दिया था। शुरू के कुछ महीने जॉबवर्क किया। मैंने कंपोजिंग सीखी, छोटे भाई ने मशीन से कागज उठाना। हमने जो पहली किताब प्रकाशित की, वह थी बालकवि बैरागीजी की 'दादी का कर्ज'! अभी मैं जब समाचार-पत्रों में उनकी प्रकाशित पुस्तकों की सूची पढ़ रहा था, तो हैरान रह गया। दादी का कर्ज कहाँ गई? वह पुस्तक तो मैंने खुद कंपोज की थी! उसका कवर दुरंगी था। मथुरा के एक कलाकार ने बनाया था। दो ब्लॉक बने थे। लाल और आसमानी रंग में दो बार छपाई हुई थी। एक चित्ताकर्षक पुस्तक लेकर मैं प्रकाशक और सप्लायर के तौर पर भोपाल पहुँचा। तब वे नए-नए मंत्री बने थे। पिताजी को आशा थी कि यह किताब सरकारी खरीद में आ जाएगी, अब तो मंत्री बन गए हैं। खैर, मैं भोपाल गया तो खूब आवभगत हुई। मिलनेवालों की भीड़ को छोड़कर वे मुझे अंदर अध्ययन-कक्ष में ले गए। पुस्तक देखकर बेहद प्रसन्न हुए। मुझे उन्होंने अपनी आनेवाली फिल्म 'रेशमा और शेरा' का गीत उसी धुन में सुनाया, जो बाद में हमने फिल्म में सुना—तू चंदा मैं चांदनी...।

मैं पहाड़ी पर उनके बँगले में दो दिन रुका। पेड़ों से घिरे हुए, ऊँचाई पर बने उस बँगले में चाचीजी ने बड़ा स्नेह दिया। उनके बड़े पुत्र मुन्ना और छोटे गोर्की के साथ भी खूब खेले। वे दोनों मुझसे छोटे थे। बहुत अच्छा लगा। शानदार विदाई के साथ मैं मथुरा लौट आया। कुछ दिन के बाद पिताजी के पास बैरागीजी का पत्र आया कि क्योंकि अब मैं मंत्री हो गया हूँ, इसलिए सरकारी खरीद में अपनी किताब का प्रस्ताव नहीं रख सकता। कोई और रखेगा तो समर्थन नहीं करूँगा। आप मध्य प्रदेश में नहीं किसी और प्रांत में प्रयत्न करें। पिताजी भी घर-फूँक, तमाशा देख संप्रदाय के थे। उन्होंने कहीं और प्रयास किया हो, मुझे याद नहीं पड़ता। वह पुस्तक उदारता से बाँट दी गई। दोबारा छपी नहीं। शायद इसीलिए सूची में उस पुस्तक का नाम नहीं आया। बिना अपनी पूरी उम्र पाए काल के चक्र में समा गई। मुन्ना और गोर्की से पूछूँगा, एक प्रति तो हो शायद उनके पास।

फिर तो उनके साथ सैकड़ों कवि-सम्मेलन किए। उनके

हिंदी व्यंग्य-लेखन के सशक्त हस्ताक्षर, कविताओं के मंच की शोभा, अनेक पुस्तकें प्रकाशित, बहुप्रशंसित, अनेक ख्यातनाम सम्मानों से सम्मानित। हिंदी अकादमी, दिल्ली तथा केंद्रीय हिंदी संस्थान के उपाध्यक्ष रहे। विगत तीन दशकों से विभिन्न संचार माध्यमों में सक्रिय।

पोस्टकार्ड्स और अंतरदेशी पत्र मेरे पास भी आते रहे। ऊपर लिखते थे 'माँ'। सुंदर-सुंदर मोती जड़े अक्षर। हृदय से निकले अक्षर। हृदय में प्रवेश करने की क्षमता रखनेवाले अक्षर।

अस्सी के आसपास मैंने एक व्यंग्य-कविता लिखी थी—'अपना देश तो महान् है।' उसकी शुरुआत कुछ इस तरह करता था, 'हमारे मित्र शार्दूल सिंह विक्रीड़ति, देश की दशा से बहुत पीड़ति! मैंने कहा, इन बहते पनालों को रोकिए, आँसुओं को अंदर ही सोखिए! वे बोले, भैया अशोक! इन आँसुओं को मत रोक!' कविता लंबी थी। ये बात मैंने आपको इसलिए बताई कि पिछले पैंतीस सालों में चचे बैरागी मुझे जब भी मिलते थे, दु:ख की नाटकीय मुद्रा बनाकर चहकते हुए कहते थे, भैया अशोक! इन आँसुओं को मत रोक! मैं हँसकर उनके पैर छूता था। बीच में कुछ दिन उन्होंने ऐसा नहीं किया, जब चची बीमार थीं और उनसे मिलने मैं ऑल इंडिया मेडिकल इंस्टीट्यूट जाता था। आदरणीया चची को कैंसर था। रोग ने हरा दिया, वे चली गईं। मैंने पहली बार चचे को रोते देखा। मेरी आँखें भी आँसुओं से भरी थीं। इस बार उन्होंने पहली और अंतिम बार दु:खी स्वर में गले लगाते हुए कहा था, बेटा अशोक! इन आँसुओं को मत रोक! हम दोनों के पास रुमाल नहीं थे।

अभी पिछले साल, सन् दो हजार सत्रह के नवंबर महीने की ग्यारह तारीख को उनसे उदयपुर के कवि-सम्मेलन में भेंट हुई थी। संवाद अपने मूल नाटकीय रूप में बहुत पहले ही आ चुका था, इस बार भी चंचलता के साथ मुखरित हुआ, भैया अशोक! इन आँसुओं को मत रोक! आवाज में वही खनक, सम्मोहन और प्रेम का जादू। हालाँकि चची के गोलोक-गमन के बाद से उन्होंने गाना छोड़ दिया था, पर स्वर में नाटकीयता की चुंबक थी। घुटने के दर्द के कारण बैठकर, लेकिन घंटे भर कविताएँ सुनाईं। वाणी की ऊर्जा में कोई कमी नहीं थी। उनकी कविताएँ, हमेशा लगेगा जैसे आज भी खड़ी हैं समय के श्रोताओं के सामने! इस इंटरनेट के जमाने में भी डाक विभाग का भला करते रहे अंत तक। खादी परिधान और खादी के झोले में खूब सारे पोस्टकार्ड रखते थे।

सकर्मक क्षमताओं के बावजूद कितनी सहजता से वे चले गए। किसी कार्यक्रम से घर लौटे थे। परिवार के साथ गप-गोष्ठी की। भोजन किया और सो गए। देर तक नहीं उठे तो पुत्र ने जगाने की कोशिश की। उनकी लाडली पौत्री रौनक ने भी उन्हें हिलाया, लेकिन वे तो जा चुके थे मेरी चची को गाकर गीत सुनाने।

वे चले गए। धरती पर उनके अपार आत्मीयों के आसपास उनके असंख्य संस्मरण गूँज रहे होंगे। हिंदी भवन में एक श्रद्धांजलि सभा हुई। प्रारंभ में ही संचालक चिराग जैन ने उसी दिन लिखी अपनी एक कविता सुनाई—

शब्दों को ईंधन करने का
जीवट ठंडा होता है क्या?
ज्वाला में दहकर भी कंचन
अपनी आभा खोता है क्या?
यम के आदेशों से डरकर
कब कीर्तियान रुक पाते हैं,
कुछ श्वासों के थम जाने से
क्या झंझावात चुक जाते हैं?
मिट्टी को भस्म बना देना
बस यही चिता कर पाती है,
अक्षुण्ण वज्र रह जाता है
औ' स्वयं चिता मर जाती है।
काया ने आँखें मूँदी हैं
चिंतन के नेत्र प्रखर ही हैं,
जिह्वा ने चुप्पी ओढ़ी है
भावों के शब्द मुखर ही हैं।
दीपक की पीर समझने को
बलिदान कई रातें करके,
जो थका नहीं क्षण भर को भी
नक्षत्रों से बातें करके।
जिसने जर्जर पीड़ाओं को
समिधा का मान दिलाया हो,
जिसने जग की तृष्णाओं को
अंजलि से अमिय पिलाया हो,
जिसने कविता में जीवनभर
अनहद का अंतर्नाद रचा,
जिसने ज्वाला की लपटों का
कविताओं में अनुवाद रचा।
जिसने आँसू की आह सुनी
जिसने करुणा का रोर सुना,
जिसने युग की पीड़ा गाई
जिसने आशा का शोर सुना,
यमदूत उसे ले जाने का
उपक्रम कैसे कर सकता है!
जिसने शब्दों में प्राण भरे
वह स्वयं कहाँ मर सकता है!
करुणा में जब पग जाते हैं
फिर अक्षर ध्वस्त नहीं होते,
सूरज-वूरज होते होंगे,
बैरागी अस्त नहीं होते।

संवाद अपने मूल नाटकीय रूप में बहुत पहले ही आ चुका था, इस बार भी चंचलता के साथ मुखरित हुआ, भैया अशोक! इन आँसुओं को मत रोक! आवाज में वही खनक, सम्मोहन और प्रेम का जादू। हालाँकि चची के गोलोक-गमन के बाद से उन्होंने गाना छोड़ दिया था, पर स्वर में नाटकीयता की चुंबक थी। घुटने के दर्द के कारण बैठकर, लेकिन घंटे भर कविताएँ सुनाईं। वाणी की ऊर्जा में कोई कमी नहीं थी। उनकी कविताएँ, हमेशा लगेगा जैसे आज भी खड़ी हैं समय के श्रोताओं के सामने! इस इंटरनेट के जमाने में भी डाक विभाग का भला करते रहे अंत तक। खादी परिधान और खादी के झोले में खूब सारे पोस्टकार्ड रखते थे।

प्राय: किसी श्रद्धांजलि सभा में ऐसा नहीं देखा गया कि किसी के उद्‍बोधन के बाद तालियाँ बजें, लेकिन चिराग ने इतने ढंग से अपनी बात कही कि स्वत:स्फूर्त तालियाँ नहीं रुकीं। वाचिक परंपरा की कविता की यही तो ताकत है कि हर मर्मस्पर्शी कविता पर तालियाँ बजती हैं। शोक की मनोभूमि पर भी हम तालियाँ बजा सकते हैं। चिराग ने अपने शब्दों में सजीव कर दिया बैरागीजी के व्यक्तित्व को। सूरज-वूरज होते होंगे, बैरागी अस्त नहीं होते।

रह-रहकर गूँज रही हैं बैरागीजी की शब्द-ध्वनियाँ—हैं करोड़ों सूर्य लेकिन सूर्य हैं बस नाम के, जो न दें सबको उजाला, सूर्य वे किसे काम के।

अनेक नामचीन कवि थे उस श्रद्धांजलि सभा में। सभी ने अपने-अपने संस्मरण सुनाए। अंत में डॉ. गोविंद व्यास ने सारगर्भित बातें कहीं कि बैरागीजी दिनकरजी के बाद उदात्त कविता के प्रथम पंक्ति के हस्ताक्षर थे। हिंदी के मंच पर वे पहले ऐसे कवि थे, जिन्होंने कविता को परफॉर्मिंग आर्ट के बहुत निकट ला दिया था। उन्हें मालूम था कि किस माहौल में कैसी कविता सुनानी चाहिए। किसकी तरफ देखकर सुनानी चाहिए। माइक से कितना पीछे हटकर बोलना चाहिए। कौन व्यक्ति नहीं सुन रहा है, इसकी उन्हें पहचान थी। कौन अच्छी तरह सुन रहा है, इसकी उनको अच्छी जानकारी थी। सही कहा गोविंद भैया ने।

हमारी वाचिक परंपरा को गति देनेवाले, मति देनेवाले अचानक इति तक चले जाएँगे, ऐसा किसी ने सोचा भी नहीं था। वहाँ एक यति है, विराम, अर्धविराम के बाद भी चीजें चलेंगी। एक ऐसा व्यक्तित्व, जो लघुतम में महत्तम था। वे बड़े थे, लेकिन अपने बड़प्पन को दिखाने के स्थान पर सदैव धरती से जुड़े रहते थे। नैतिक आदर्शों में चूक नहीं होती थी। एक साफगोई के साथ आत्मीयता के सारे अलिखित नियमों का पालन करते हुए वे लोगों के अपने हो जाते थे। बारंबारता के साथ गूँज रहा है, लघुता में एक महामानव।

सा अ

जे-११६, सरिता विहार, मथुरा रोड,
नई दिल्ली-११००४४
इ-मेल : chakradhar@gmail.com

दिन बदल गए हैं

● कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'

जन्म से ही दृष्टिहीनता की शिकार, सुपरिचित वरिष्ठ लेखिका। लघुकथा, कविता, संस्मरण आदि की पाँच पुस्तकें, कुछ साझा संकलन तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में तीन सौ से ज्यादा रचनाएँ प्रकाशित। छोटे-बड़े आधा दर्जन से अधिक सम्मान प्राप्त। साहित्य मंडल, श्रीनाथद्वारा से सम्मानित। संप्रति सतत लेखन में रत।

आस

मेरे पास था दीया
बाती और घी
लेकर घूमी
गली-गली,
इस आस में
कि कोई अपने दिये से
मेरा दीया जलाएगा,
पर सबकी आँखों में खटकता रहा
मेरा दीया
भला इसे क्या वास्ता
दीया जले या बुझे,
सच कहूँ
रोशनी का वास्ता
घर की मुँड़ेरों से नहीं
भीतर से भी जुड़ा है।

अंधी दौड़

हम अँधेरे में रहकर भी
जिंदा रखते हैं रोशनियों को,
एक आप हैं कि थकते नहीं
मुट्ठियाँ भर-भरकर
आँखों में धूल झोंकना
उँगली पकड़ राह दिखाने के बजाय
गुमराह कर देते हैं।

हमारे साथ जोड़ा गया
'अंध' शब्द,
लेकिन आँखवाले भी
तो शामिल हैं
आज की 'अंधी दौड़' में
हम तो फिर भी फूँक-फूँककर
कदम रखते हैं
और आप हैं कि बेतरतीब हो
हमसे ही टकरा जाते हैं।

हम सब

साल महीनों में
महीने सप्ताहों में
सप्ताह दिनों में
दिन घंटों में
घंटे मिनटों में
विभक्त हो जाते हैं न,
इसी तरह
विश्व देश में
देश शहर में
शहर कसबे में
कसबा गाँव में

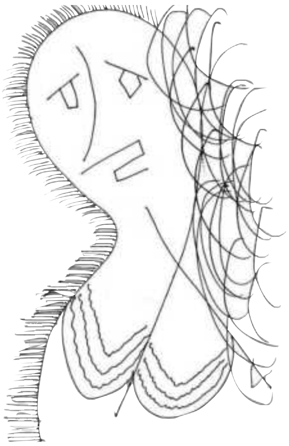

गाँव सड़कों में
सड़कें गलियों में
गलियाँ पगडंडियों में
न बँट-बँटकर
मुड़ गई होतीं तो!
ऐसा होता बंधु
सब हम में
हम तुम में
तुम सिर्फ
'मैं' न बन गया होता।

बीत गया बचपन

हथेली फैलाकर
कभी तुम्हारे
आगे नहीं रखी,
पीठ पीछे
हथेलियाँ रगड़
बीत गया बचपन!

तुम्हारे घर
लौटने पर
कभी पैरों से
नहीं लिपटा शिशु-मन
किवाड़ों के
पिछे दुबककर
बीत गया बचपन!

टूटी खपरैल से
आती रही किरण
बासी हवा में
घुटता रहा दम
बंद खिड़कियों पर
सिर टेके
बीत गया बचपन!

दिन बदलेंगे

दिन बदलेंगे
जरूर बदलेंगे,
नन्हीं मुट्ठियाँ
हवा में कस गईं।
प्यार से
एक-एक मुट्ठी को
चूमते हुए कहा—
खोल लो
अपनी बंद मुट्ठियाँ!
दिन बदल गए हैं
तुम्हें मालूम नहीं?

गीली आँखें कह रही हैं
काले होंठ कह रहे हैं
बदले हुए दिनों के
बोझ से चटके कंधे
कह रहे हैं,
पहले यह सब कहाँ था?
दिन बदल ही तो रहे हैं
दिन बदल गए हैं।

सा अ

'शिवनंदन' ५९५ वैशाली नगर
(सेठीनगर), उज्जैन-४५६०१० (म.प्र.)
दूरभाष (०७३४) २५२५२७७

आलेख

क्या मृत्यु का पूर्वाभास संभव है

● आनंद शर्मा

जाने-माने साहित्यकार। अब तक विभिन्न विषय पर आठ पुस्तकें; विभिन्न सेमिनारों में तीन दर्जन से अधिक शोधपत्र तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में सात हजार से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। लगभग दो दर्जन सम्मान व पुरस्कार प्राप्त। संप्रति स्वतंत्र पत्रकार-साहित्यकार।

महाभारत के प्रसिद्ध यक्ष-युधिष्ठिर संवाद में यक्ष का प्रश्न होता है, ''सबसे बड़ा आश्चर्य क्या है?''

युधिष्ठिर का उत्तर था, ''मृत्यु सुनिश्चित होने पर भी हर कोई समझता है कि शायद उसकी मृत्यु नहीं होगी। यही सबसे बड़ा आश्चर्य है।''

आज यक्ष का प्रश्न होता, ''सबसे बड़ा मित्र कौन है?''

युधिष्ठिर का उत्तर होता, ''मृत्यु, जो जन्म के साथ ही छाया की तरह चलती हुई अंत तक साथ निबाहती है। छाया तो फिर भी अंधकार में साथ छोड़ देती है; लेकिन मृत्यु किसी भी स्थिति में साथ नहीं छोड़ती। उसे ही सबसे बड़ा सहचर और मित्र कहा जा सकता है।''

लेकिन यह अर्धसत्य ही होता। प्रत्यक्ष रूप से प्रत्येक प्राणी की निश्चित मृत्यु दिखाई देती है। राम, कृष्ण जैसे अवतारी भी इससे नहीं बच पाए। यथासमय वे भी दैहिक मृत्यु को प्राप्त हुए थे।

लेकिन कृष्ण तो अर्जुन को उपदेश देते हुए कुछ और ही कहते हैं कि तेरे और मेरे अनेक जन्म हो चुके हैं। तुझे उनकी स्मृति नहीं है, किंतु मुझे उन सबका स्मरण है। अर्थात् व्यक्ति बार-बार जन्म लेता रहता है।

कृष्ण का यह कथन महाभारत के शांति पर्व में एकदम जीवंत होकर प्रमाण बन जाता है। उस महायुद्ध में अठारह अक्षौहिणी सेना और योद्धाओं में से पाँचों पांडव तथा कृष्ण ही जीवित बचे थे। कौरव पक्ष से अश्वत्थामा, कृपाचार्य और कृतवर्मा ही बचे थे। यानी पचास लाख से अधिक विधवाएँ क्रंदन करने के लिए अभिशप्त हो गई थीं। हस्तिनापुर में राजकुल की हजारों स्त्रियाँ, कौरवों की सौ विधवाओं के साथ आर्तनाद कर रही थीं। इससे द्रवित महर्षि कृष्ण द्वैपायन व्यास ने उन्हें रात्रि में गंगा तट पर आने के लिए कहा। वहाँ अपनी तप-शक्ति के द्वारा युद्ध में मारे गए वीरों का आह्वान किया तो वे भी अपने-अपने लोकों से वहाँ आ गए। वहाँ उनकी स्त्रियों, माताओं, बहनों आदि ने उनके साथ वार्त्तालाप किया। जन्मांध धृतराष्ट्र और गांधारी को भी महर्षि व्यास ने दिव्य नेत्र देकर अपने मृत पुत्रों को देखने का अवसर दिया। रात्रि भर साथ रहने के बाद प्रात: की किरण के साथ वे अपने-अपने लोकों को लौट गए।

इससे स्पष्ट होता है कि वे सब मरे नहीं थे। उन्होंने सिर्फ देहत्याग किया था। वे कर्मानुसार प्राप्त लोकों में प्रेमपूर्वक रह रहे थे।

भारतीय दर्शन के दो मूलाधार ग्रंथ हैं—'आगम' और 'निगम'। आगम यानी तंत्र और निगम अर्थात् वेद। वेद के द्वारा तो परमात्मा के स्वरूप को जाना ही जा सकता है, किंतु तंत्र के द्वारा उसका साक्षात्कार भी किया जा सकता है। किसी भी देवी-देवता को प्रत्यक्ष बुलाकर उनसे वांछित कार्य भी करवाया जा सकता है।

वह तंत्र शास्त्र अर्थात् आगम मृत्यु को असत्य कहता है। उसके अनुसार सृष्टि और उसके प्रत्येक जीव का निर्माण 'पंच महाभूतों' से हुआ है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश मिलकर एक पिंड का निर्माण करते हैं। उसमें आत्मतत्त्व प्रविष्ट होकर उसे जीवंत कर देता है। समय आने पर वह तत्त्व निकल जाता है। निर्जीव पिंड पुन: पंच महाभूतों में विखंडित हो जाता है। उसे जलाकर, गाड़कर, मांसाहारी पक्षियों का भोजन बनाकर यही काम तो किया जाता है। समय आने पर वे फिर पिंड का निर्माण करते हैं। आत्मतत्त्व प्रविष्ट होकर उसे जीवंत कर देता है। यही चक्र चलता रहता है।

अब इसमें नष्ट क्या हुआ? कुछ भी तो नहीं। बस, रूप बदल गया। इसलिए आगम में मृत्यु को असत्य कहा गया है।

मानव देह का तो चलो विभिन्न तरीकों से निपटारा कर दिया। उनके पालतू पशु-पक्षियों को भी इसी तरह ठिकाने लगा देते हैं। लेकिन जंगल के पशु-पक्षी भी तो अपनी देह त्यागते ही हैं। उन्हें कौन ठिकाने लगाने आता है? फिर तो जंगल में जगह-जगह मृत पशु-पक्षी मिलते रहने चाहिए। लेकिन ऐसा होता नहीं। सभी प्राणी तो एक-दूसरे का आहार नहीं होते। उनमें से बहुत सारे वृद्धावस्था तक पहुँचकर अपनी स्वाभाविक मृत्यु को प्राप्त होते ही हैं। लेकिन क्या कभी किसी ने प्राकृतिक मृत्यु प्राप्त वन्य प्राणी को देखा है? जंगल की बात छोड़ें, शहर में ही हजारों पक्षी उड़ते रहते हैं। वे भी तो मरते ही हैं। दुर्घटना में मरे पक्षी की बात जाने दें। स्वाभाविक मृत्यु प्राप्त कोई पक्षी कभी देखने में आया हो तो बताएँ।

स्पष्ट है, मृत्यु का पूर्वाभास हो जाने पर वह अपने झुंड से अलग

होकर एक निश्चित स्थान पर चला जाता है और वहीं उसकी मृत्यु हो जाती है। हाथी, शेर, गैंड़ा जैसे विशालकाय प्राणियों को कौन मार सकता है? मरते तो वे भी हैं। फिर उनके भी शव क्यों नहीं मिलते। वर्षों पूर्व पढ़ा था कि दक्षिण अफ्रीका में अन्वेषकों ने हाथियों का कब्रिस्तान खोजा है। वहाँ ढेर सारे हाथीदाँत मिले हैं। मृत्यु का पूर्वाभास होने पर वह हाथी अपने झुंड से अलग होकर उस स्थान के लिए प्रस्थान कर देता है। वहाँ बैठकर शांति से वह अपनी मृत्यु की प्रतीक्षा करता है। चींटियों का श्मशान भी अन्वेषकों ने खोजा है।

वैसे तो प्रकृति या परमात्मा ने संतुलन बनाए रखने की सुव्यवस्था की हुई है। वन और वनस्पति को नियंत्रित रखने के लिए शाकाहारी पशु और उनका संतुलन बनाए रखने के लिए मांसाहारी पशु-पक्षी की व्यवस्था है। यहाँ तक कि चींटी को भी कीवी का आहार बनाया है। इसके साथ उन्हें मृत्यु के पूर्वाभास का सामर्थ्य भी प्रदान किया गया है। लेकिन मानव के पास ऐसा सामर्थ्य नहीं होता। बीमारी या दुर्घटना की बात जाने दें। उसमें तो अनुभवी डॉक्टर अनुमान लगा सकता है। अन्यथा अंतिम समय तक सामान्य व्यक्ति को इसका ज्ञान नहीं होता।

ज्योतिष शास्त्र में एक स्थिति होती है—'मारकेश'। कौन-सा ग्रह किस स्थान पर बैठकर किसी अन्य ग्रह को किस दृष्टि से देख रहा है, यह तो कोई ज्योतिषी ही बता सकता है। 'लघु पाराशर' ग्रंथ में लिखा है कि जन्म लग्न से दूसरा और सातवाँ घर मारकेश होता है। यही संबंध ग्रह छठे, आठवें या बारहवें घर में बैठने की स्थिति मारकेश बनाती है। द्वितीय और सप्तम के स्वामी ग्रह की दशा भी मारकेश बनाती है। मल और मूत्र विसर्जन में अंतराल की जगह एक साथ होने से सात दिन की आयु मानी जाती है। 'जैमिनी' कहते हैं कि यदि लग्नेश और अष्टमेश शनि एवं चंद्रमा स्थिर राशि में हो। पाप ग्रह लग्न होरा से स्थिर राशि में आ जाए, तो जातक अल्पायु होता है।

लेकिन ऐसा हो सकता है। मनुष्य अपनी आयु और मृत्यु के बारे में निश्चित रूप से ठीक तरह जान सकता है। आयुर्वेद और अनेक ज्योतिष ग्रंथों में इसका विशद उल्लेख मिलता है। आयुर्वेद के मूलाधार 'चरक संहिता' के 'अरिष्ट खंड' में जीवनावधि का पता बतानेवाले अनेक प्रयोग हैं। इसे आयुर्वेद के पाठ्यक्रम में पढ़ाया भी जाता है, ताकि चिकित्सा आरंभ करने से पूर्व वैद्य को ज्ञात हो जाए कि रोगी का जीवन शेष है भी या नहीं। आयु शेष न रहने पर तो सभी औषधियाँ निष्फल हो जानी हैं। आयु शेष होने की स्थिति में वह विश्वास के साथ उसकी चिकित्सा कर सकता है।

जैन श्वेतांबर साधुओं में आम तौर पर मूत्र परीक्षण द्वारा शेष आयु का निर्धारण किया जाता है। इसे वे 'दैवीय परीक्षण' कहते हैं। काँसे के पात्र में रोगी का मूत्र लेकर उसमें सरसों के तेल की एक-दो बूँद डालकर उसके फैलने की स्थिति का बारीकी से अध्ययन किया जाता है। तेल से बननेवाली आकृति रोगी के जीवन का अकाट्य निर्धारण कर देती है। तेल का समान रूप से चारों ओर फैलने का अर्थ रोग साध्य और उपचार से ठीक हो जानेवाला है। किंतु उसके बिखर जाने या तल में बैठ जाने का अर्थ मृत्यु योग उपस्थित हो जाना है। इसी प्रकार तेल के पूर्व दिशा में फैलने से दीर्घ आयु और दक्षिण दिशा में फैलने से कुछ दिनों का जीवन शेष रह जाता है। पश्चिम दिशा में फैलाने का अर्थ रोग चाहे जितना बढ़ जाए, उसके द्वारा रोगी की मृत्यु न होने का संकेत होता है। ईषान कोण में फैलने पर एक माह का जीवन शेष रहना और अग्निकोण अथवा नैऋत्य कोण में फैलने का अर्थ मृत्यु निश्चित समझनी चाहिए। जबकि वायव्य कोण का फैलाव मृत्यु न होना होता है।

इसी प्रकार उस तेल से बनी कछुआ, सिंह, सियार, श्वान या गोलाकार आकृति असाध्य रोग की सूचक होती है, जबकि लंबी लाइन और मस्तकहीन आकृति रोग द्वारा मृत्यु की सूचना होती है। किसी शस्त्र की आकृति भी शीघ्र मृत्यु का संकेत देती है। इसके विपरीत हंस, कमल, सरोवर जैसी आकृति बनने पर रोगी की ओर से निश्चिंत हुआ जा सकता है। मनुष्य, मंदिर, हाथी, चामर, छड़, तोरण आदि आकृतियाँ भी रोगी की दीर्घायु के प्रति आश्वस्त करती हैं।

आयुर्वेद और ज्योतिष विज्ञान में ऐसे ढेरों प्रयोग हैं। जल में सूर्य बिंब के द्वारा भी शेष आयु की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस प्रयोग में काँसे की थाली में जल भरकर मध्याह्न में रोगी को सूर्य बिंब के दर्शन करवाए जाते हैं। जल में पूर्ण बिंब दिखाई देने का अर्थ आयु शेष रहना होता है। किंतु दक्षिण दिशा खंडित बिंब ६ माह, उत्तर दिशा में खंडित बिंब ३ माह, पश्चिम दिशा में खडित २ माह और पूर्ण खंडित बिंब १ माह आयु शेष रहने का परिचायक होता है। छिद्र-विच्छिद्र बिंब का अर्थ दस दिनों की आयु माननी चाहिए। इसके चार बिंब चार विदिशाओं के कोणों पर देखनेवाला चार घड़ी में मर जाता है। सूर्यमंडल को किरणविहीन देखनेवाले की आयु ग्यारह माह ही शेष होती है।

चरक संहिता के अनुसार व्यक्ति की पुतलियों का बिना किसी रोग के सफेद हो जाने का अर्थ निश्चित मृत्यु होती है। दर्पण में अपनी जीभ न देख पाने पर तीन दिन, नाक न देख पाने में सात दिन और भृकुटि न देख पानेवाले की नौ दिनों में मृत्यु हो जाती है।

ज्योतिष शास्त्र में एक स्थिति होती है—'मारकेश'। कौन-सा ग्रह किस स्थान पर बैठकर किसी अन्य ग्रह को किस दृष्टि से देख रहा है, यह तो कोई ज्योतिषी ही बता सकता है। 'लघु पाराशर' ग्रंथ में लिखा है कि जन्म लग्न से दूसरा और सातवाँ घर मारकेश होता है। यही संबंध ग्रह छठे, आठवें या बारहवें घर में बैठने की स्थिति मारकेश बनाती है। द्वितीय और सप्तम के स्वामी ग्रह की दशा भी मारकेश बनाती है। मल

और मूत्र विसर्जन में अंतराल की जगह एक साथ होने से सात दिन की आयु मानी जाती है। 'जैमिनी' कहते हैं कि यदि लग्नेश और अष्टमेश शनि एवं चंद्रमा स्थिर राशि में हो। पाप ग्रह लग्न होरा से स्थिर राशि में आ जाए, तो जातक अल्पायु होता है।

क्या समझे आप? कुछ पल्ले पड़ा? नहीं न। यहीं से आरंभ हो जाता है ज्योतिषियों का गड़बड़झाला। समझने के लिए ज्योतिषी के पास जाते ही वह इन ग्रहों को न जाने कहाँ-कहाँ बैठाता हुआ, उन्हें न जाने कैसी-कैसी दृष्टि से एक-दूसरे को देखता-बताना शुरू कर देता है। अल्पायु, दीर्घायु, अभी चिंता की कोई बात नहीं, थोड़ी सावधानी बरतें, वाहन सावधानी से चलाएँ आदि-आदि कहकर संकेत रूप में गोलमोल नतीजा बता देता है। वैसे भी ज्यादातर ज्योतिषी अनिष्ट की स्पष्ट घोषणा करने से परहेज ही करते हैं।

लेकिन ज्योतिष में कुछ आसान तरीके भी हैं—अनागत का अनुमान लगाने के। इन्हें समझने के लिए किसी ज्योतिषी के पास जाने की आवश्यकता भी नहीं होती। एकदम ठीक न सही, अनुमान तो लगाया ही जा सकता है, जैसे—पूर्ण चंद्रमा का आभामंडल न देख पाना, चेहरे की कांति फीकी पड़ जाना, बुद्धि भ्रमित हो जाना, कानों से ॐ न सुनाई देना, नाक-कान टेढ़े हो जाना, सिर्फ बाईं आँख से आँसू गिरने लगना, शरीर से मृतक की गंध आने लगना, मध्यमा अंगुली के नाखून पर रेखाएँ आड़ी हो जाना आदि-आदि। अंत में यही कहा जाता है—'आयु कर्म च वित्तं च विद्यानि निधन मेव'। यानी यह सब गर्भ में ही निर्धारित हो जाता है। व्यक्ति तो उसके अनुसार कठपुतली की तरह आजीवन नाचता रहता है। ये तो कुछ उदाहरण हैं। वरना यह एक अलग पुस्तक का विषय है।

प्रकृति तो प्रत्येक इष्ट-निष्ट की सूचना देती रहती है। चंद्रमा विभिन्न रूपों में और छिद्रयुक्त दिखाई देने का अर्थ एक वर्ष आयु शेष रह जाना होता है। चंद्रमा के लाल आभायुक्त और ग्रहण के बगैर ही खंडित दिखाई देने पर एक वर्ष पूर्व ही मृत्यु योग उपस्थित हो जाता है।

इसी प्रकार दीपक की लौ को अनेक रूप में देखनेवाला तुरंत मर जाता है। रात्रि में रविमंडल या इंद्रधनुष और दिन में चंद्रबिंब दिखाई देने का अर्थ भी तत्काल मृत्यु समझनी चाहिए। अपनी छाया न देख पानेवाला सिर्फ दस दिन जीवित रहता है। कई इस अवधि को एक मास मानते हैं। कटी, विकृत, छिन्न-भिन्न छाया का अर्थ भी तत्काल मृत्यु होती है। अपनी छाया को बैल, हाथी, कौआ, गधा, भैंसा या घोड़े के रूप में देखनेवाला भी तत्काल मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। किंतु पूर्ण छाया दिखाई देने पर मृत्यु का भय छोड़ देना चाहिए। चरक संहिता में छाया के रूप, आकार, रंग आदि के द्वारा आयु निर्धारण का विस्तृत उल्लेख मिलता है।

आयु का पूर्व ज्ञान न होने के पक्ष में तर्क दिया जाता है कि मरना कौन चाहता है? वह अचानक आकर जीवन समाप्त कर दे, यही उचित है। मृत्यु का पूर्व ज्ञान हो जाने पर तो व्यक्ति मरने के भय से घुलता रहेगा। उसका सारा सुख-चैन समाप्त हो जाएगा। शेष जीवन नरक तुल्य हो जाएगा। इसलिए मृत्यु का पूर्व ज्ञान न होना ही उचित माना जाता है।

किंतु इसका दूसरा पक्ष भी है। व्यक्ति स्वयं भी जानता है कि मृत्यु उसके सुखी या दु:खी होने से प्रभावित नहीं होती। वह तो निश्चित समय पर आकर ही रहती है। मृत्यु भी क्या है? चोला बदलना ही तो है। यह कहा जा सकता है कि यह सब कहने तक तो ठीक है; लेकिन उसे अपने जीवन में उतार पाना असंभव नहीं, तो आसान भी नहीं होता। अपना तन, धन, पत्नी, पुत्र, पुत्री, बहू, पोते-पोतियाँ, मकान, संपत्ति में आसक्ति को कैसे छिन्न-भिन्न किया जा सकता है। लेकिन करना तो होता ही है।

इसका प्रत्यक्ष लाभ तो यही होता है कि व्यक्ति यथासमय अपने अधूरे कार्यों को पूरा करने में जुट सकता है। धन-संपत्ति का समुचित उपयोग या विभाजन कर सकता है। अंतिम समय में किसी आसक्ति में प्राण अटक जाने का भय तो समाप्त ही हो जाता है। भयभीत होने से कोई लाभ भी तो नहीं होता। पंचभौतिक शरीर को बचाए रखने का सामर्थ्य तो अवतारी पुरुष से लेकर योगी-महात्माओं के पास भी नहीं रहा, फिर सामान्य मानव की तो बात ही क्या? निर्भय होकर अपने अंतिम समय का स्वागत करने में ही समझदारी है।

६४५, किशोर कुंज, किशनपोल बाजार,
जयपुर-३०२००१ (राज.)
दूरभाष : ८३८७०२०९१२

इस अंक के चित्रकार

श्री डी.के. पुरोहित

२४ अप्रैल, १९७२ में जनमे चित्रकार बालकृष्ण पुरोहित की रचनाएँ एवं रेखांकन प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। कमलेश्वर साहित्य सम्मान एवं कलेक्टर से जर्नलिज्म में पुरस्कार। संप्रति दैनिक भास्कर में उप-संपादक।

संपर्क : २८३, शास्त्री नगर, शास्त्री सर्कल के पास,
जोधपुर (राजस्थान)
दूरभाष : ९७८३४१४०७९

ओल्ड एज होम/हॉस्टल

• राहिला रईस

सुपरिचित रचनाकार। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानी, शोध-पत्र, अनुवादित कहानियाँ प्रकाशित। नाथद्वारा की प्रसिद्ध संस्था 'साहित्य मंडल' द्वारा सम्मानित। संप्रति अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में सहायक प्रोफेसर (हिंदी) के रूप में कार्यरत।

''अब्बू, मोहसिन अबरार चचा को ओल्ड एज होम भेज रहा है।'' आरिफ ने जावेद साहब को इत्तिला दी।

''क्या?'' जावेद साहब बस इतना ही कह सके।

''मैं जानता था कि ऐसा ही होगा, कितना समझाया था मैंने अबरार को, पर वह मेरी बात सुनता ही कहाँ था। अपनी ही धुन में मस्त था। न रिजवाना को मेरी बात समझ आई थी, न अबरार को। रिजवाना तो खैर बाइज्जत अल्लाह के घर चली गई, पर अब अबरार को न जाने क्या-क्या देखना पड़ेगा!'' जावेद साहब अंदर-अंदर ही अपने गम और अफसोस के गुबार को रोक रहे थे।

''अब्बू, चचा बहुत उदास हैं, आप एक बार मोहसिन को समझाकर देखें, शायद वह अपना फैसला बदल दे।'' आरिफ काफी फिक्रमंद लग रहा था।

''हाँ, देखता हूँ, पर वह मानेगा, मुझे इसकी उम्मीद कम ही है।'' जावेद साहब की आवाज कहीं दूर से आती महसूस हो रही थी।

अबरार और जावेद दोनों सगे भाई थे। उनके वालिद सरकारी मुलाजिम थे और अपनी बँधी-टकी आमदनी में वे उन्हें बहुत ऐशो-इशरत से तो न पाल सके, पर उनकी तालीम का उन्होंने बहुत खयाल रखा और दोनों ही भाई पढ़ाई में बहुत होशियार भी निकले। अबरार साहब इंजीनियर हुए और पी.डब्लू.डी. में नौकरी पा गए, जबकि बड़े भाई जावेद साहब यूनिवर्सिटी में प्रोफेसर हो गए।

दोनों भाइयों की इज्जत थी, रुतबा था। जावेद साहब और उनकी बेगम आसिया दोनों ही बहुत नेकसीरत और खुदापरस्त थे। अपने दोनों बेटों में उनकी जान बसती थी। उन्होंने कभी बच्चों के लिए न तो आया रखी, न ही ट्यूशन टीचर। दोनों अपनी जिम्मेदारियाँ निभाते उनकी परवरिश खुद करते। खुद पढ़ाते। बच्चों की हर जायज माँग पूरी करते, उन्हें उनकी जरूरत का हर सामान मुहैया कराते, पर कभी भी उनकी गैरमुनासिब माँगों को तवज्जुह नहीं देते। बच्चों को खेल के मैदान से लेकर मसजिद तक जावेद साहब खुद लेकर जाते। कुल मिलाकर उनके बच्चे बड़े ही नेक और सालेह उठे। एक बेटा डॉक्टर है और दूसरा सी.ए., पर दोनों ही माँ-बाप के बड़े फरमाबरदार हैं।

दूसरी तरफ, अबरार साहब सरकार से जितनी तनख्वाह पाते, उससे कई गुना ज्यादा उनकी ऊपर की कमाई थी। अत: घर में दौलत की, बल्कि हराम की दौलत की रेल-पेल थी। पुरानी मिसाल है कि 'हराम की कमाई हराम में जाती है', इसीलिए अबरार साहब को भी क्लबों और पार्टियों का चस्का पड़ गया था। उनकी बीबी रिजवाना भी किटी पार्टियों की रौनक थी। देर रात तक दोनों बाहर रहते। रिजवाना तो माँ ही नहीं बनना चाहती थी, पर किसी तरह कह-सुनकर, समझा-बुझाकर दोनों के यहाँ एक बेटा आ ही गया। लेकिन उसकी परवाह दोनों को ही न थी। बस एक आया के हवाले कर देने भर से वे अपने बच्चे से फुरसत पा चुके थे। माँ-बाप को फुरसत ही नहीं थी कि वे उसकी सेहत से लेकर पढ़ाई-लिखाई किसी भी तरफ ध्यान दे सकें। उनका काम था सिर्फ पैसा देना। वे अपनी कमी मोहसिन को महँगे खिलौने और कपड़े देकर पूरी करते।

ऐसी परवरिश से मोहसिन जिद्दी और बदतमीज होता जा रहा था। माँ-बाप की दूरी ने उसके अंदर एक खास तरह की खुदसरी और निगेटिविटी पैदा कर दी थी। उसे बस सुकून मिलता था तो ताया जावेद साहब के घर जाकर, जहाँ न सिर्फ ताया-ताई थे, बल्कि दादा-दादी और दोनों भाई भी मौजूद थे। अबरार साहब अपने माँ-बाप को भी कभी भी अपने साथ नहीं रखते थे। वे दोनों बड़े बेटे जावेद के साथ ही रहते थे। इस घर में हँसते-मुसकराते चेहरे और आपस की मुहब्बत देखकर उसको अजब सी तस्कीन मिलती थी। सभी मोहसिन को प्यार भी बहुत करते थे, बल्कि जावेद साहब तो यह भी चाहते थे कि मोहसिन उन्हीं के साथ रह जाए, पर अबरार साहब इसके लिए तैयार नहीं हुए।

दिन-पर-दिन उनकी मसरूफियत बढ़ती जा रही थी और वे मोहसिन की तरफ से और भी बेपरवाह होते जा रहे थे, बस एक एहसासे जिम्मेदारी थी, जो कि उन्हें मोहसिन से जोड़े हुए था, पर यह भी उन्हें बोझ ही लगता। आखिरकार उन्होंने इस बोझ को भी उतार फेंकने का फैसला कर लिया। मोहसिन सिर्फ दस साल का था, तभी उसे हॉस्टल भेजने का इरादा बना लिया था अबरार साहब ने।

आज कितने बरस बीत गए इस बात को, मोहसिन हॉस्टल जाकर

पढ़ाई में तो अच्छा हो गया, पर उसके वजूद में अकेलापन, अधूरापन और खुदपरस्ती पैदा हो गई थी। रिश्ते-नातों की गरमी और खुलूस गैरमुनासिब तौर पर कम हो गया था। वही मोहसिन, जो अपने दादा-दादी और ताया के घरवालों से घुला-मिला रहता था, हॉस्टल से लौटने के बाद अजनबीयत और खिंचाव महसूस करता। उसके लिए अब सिर्फ उसके दोस्त जरूरी थे। हर वक्त फोन और नेट पर उनसे ही उलझा रहता था। माँ-बाप तो बस थे, इसलिए राब्ता था। पढ़ाई के फौरन बाद ही उसे नौकरी का ऑफर मिल गया था, वह भी अपने ही शहर में, इसलिए वह आ भी गया था, वरना शायद⋯।

''उफ! कितने घंटों से मैं यहाँ बैठा हूँ? कितने साल का सफर पूरा कर आया हूँ? क्या कुछ नहीं चल रहा इस दिमाग में।'' सर झटकते हुए जावेद साहब उठे और जल्दी-जल्दी भाई के घर जाने को तैयार होने लगे।

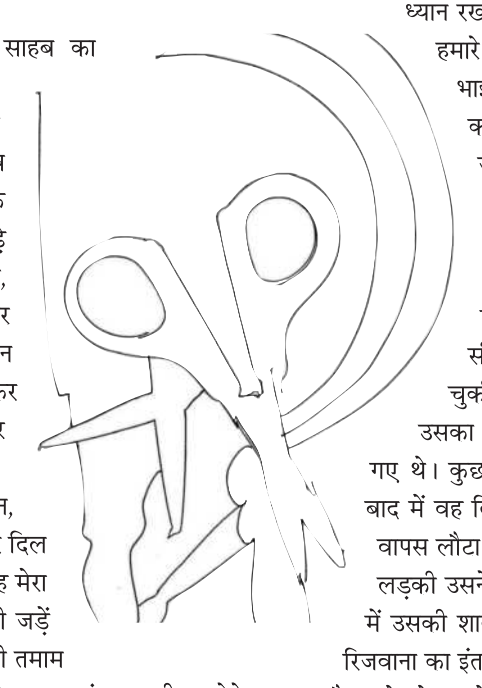

अबरार मियाँ को देखकर जावेद साहब का कलेजा मुँह को आ गया। उनका सुर्ख-सफेद चेहरा जर्द हो रहा था, चमकती रहनेवाली आँखें बुझी हुई थीं, हमेशा शेव से चिकने रहनेवाले चहरे पर कच्चे-पक्के बालों का जंगल सा उगा हुआ था, कपड़े तुड़े-मुड़े और मैले, वह भी उस शख्स के, जो कपड़ों पर एक शिकन बरदाश्त नहीं कर सकता था, लगता था कि कई दिनों से न नहाए हैं, न खाना खाए हैं। भाई को देखकर अबरार मियाँ खुद को रोक न सके और फफक उठे—

''भाईजान, मोहसिन को समझाइए न, मुझे ओल्ड एज होम न भेजे, यहाँ वह है, मेरे दिल का टुकड़ा उसका बेटा है, आप लोग हैं, यह मेरा शहर है, जिसमें मेरे माँ-बाप दफन हैं, मेरी जड़ें यहाँ हैं, मेरे रिश्तेदार हैं, दोस्त हैं, मैंने अपनी तमाम उम्र यहाँ गुजारी है, किसी भी तरह से मैंने अपना ट्रांसफर भी न होने दिया, कितने ही जोड़-तोड़ बिठाने पड़े, रुपया-पैसा खर्च करना पड़ा और मैं इसी शहर में बना रहा। अब इस उम्र में मुझे यहाँ से उखाड़ा जा रहा है। मैं मर जाऊँगा, भाईजान। खुदा के वास्ते मोहसिन को रोक लें, वह यह जुल्म न करे। मुझे उसकी जरूरत है, उसके बच्चे की जरूरत है, आप सबकी जरूरत है, भाईजान।'' अबरार साहब छोटे बच्चे की तरह बिलख रहे थे।

'तायाअब्बू, अब्बा को समझाइए न, मैं हॉस्टल नहीं जाना चाहता। मैं यहीं रहना चाहता हूँ अम्मी-अब्बू के पास, दादा मियाँ और दादी बी के पास, आपके और ताई बी के पास। आप अब्बू से कहें न कि मैं खूब दिल लगाकर पढ़ूँगा, आया को भी परेशान नहीं करूँगा, कुछ माँगूँगा भी नहीं। बस, मुझे हॉस्टल न भेजें।' आज अबरार मियाँ के लफ्जों से जावेद साहब को बीस साल पहले मोहसिन का हॉस्टल भेजे जाते वक्त का रोना याद आ गया था। कितना रोया था, गिड़गिड़ाया था, माफी माँगी थी, कसमें खाई थीं, पर अबरार साहब न पसीजे थे और उसे हॉस्टल भेज ही दिया था।

क्या आज भी वही दोहराया जानेवाला है। तब एक बाप ने अपने मासूम बच्चे को उसके बेहतर मुस्तकबिल का हवाला देकर हॉस्टल भेज दिया था। आज एक बूढ़े और जईफ बाप को उनका बेटा बेहतर फैसिलिटीज और उनके हमउम्रों की कंपनी के नाम पर ओल्ड एज होम भेजना चाहता है। जावेद साहब सोच रहे थे, 'मैंने कितना समझाया था अबरार को कि छोटा बच्चा है, तुम्हारी और अपनी माँ की उसे जरूरत है, तुम्हें उसकी परवरिश और देखभाल करनी चाहिए। अगर तुम वक्त नहीं निकाल पाते, कामों में मसरूफ रहते हो तो रिजवाना तो उसका ध्यान रख सकती है और अगर वह भी मसरूफ है तो उसे हमारे घर भेज दो, वहाँ अम्मी-अब्बा हैं, उसकी ताई हैं, भाई हैं, उन्हीं सबके साथ रह लेगा। सिर्फ पैसे खर्च कर देने भर से ही माँ-बाप का फर्ज अदा नहीं हो जाता, मेरे भाई।'

पर अबरार को न तो मानना था और न वह माना। आँखों में आँसू भरे, हसरतों से सबको निहारता मोहसिन देहरादून चला ही गया। छुट्टियों में जब वह घर आता तो उसके चेहरे से अजीब सी बेचारगी झलकती। उसकी मासूमियत खत्म हो चुकी थी और उसकी जगह बुर्दबारी ने ले ली थी। उसका चुलबुलापन, शरारतें, नाज-नखरे सब खत्म हो गए थे। कुछ ही वक्त में वह बचपन से दूर जा चुका था। बाद में वह दिल्ली और फिर बाहर पढ़ने चला गया था। अब वापस लौटा था अपने शहर पूरे १५ साल बाद। शादी के लिए लड़की उसने खुद ही पसंद कर ली थी। और इन पाँच सालों में उसकी शादी भी हो गई थी, एक बेटा भी और उसकी माँ रिजवाना का इंतकाल भी। अबरार साहब भी रिटायर होकर घर में बैठ चुके थे। जावेद साहब के दिमाग में यादों के अंधड थमने का नाम ही नहीं ले रहे थे।

एक तो रिटायरमेंट के बाद का खालीपन, ऊपर से बीबी के इंतकाल से पैदा हुए अकेलेपन ने अबरार साहब को कुछ ज्यादा ही हताश बना दिया था। वे चाहते थे कि मोहसिन और उसकी बीवी उनके साथ वक्त गुजारें, उन्हें तवज्जुह दें, उनके साथ बातें करें। पर इस नई पीढ़ी को फुरसत कहाँ? दोनों नौकरी-पेशा थे। बेहद मसरूफ रहते, जो थोड़ा वक्त चुरा भी लेते तो वह उनका निजी वक्त होता था, जिसे वे एक-दूसरे और अपने बच्चे के साथ बिताना पसंद करते थे तथा ऐसे में बूढ़े बाप का न तो उन्हें ध्यान रहता और न ही वे उन्हें साथ रखने की जरूरत महसूस करते। वैसे भी मोहसिन और अबरार साहब के बीच में खूनी रिश्ता तो था, पर जज्बाती नहीं।

आते-जाते बाप का उदास चेहरा देखकर मोहसिन को यह एहसास तो होता कि वे अकेले हैं, पर यह अकेलापन वह दूर कर सकता है, यह वह समझ ही न सका था या फिर समझना ही नहीं चाहता था। बस अपनी जिम्मेदारी निभा देने भर के लिए उसने उन्हें ओल्ड एज होम भेज देने का फैसला कर लिया। मोहसिन को समझा पाना आसान नहीं था, क्योंकि हमेशा ही नई पीढ़ी पुरानी पीढ़ी को नासमझ और दकियानूसी समझती है। वैसे भी आज के दौर में तो बूढ़े माँ-बाप को ओल्ड एज होम भेजना स्टेटस सिंबल बन चुका है। जो जितने महँगे और नामी ओल्ड एज होम में बुजुर्गों को भेजेगा, वह उतना ही लायक और बड़ा आदमी कहलाएगा।

बेशक ओल्ड एज होम में बुजुर्गों को बेहतर सहूलियतें मिल जाती हैं, वहाँ उनके हमउम्र दूसरे लोग भी होते हैं, जिनसे उन्हें कंपनी मिल जाती है। पर अपनों का साथ और देखभाल बुजुर्गों को जो सुकून पहुँचाता है, वह कहीं और नहीं मिल सकता। अपने बच्चों और उनकी औलाद के साथ रहने में जो सुख है, वह अपने हमउम्र लोगों के साथ रहने में नहीं है। बच्चों की एक किलकारी और उनकी शरारतें बुजुर्गों में जो उमंग पैदा करती हैं, वह लाफ्टर क्लासेज और योगा भी नहीं कर सकते। पर यह सब मोहसिन को समझाया कैसे जाए!

आज फिर वही बीस साल पुराने हालात जावेद साहब के दरपेश थे, तब एक बाप को बेटे को हॉस्टल भेजने से रोकने के लिए मनाना था और वे हार गए थे तथा आज एक बेटे को बाप को ओल्ड एज होम भेजने से रोकने के लिए मनाना है तो क्या वे आज जीत पाएँगे?

सा अ

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग
अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०७५०३३८५९२४

गिला किससे करती?

कविता

● हरीतिमा

सुपरिचित रचनाकार। संप्रति उपप्रधानाचार्या, सरदारनी सदा कौर खालसा बालिका उच्चतर माध्यमिक विद्यालय दरियागंज, नई दिल्ली।

मौन विवेचना एक सड़क की

सुनती हूँ सबकी, पर मौन रहती हूँ,
मौन रहकर भी बेचैन रहती हूँ,
किसको सुनाऊँ दास्तान, हैरान होती हूँ।

खामोशी से सुनकर क्या जवाब दूँ?
हँसकर चला गया, जिसको बता सकूँ?
जमाने भर के सुख-दुःख सींच रही हूँ।

पल भर की कहकर लौट कर न आए,
बढ़ते कदमों को सह भी न पाए,
चलते-चलते कई बार रुके सब,
छुपते आँसुओं को रोक भी न पाएँ।

गिला किससे करती 'वो' अपने ही तो थे,
मिला किसको, कहाँ, क्या? सपने ही तो थे,
डोली भी सजी थी और अरथी भी उठी थी,
बातें और भी सुन-सुनकर ठगी थी।

आवाज भी थी और आगाज भी था,
अपने और पराए का भेद भी था,
नुपुर और झांझर में नेह भी था,
साँझ और प्रातः में वेग भी था।

जीवन की अभिलाषाएँ—जलाशय सी थी,
अनकही सी मैं, कुछ कह न सकी थी,
हर ओर रही मैं साँवल सुनहली,

सब ओर बढ़ी मैं सजल सलोनी,
पाषाण-हृदय संग किलकारी भी थी,
कैसे सुनती, मतवाली जो थी।

गीत और प्रगीत भी थे, मन और मीत भी थे,
शोर और संगीत भी थे, खुश और विवश भी थे,
चोर और वजीर भी थे, धूल और फूल भी थे,
वीर और क्षीण भी थे, हार और जीत भी थे,
चीर और अचीर भी थे, क्रोध और काम भी थे,
मान और अपमान भी थे, राजा और रंक भी थे,
मृदुल और निशंक भी थे,
पीर और फकीर भी थे, ज्ञान और अज्ञान भी थे,
क्यों नहीं सहती, तुम सबको,
तुम सब मेरे अपने ही तो थे,
मेरे साथ चले-चले, मेरे सपने ही तो थे,
तुम सबका सम्मान हूँ मैं,
तुम्हारे पलने-चलने का पैगाम हूँ मैं।
कठोर कंटक हूँ तो क्या?
तुम्हारे सपनों का सैलाब हूँ मैं।

आईना

किसी को तो पानी में पत्थर फेंकना ही होगा,
राह मिले न मिले रास्ता खोजना ही होगा,
हकीकत बयाँ दर्ज हो या न हो कभी,
फासले कितने भी रहे, नतीजा देखना ही होगा।

सागर सी भीड़ में खो गए जो जीत के मोती,
मीत तकदीर का भी यहाँ बनना ही हागा,
बात जमाने की करना भी यहाँ एक सबक है,
पर आईना बनने के लिए भी आईना बनना ही होगा।

गीत हर पल ही सही कोई जीत के लिखे यहाँ,
यह आसान नहीं होता सबका जतिने के लिए यहाँ,
हर शख्स को यहाँ साझ के झुरमुट से ही सही,
सुबह की किरण का पता खोजना ही होगा।

चाँद आकाश पर बरसे या बिखरे जमीं पर,
फासले दरमियाँ के न कभी बढ़ने देना,
सिसकियों के लिए कोई आवाज दे या न दे,
हमें परछाइयों को जिंदा रखने को मिटना ही होगा।

प्रहार सी हार को तोड़ना ही होगा,
हर कदम पर कदम जो तुम्हारे मिले,
ये संभव तो नहीं, पर सोचना ही होगा,
हर किसी को न सही, पर हमें तो यहाँ जूझना ही होगा।

सा अ

बी-८५, पुष्पांजलि एन्क्लेव
पीतमपुरा, दिल्ली-११००३४
दूरभाष : ९७१८४२७७३७

आलेख

भीषण गरमी का प्रकोप दुनिया को ले डूबेगा

• राजकुमार कुंभज

जाने-माने लेखक। चार काव्य-संग्रह और एक व्यंग्य-संग्रह प्रकाशित। कई कविता-संकलनों में कविताएँ सम्मिलित तथा अंग्रेजी सहित कुछ भारतीय भाषाओं में अनूदित।

औसत वैश्विक तापमान का रिकॉर्ड रखने की आधुनिक व्यवस्था प्रारंभ किए जाने के बाद से पिछले १३७ बरस में यह मई का महीना दूसरी बार सर्वाधिक गरम रहा। सबसे ज्यादा तापमान के संदर्भ में इससे पहले सर्वाधिक गरम मई माह वर्ष २०१६ में रहा था। वर्ष २०१६ और वर्ष २०१७ में निरंतर मई माह का सर्वाधिक तापमान चिंता का विषय बन गया।

नासा स्थित 'गोडार्ड इंस्टीट्यूट फॉर स्पेस स्टडीज अर्थात् जी.आई.एस.एस.' के वैज्ञानिकों ने दुनिया भर के तकरीबन छह हजार तीन सौ मौसम विज्ञान केंद्रों, समुद्र की सतह नापनेवाले उपकरणों और अंटार्कटिक अनुसंधान केंद्रों द्वारा सार्वजनिक तौर पर उपलब्ध करवाए गए आँकड़ों का सूक्ष्म अध्ययन करने के बाद ही इस चिंता का खुलासा किया है। वैसे तो नासा द्वारा किया गया यह एक मासिक मौसम विश्लेषण था, किंतु वैश्विक तापमान में निरंतर वृद्धि होते जाना बेहद खतरनाक संकेत हैं। भीषण गरमी का भीषण प्रकोप दुनिया को ले डूबेगा।

स्मरण रखा जा सकता है कि वैश्विक तापमान का रिकॉर्ड रखने की आधुनिक व्यवस्था वर्ष १८८० के आसपास शुरू हुई थी; क्योंकि इसके पहले के सर्वेक्षणों में पृथ्वी के पर्याप्त भाग का पर्याप्त सर्वेक्षण संभव नहीं हो पाता था। इस आधुनिक पद्धति से ही अब दुनिया समझ पा रही है कि हम किस तरह कितनी भीषण गरमी की चपेट में आते जा रहे हैं और यह पृथ्वी धीरे-धीरे कैसे ग्लोबल-वार्मिंग की गिरफ्त में फँसती जा रही है?

वर्ष २०१६ के मई माह में विशेष सांख्यिकी गणना के मुताबिक औसत तापमान ०.९३ डिग्री सेल्सियस अधिक दर्ज किया गया था, जबकि इस वर्ष २०१७ का मई माह गत वर्ष की तुलना में ०.८८ डिग्री सेल्सियस ही अधिक रहा, जो कि पिछली मई के मुकाबले ०.०५ डिग्री कम रहा, किंतु सबसे ज्यादा तापमान के मामले में तीसरे क्रम पर रहनेवाले वर्ष २०१४ की तुलना में इस वर्ष का तापमान ०.०१ डिग्री अधिक रहा अर्थात् वर्ष २०१४ के मई माह में तापमान ०.८७ डिग्री सेल्सियस आँका गया था। वह मई माह भी कोई कम गरम नहीं कहा गया था।

वर्ष १९५१ से वर्ष १९८० तक के मई माह के तुलनात्मक तापमान अध्ययन में यही बात सामने आई है। इस सबकी वजह ग्लोबल-वार्मिंग ही बताई गई है, जो कि भीषण गरमी के भीषण प्रकोप का बेहद जिम्मेदार घटक है। ऐसे में तय है कि भीषण गरमी का भीषण प्रकोप दुनिया को ले डूबेगा।

ग्लोबल-वार्मिंग की वजह से भारत का तापमान भी तेजी से प्रभावित हो रहा है। देश का वार्षिक औसत तापमान बीसवीं सदी की तुलना में १.२ डिग्री सेल्सियस बढ़ चुका है। पर्यावरण से जुड़ी संस्था 'सेंटर फॉर साइंस ऐंड एन्वायरमेंट अर्थात् सी.एस.ई.' ने भी वर्ष १९०१ से अभी तक के सभी वर्षों के तापमान-अध्ययन का विश्लेषण करते हुए पाया है कि हमारे देश में जिस तेजी से तापमान-वृद्धि देखी जा रही है, उससे तो यही प्रतीत होता है कि अगले दो दशक में ही देश का तापमान १.५ डिग्री के स्तर को पार कर जाएगा।

पेरिस जलवायु समझौते के तहत भी तापमान-वृद्धि का यही स्तर-लक्ष्य आँका गया है। वैश्विक तापमान की यह वृद्धि-दर न तो सामान्य है और न ही अनुकूल। यह स्थिति पर्यावरण प्रतिकूल तो है ही, अर्थव्यवस्था और समाज के लिए भी अनुकूल नहीं है। देश, दुनिया, समाज और प्राणिमात्र पर्यावरण-परिवर्तन की अनर्थकारी प्रतिकूलताओं के दुश्चक्र का सामना करने को अभिशप्त हो गए हैं।

वास्तव में इन पर्यावरणीय-प्रतिकूलताओं के लिए हम, हमारी आधुनिकता और सुविधाभोगी जीवन-शैली ही पर्याप्त जिम्मेदार हैं। इसी वजह से दुनिया की तमाम अर्थव्यवस्थाएँ प्रभावित हो रही हैं और हमारी सामाजिकता में भी दरारें आती जा रही हैं। क्या बढ़ती गरमियों की वजह से पारिवारिकताएँ घटती जा रही हैं?

कदाचित् यह विस्मय का विषय हो सकता है कि पर्यावरण-प्रदूषण, ग्लोबल-वॉर्मिंग सहित प्री-मानसून और पोस्ट-मानसून के कारण हमें अकस्मात् ही हो रहे मौसम-परिवर्तन का सामना करना पड़ रहा है। ऐसा नहीं है कि सिर्फ गरमियों में ही तापमान बढ़ रहा है, बल्कि असामान्यत: सर्दियों में भी औसत तापमान में वृद्धि देखी जा रही है।

सी.एस.ई. की अनुसंधान रिपोर्ट के मुताबिक सर्दियों का औसत तापमान १.५ डिग्री सेल्सियस से कहीं ज्यादा बढ़ चुका है। इधर की सर्दियों में औसत तापमान २ डिग्री सेल्सियस तक बढ़ा हुआ देखा जा चुका है, जबकि वर्ष २०१७ जनवरी-फरवरी की सर्दियाँ अब तक

के इतिहास की सबसे गरम सर्दियाँ रही हैं। वर्ष १९०१ से १९३० के बेसलाइन तापमान की तुलना में इस बरस जनवरी-फरवरी की सर्दियों का तापमान औसत तकरीबन तीन डिग्री तक अधिक देखा गया। वर्ष २०१६ में ही भारत ने चार-चार तूफान भी देखे, जबकि वर्ष २०१० में बेसलाइन के मुकाबले तापमान तकरीबन दो डिग्री अधिक था।

२०१० का वर्ष भारत में लू के कारण तीन सौ से ज्यादा लोगों की हुई असामयिक मौतों के लिए भी जाना जाता है। सी.एस.ई. के अनुसार वर्ष १९९५ पहला सबसे गरम वर्ष और वर्ष २०१६ दूसरा सबसे गरम वर्ष रहा, किंतु ११६ वर्षों के इतिहास में पंद्रह सबसे गरम वर्षों में से कुल जमा तेरह बरस २००२ से २०१६-१७ के दौरान रहे। वर्ष २०१६-१७ में ही दक्षिण भारत के चारों राज्यों ने सदी के सबसे भयंकर सूखे का सामना किया। यहाँ तक कि इसकी जद में केरल, कर्नाटक, आंध्र और तमिलनाडु के तकरीबन तैंतीस करोड़ लोग आए। अब यह अप्रत्याशित नहीं है कि पेरिस जलवायु समझौते से अमेरिका के अलग हो जाने के बाद वैश्विक तापमान में आ रहे परिवर्तनों को नियंत्रित करना एक बड़ी व गंभीर चुनौती बन गई है।

दूरविन स्थित 'यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया' के अनुसंधानकर्ताओं का कहना है कि भारत में इस सदी के अंत तक तापमान में २.२ से लेकर ५.५ डिग्री सेल्सियस तक की वृद्धि हो सकती है, जो कि बेहद प्राणघातक साबित होगी। इस कारण भारत सहित अन्य एशियाई देशों में भी लू से मरनेवालों की संख्या अच्छी-खासी बढ़ेगी। यह जानकर आश्चर्य हो सकता है कि तापमान में मामूली बढ़ोतरी से भी लू और लू से मरनेवालों की संख्या बढ़ने की आशंका बढ़ जाती है। भारत में पिछले पचास वर्षों के दौरान मात्र आधा फीसदी तापमान वृद्धि देखी गई है, लेकिन लू से मरनेवालों की संख्या औसत संभावना से अधिक ही रही। आशंका व्यक्त की गई थी कि इस दौरान लू से तेरह फीसदी जनहानि होगी, लेकिन तब लू से मरनेवालों की संख्या बढ़कर बत्तीस फीसदी तक पहुँच गई।

अनुसंधानकर्ताओं ने आगाह किया है कि बरस-दर-बरस बढ़ती जा रही गरमी आगे और अधिक भीषण आकार ले सकती है। आनेवाले वर्षों में बढ़ते तापमान से स्थितियाँ और अधिक खराब होने वाली हैं। इस दौरान चिलचिलाती धूप और लू की वजह से मरनेवालों का आँकड़ा आश्चर्यजनक ढंग से बढ़ सकता है।

हालाँकि कुशल अध्ययनकर्ताओं ने यह भी कहा है कि बिजली की बढ़ती पहुँच और खासकर एयर-कंडीशनर की सहायता व सुविधा से इन होने वाली मौतों की संख्या को किसी हद तक सीमित किया जा सकता है, किंतु वे गरीब और मजदूर-वर्ग के लोग कहाँ व कैसे बच पाएँगे, जो आज भी बिजली की पहुँच में हैं ही नहीं? गरीबों के लिए एयर-कंडीशनर का सुझाव सोचना तो बेहद बड़ी मूर्खता ही है। कौन नहीं जानता है कि तकरीबन एक-तिहाई भारतीय आज आजादी के सत्तर बरस बाद भी बिजली की पहुँच से दूर ही अपना जीवनयापन कर रहे हैं। आँकड़ों के अनुसार वर्ष १९७५ और १९७६ में लू लगने से भारत में क्रमश: ४३ और ३४ लोग मरे थे, जबकि आनेवाले वर्षों में तापमान में बढ़ोतरी के साथ ही लू से मरनेवालों की संख्या में भी भारी उछाल देखा गया। वर्ष १९९८ और २००३ में भीषण गरमी के दौरान लू लगने से क्रमश: सोलह सौ और पंद्रह सौ लोगों की मौत हुई थी। जाहिर है कि वे सभी मुट्ठी भर अनाज और बिजली को तरसनेवाले गरीब और मजदूर-वर्ग के ही लोग थे।

किंतु भीषण गरमी के प्रकोप अथवा लू से बचाव के लिए यहाँ जिस एयर-कंडीशनर की सहायता व सुविधा के विकल्प की चर्चा की जा रही है, उसमें हाल-फिलहाल तक हाइड्रो-क्लोरो-फ्लोरो-कार्बन और हाइड्रो-क्लोरो-कार्बन श्रेणी की गैसों का इस्तेमाल किया जा रहा है, जिससे ओजोन परत को बहुत ज्यादा नुकसान पहुँच रहा है। देश में इसका प्रयोग वर्ष २०२५ तक बंद किया जाना प्रस्तावित है। उसके बाद हाइड्रो-फ्लोरो-ऑफिंस श्रेणी की गैस इस्तेमाल करने की तैयारी है, जो न तो ओजोन परत को नुकसान पहुँचाती है और न ही ग्लोबल-वार्मिंग बढ़ाती है, लेकिन तब तक क्या भीषण गरमी का भीषण प्रकोप दुनिया के प्राण नहीं ले लेगा? प्राण बचाने के लिए पर्यावरण बचाना क्या जरूरी नहीं हो जाता है ?

ओजोन परत का स्तर २०१७ फरवरी के दौरान १२ फीसदी था। मार्च-अप्रैल में ५२ और मई माह में एक बेहद लंबी छलांग लगाते हुए ७७ फीसदी पर पहुँच गया, जो कि मानव स्वास्थ्य के लिए बेहद खतरनाक है। यहाँ यह जान लेना भी बेहद जरूरी हो जाता है कि ओजोन के कारण समय-पूर्व होनेवाली मौतों के मामलों में हमारा देश सबसे आगे है। ग्राउंड-लेवल ओजोन किसी भी स्रोत से सीधे-सीधे नहीं निकलती है, बल्कि यह तब बनती है, जब नाइट्रोजन के ऑक्साइड तथा खासतौर से मोटर वाहनों और अन्य स्रोतों से निकलनेवाली विषैली गैसों की एक किस्म, सूर्य-प्रकाश में, एक-दूसरे के संपर्क में आते हैं; जाहिर है कि तब गरम और स्थिर हवा में ओजोन निर्माण बढ़ जाता है।

इस सबसे बचाव के लिए कुछ गंभीर और दीर्घकालीन नीतियों की जरूरत है, वरना बढ़ती गरमी का बढ़ता प्रकोप दुनिया को ले डूबेगा। दमा और साँस संबंधित बीमारियों की जननी विषैली गैसें, गरम हो रहे तापमान में सूर्य-किरणों से मिलकर जो कॉकटेल बना रही हैं, उस सबसे ओजोन गैस बनने में काफी मदद मिल रही है। ऐसे में भीषण गरमी के भीषण प्रकोप से पृथ्वी को कौन बचाएगा?

विस्मय होता है कि हानिकारक गैसों का सर्वाधिक उत्सर्जन करनेवाले अमेरिका ने पेरिस जलवायु समझौते से हटकर उन वैश्विक-प्रयासों को एक बड़ा झटका दिया है, जिनके लिए दुनिया भर के तकरीबन दो सौ देशों ने एक बेहतर, सेहतमंद और सुरक्षित दुनिया बनाने का संकल्प लिया है। भीषण गरमी का भीषण प्रकोप किसी के भी प्राण नहीं छोड़ेगा।

सा अ

३३१, जवाहर मार्ग
इंदौर-४५२००२
दूरभाष : ०७३१-२५४३३८०

कहानी

बैरी भए पालनहार

• राजेंद्र परदेसी

सुपरिचित रचनाकार एवं चित्रकार। साहित्य की लगभग सभी विधाओं में रचना-कर्म। 'हताश होने से पहले' (कविता-संग्रह), 'भोजपुरी लोककथाएँ', 'दूर होता गाँव' (लघुकथा-संग्रह), 'शब्दों के संधान' (हाइकु-संग्रह), 'शब्द शिल्पियों के सान्निध्य में' (साक्षात्कार-संग्रह) तथा रेखांकन विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लगातार प्रकाशित।

गोपाल राय उम्र के उस पड़ाव पर आ गए थे, जहाँ से आगे बढ़ने के लिए उन्हें स्वयं सहारे की आवश्यकता महसूस हो रही थी। पत्नी पहले ही बिस्तर पकड़ चुकी थी, ऐसे में खेत-खलिहान को देखनेवाला कोई शेष नहीं बचा था।

जब तक शरीर चलता रहा, गोपाल राय ने खेत-खलिहान की देख-रेख के साथ अपने दोनों बेटे विजय और अशोक की शिक्षा-दीक्षा में कोई व्यवधान नहीं पड़ने दिया। इसका परिणाम हुआ कि दोनों बेटे शहर में अच्छे पदों पर आसीन हो गए हैं, लेकिन किसी बेटे को इसकी चिंता नहीं कि उनके माँ-बाप गाँव में कैसे हैं?

गोपाल राय ने भी कभी इसकी चिता नहीं की कि उनकी सतानें उन्हें क्यों नहीं पूछ रहीं। अपने गाँव और खेत-खलिहान में ही मगन रहते। जब दोनों पति-पत्नी शरीर से असहाय हो गए तो उनको भी बेटों की उपेक्षा खलने लगी। जीवन की गाड़ी को खींचना ही था। गाँव की बेटी गीता को अपना सहारा बना लिया, जो उन लोगों की सेवा-टहल अपनी माँ-पिता समझकर कर रही थी। पर उसका भतीजा एक दिन उसे भी साथ लेकर शहर चला गया।

गोपाल राय के स्वास्थ्य को देखकर गाँव में उनके शुभचिंतक उन्हें यही सलाह देते कि वह अब घर-जमीन की चिंता छोड़कर शहर में बेटों के साथ ही आराम से रहे। उन लोगों के साथ रहेगा तो वहाँ वे किसी अच्छे डॉक्टर से दवा भी करा सकेंगे। वे लोग नौकरी-पेशावाले हैं, नौकरी छोड़कर गाँव में साथ रह भी नहीं सकते। रही बात गाँव के खेत-खलिहान की, तो उसे किसी को बटाई पर दे दें, जब स्वास्थ्य कुछ ठीक लगे तो आकर गाँव में देख लिया करें।

एक दिन अचानक गोपाल राय की सेहत काफी बिगड़ गई, तो उनके एक पट्टीदार ने उसकी जानकारी उनके बेटों तक पहुँचा दी। पिता के स्वास्थ्य के बारे में जानकारी मिलते ही दोनों तत्काल गाँव पहुँच गए। पिता की दशा देखकर उनके स्वास्थ्य से अधिक उन लोगों को यह चिंता सताने लगी कि अगर इनको कुछ हो गया तो गाँव की जमीन को निकालना भी एक मुसीबत हो जाएगी। इनके बाद इस जमीन की सुरक्षा करनेवाला भी गाँव में कोई नहीं रह जाएगा। अच्छा होगा, यदि इनके रहते ही सभी जमीन बेचकर शहर में अच्छा मकान ले लिया जाए। दोनों भाइयों ने मंत्रणा कर यही फैसला किया। अस्वस्थ पिता के सम्मुख अपना प्रस्ताव भी रख दिया। गोपाल राय ने उनकी बातों का कोई उत्तर नहीं दिया तो दोनों फिर एक साथ बोल पड़े कि आपके बाद गाँव में तो रहने और देखने के लिए कोई बचेगा नहीं, इसलिए अच्छा होगा कि अभी ही सारी जमीन को बेच दिया जाए और आप भी हम लोगों के साथ चलकर शहर में ही रहें।

गोपाल राय अपनी पुश्तैनी जमीन अपने जीते-जी बेचने के पक्ष में नहीं थे। बोले, ''मेरे न रहने के बाद तो गाँव की सारी संपत्ति तुम लोगों की ही होगी। उस समय तुम लोगों को जो अच्छा लगे, करना। अभी ऐसा न सोचो तो ठीक होगा।''

''जो काम कल करना है, उसे आज ही करने में क्या हर्ज है।'' बड़े बेटे विजय ने समझाया।

बड़े भाई की बातों से छोटे भाई अशोक को भी कुछ बल मिला, कहा, ''पिताजी, अब आपका शरीर तो खुद आपका साथ नहीं दे रहा है, ऐसे में खेत-खलिहान का काम कैसे करेंगे?''

बेटों की बातों से गोपाल राय को उनके अंदर से स्वार्थलिप्सा की गंध आ रही थी, इस कारण कोई प्रतिक्रिया नहीं दे रहे थे। पिता को मौन देख और छोटे भाई को अपने साथ देख विजय पुनः बोला, ''आप बेकार में जमीन का मोह कर रहे हैं। इससे मुक्ति लेकर शांति से हम लोगों के साथ आप दोनों शहर में रहें।''

गोपाल राय अब स्वयं को असहाय महसूस कर रहे थे। शरीर के साथ परिस्थितियाँ भी बेटों के असहयोग के कारण विपरीत दिखने लगी थीं। ऐसे में लाचारी और बुझे मन से बोले, ''ठीक है, जो तुम लोगों को सही लगे, करो।''

पिता की सहमति मिलते ही दोनों बेटों ने बाप को वहीं छोड़कर अपने पट्टीदार दौलतराय के पास पहुँचकर जमीन बेचने की बात चलाई तो उन्होंने कहा, ''बेटा, इतनी जल्दी क्या है, पहले अपने पिता को साथ ले जाकर शहर में किसी अच्छे डॉक्टर को दिखाओ, वे स्वस्थ हो जाएँगे तो स्वयं फिर गाँव आकर जो करना उचित लगेगा, करेंगे।''

पर बेटों की स्वार्थलिप्सा इतनी बढ़ गई थी कि उन्हें माँ-बाप के स्वास्थ्य से अधिक जमीन से प्राप्त होनेवाले धन की चाह ही दिख रही थी। जिसके सहयोग से भौतिकता की सभी सुख-सुविधाओं को पाने की चाह मन में पाल रखी थी। ऐसे में किसी और की सलाह कहाँ से सुहाती। दोनों भाई समवेत स्वर में बोल पड़े, ''काका, आप देख रहे हैं कि बापू अब इस हालत में नहीं हैं कि ठीक होने पर भी खेती का काम देख सकें।''

''बात तो ठीक है, पर जल्दी करोगे तो लोग गरजू समझकर सही दाम भी नहीं देंगे।'' दौलतराय ने सलाह दी।

''काका, आपकी बात बिल्कुल सही है, पर हम लोग नौकरी-पेशावाले ठहरे और इस काम के लिए बार-बार छुट्टी लेकर तो आ नहीं सकते।'' बड़े भाई विजय ने उत्तर दिया तो छोटे भाई अशोक ने बात आगे बढ़ाई। ''काका, गरज हमें है तो लोग लाभ लेंगे ही, यह तो जग की रीति है।'' ठीक है, जब तुम दोनों भाइयों ने गाँव की जमीन बेचने का मन बना ही लिया तो फिर लेनेवालों को तलाशता हूँ।'' दौलतराय ने आश्वासन दिया।

''जरा जल्दी कीजिएगा'' विजय ने कहा।

''ठीक है।'' दौलतराय से आश्वासन लेकर दोनों भाइयों ने घर आकर पिता को सारी बात बताई तो उनके मुख से इतना ही निकला, ''ऊपरवाला यही चाहता है तो तुम लोगों ने ठीक ही किया होगा।'' फिर गाँव के वैद्यजी की दी दवा खाकर लेट गए।

अब पिता से अलग कमरे में बैठकर दोनों भाई जमीन से होनेवाली आय का हिसाब-किताब करने लगे। किसके हिस्से में क्या आ सकता है। उसी के अनुसार भविष्य की योजनाएँ भी बनाने लगे। पर पिता जल्दी कैसे स्वस्थ हो सकते हैं, इस पर पल भर भी विचार-विमर्श नहीं किया। माँ-बाप के भविष्य को ऊपरवाले के ऊपर छोड़कर अपनी चर्चा समाप्त कर दी। फिर शाम को पिता के पास जाकर विजय बोला, ''बापू, हम लोगों की छुट्टी समाप्त हो रही हैं। कल सुबह हम दोनों लौट जाएँगे। आप अपना खयाल रखिएगा।''

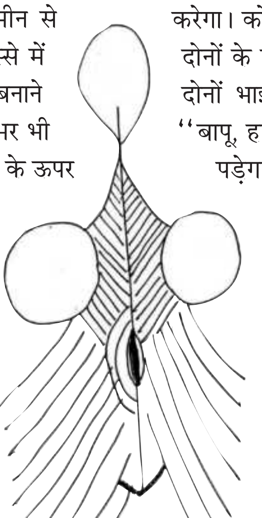

बेटे की बात सुनकर गोपालराय कुछ कहना चाहते थे, पर उसके पहले ही छोटा बेटा बोल पड़ा, ''हम लोग तो यह सोचकर आए थे कि आपको अपने साथ ले चलेंगे और वहाँ किसी अच्छे डॉक्टर को दिखाएँगे, पर बिना आपके यहाँ जमीन का सौदा कौन करेगा? जमीन-जायदाद के कागज-पत्तर उन्हें दिखाना होगा। बात पक्की हो जाएगी तो सूचना दीजिएगा, हम लोग तुरंत आ जाएँगे।''

गोपालराय क्या कहते, वे तो सोच रहे थे कि बेटों के साथ शहर जाकर अपना और पत्नी का ठीक से इलाज कराएँगे, जिससे जल्दी स्वास्थ्य लाभ हो। फिर पत्नी को उनके पास ही छोड़कर कुछ दिनों के लिए गाँव आकर यहाँ का भी सब काम देख लेंगे। इसलिए मौन ही रहे।

पिता के मुँह से कुछ नहीं निकला तो बड़ा बेटा बोल पड़ा, ''क्या सोच रहे हैं, कुछ बोले नहीं?''

''क्या बोलूँ, छुट्टी खत्म हो गई है तो तुम लोगों को वापस नौकरी पर जाना ही होगा।'' हताश मन से गोपालराय ने जवाब दिया।

अभी बेटों को वापस गए एक सप्ताह भी न हुआ था कि गाँव से दौलत काका का संदेशा मिला कि जमीन के खरीददार मिल गए हैं। तुम लोग गाँव आकर अपने बापू को लेकर रजिस्ट्री ऑफिस जाकर जमीन खरीददार के नाम करा दो और वहीं पैसा भी प्राप्त कर लो।

काका का संदेशा मिलते ही दोनों भाई दूसरे दिन गाँव पहुँच गए और उनके सम्मुख अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। सब मिलकर रजिस्ट्री ऑफिस गए, जहाँ जमीन बेचने और खरीदने की औपचारिकताएँ दोनों पक्षों ने पूरी कर लीं। सुरक्षा की दृष्टि से काका ने जमीन का मूल्य बड़े बेटे को सौंपवा दिया।

घर आकर दोनों भाइयों ने मंत्रणा की और फिर पिता से बोले, ''जमीन का इतना पैसा यहाँ रखना ठीक नहीं होगा, इसलिए कल ही हम लोग शहर लौटकर वहाँ बैंक में जमा कर देते हैं। फिर जैसा आप कहेंगे वैसा किया जाएगा।''

दोनों ने अपनी बात समाप्त की कि गोपालराय बोल पड़े, ''बेटा, अब तो गाँव में कुछ बचा नहीं है। अच्छा होता, यदि तुम लोग एक दिन बाद जाते तो हम लोग भी घर किसी को सौंपकर तुम्हारे साथ शहर चलकर रहते।''

पिता का प्रस्ताव सुनते ही बेटों के सम्मुख विकट समस्या खड़ी हो गई। दोनों में कौन इन लोगों को अपने साथ रखेगा और सेवा-सत्कार करेगा। कोई यह करने को उन्मुख नहीं था। क्योंकि माँ-बाप अब दोनों के लिए बोझ और बैरी लगने लगे थे। इससे मुक्ति के लिए दोनों भाई मिलकर कुचक्र रच डाला। पहले बड़े बेटे ने कहा, ''बापू, हम लोगों की छुट्टी समाप्त हो गई है। कल सुबह जाना ही पड़ेगा। इसलिए आप लोग कुछ दिन और यहीं रुक जाएँ, और इस घर को भी किसी के हाथ बेच दें। आखिर शहर जाने के बाद आप लोगों को इसकी चिंता सताती ही रहेगी। अच्छा होगा, सब से मुक्त होकर एक साथ शांति से शहर में रहें।'' इतना कहने के साथ उसने पिता की ओर एक कागज पर कुछ लिखकर बढ़ाते हुए कहा, ''यह लीजिए, हम लोगों के वाराणसी के घर का पता। आप लोग गाँव का सब काम समाप्त कर वहीं आ जाइएगा। हम लोग वहीं स्टेशन पर लेने आ जाएँगे। नहीं तो यह पता पूछकर आप लोग खुद भी आ सकते हैं।''

बेटों की प्रतिक्रिया गोपालराय को असहज कर रही थी, पर उम्र की लाचारी ने उन्हें सबकुछ देखने-सुनने के लिए विवश कर दिया। बोले, ''ठीक है।''

उत्तर में छोटे बेटे ने कहा, ''कल सोमवार है, हम लोग लौट जाएँगे। आप उसके बाद के सोमवार को ट्रेन पकड़कर वाराणसी आ जाइएगा। हम लोग स्टेशन पर ही मिल जाएँगे। इतने दिनों में यहाँ का काम भी समाप्त हो जाएगा।''

उम्र के बोझ ने गोपालराय को एक यंत्र बना दिया था। केवल आदेश पालन करने की स्थिति में ही रह गए थे। अपनी बात करने की स्थिति में नहीं थे। बेटे ने कागज दिया तो उसे बिना देखे और पढ़े रख लिया। वैसे भी उनकी बूढ़ी आँखें साफ पढ़ने की स्थिति में नहीं रह गई थीं। सोचा कि जब वाराणसी जाऊँगा तो दोनों बेटों में से कोई-न-कोई उन लोगों को लेने तो आएगा ही। फिर इसकी जरूरत ही क्या पड़ेगी। जरूरत पड़ भी गई तो किसी को दिखाकर पता पूछ लूँगा।

सप्ताह बीत गया। गोपाल राय ने दु:खी मन से घर की चाबी

दलपतराय को देकर उन्हीं के सहयोग से स्टेशन पर आकर वाराणसी की ट्रेन पकड़ ली। जैसे ही ट्रेन उनके गाँव के स्टेशन से चली, उनके आँखों में आँसू आ गए। पत्नी ने हिम्मत दी। यह जानते हुए कि यह धरती शायद अब फिर कभी देखने को न मिले।

दूसरे दिन ट्रेन सुबह ही गंतव्य स्टेशन पहुँच गई। गोपाल राय पत्नी और सामान के साथ प्लेटफॉर्म पर ही बेटों का इंतजार करते रहे। जब सभी सवारियाँ वहाँ से बाहर निकल गईं तो उन्होंने भी यह सोचकर की छुट्टी मिलने में देरी हो गई होगी। इसलिए जल्दी नहीं आ पाए। अच्छा होगा स्टेशन से बाहर होकर उनका इतजार करूँ। सुबह से दोपहर हो गई, पर बेटों की कोई झलक नहीं मिली तो निराश होकर बेटे के दिए हुए कागज को निकाला और पास ही खड़े एक रिक्शेवाले को दिखाकर कहा, ''हम लोगों को इस पते पर पहुँचा दो, जो किराया होगा ले लेना।''

कागज लेकर रिक्शेवाले ने उसे पढ़ा, फिर उन्हें देखकर सवाल किया, ''बाबा, क्या आपकी कोई संतान नहीं है क्या?''

''मेरे दो बेटे हैं, यह पता उन्हीं लोगों का है, जहाँ चलने को कह रहा हूँ।''

''यहाँ क्या करते हैं?''

''दोनों अच्छे पद पर हैं, पर अफसोस कि इसके पहले यहाँ आने का कभी मौका नहीं मिला, इसलिए घर नहीं देख पाए, पर दोनों एक ही मोहल्ले में रहते हैं। बेटों ने ही यह लिखा है, हाँ, मेरी आँखें पढ़ नहीं पाती हैं, नहीं तो मैं ही पढ़कर तुम्हें बता देता।''

गोपालराय की बातों को सुन रिक्शेवाला बहुत दु:खी हुआ। वह समझ नहीं पा रहा था कि इन लोगों को कैसे बताए कि इसमें घर का पता नहीं, कुछ और लिखा हुआ है। उन लोगों को सच बताने का साहस नहीं जुटा पाया। सोचा कि अच्छा होगा, यदि अनभिज्ञ हो जाऊँ। इसलिए कागज उन्हें वापस लौटाते हुए कहा, ''बाबा, मैं अभी कुछ दिनों से ही इस शहर में रिक्शा चला रहा हूँ। इसलिए इस जगह को नहीं जानता।''

युवा रिक्शावाले की बात सुनकर उन्हें बहुत निराशा हुई, पर हताश नहीं हुए। उन्हें एक प्रौढ़ रिक्शावाला दिखा तो आशा जगी कि शायद इसे पता हो, उसे कागज देकर लिखे पते पर पहुँचाने का अनुरोध किया।

प्रौढ़ रिक्शावाला समाज में आए बदलाव और रिश्तों का अवमूल्यन काफी नजदीक से देख रहा था। कागज पढ़ते ही वही सवाल किया, जो पहलेवाले ने किया था—''काका, आपके कोई संतान नहीं है क्या?''

''क्यों, बेटा?''

''यह पता कागज पर किसने लिखा है?''

''मेरे बड़े बेटे ने।'' गोपाल राय ने स्पष्ट किया।

गोपालराय की बात सुन प्रौढ़ रिक्शेवाले की आँखें शब्दों को पढ़कर फटी-की-फटी रह गईं। उसे विश्वास नहीं हुआ कि किसी के बेटे ने अपने पिता के लिए ये शब्द लिखे। तभी तो उसने सवाल किया—''काका, क्या गाँव आपको अच्छा नहीं लग रहा था, जो यहाँ चले आए?''

''नहीं बेटा, मेरा मन तो गाँव छोड़ने को बिल्कुल नहीं था। पर बेटों ने जिद की कि यहाँ आप लोग अकेले कैसे रहेंगे इस उम्र में, उन्हीं लोगों के कारण यहाँ आना पड़ा।''

''गाँव में तो आपकी खेती-बाड़ी होगी ही। उसे अब कौन देखेगा?''

''अच्छी-खासी थी, पर एक सप्ताह पहले ही बेटों ने सब बिकवाकर पैसों के साथ आ गए और मुझे एक सप्ताह बाद इसी पते पर आने को कह गए थे।''

गोपालराय के भोलेपन को देख प्रौढ़ रिक्शावाले को उन पर दया आ रही थी, साथ ही बेटों के मोह में पड़कर नारकीय जीवन जीने की स्थिति आने के लिए उन पर क्रोध भी आ रहा था। पर वह कर भी क्या सकता था। शहर की नारकीय स्थिति से तो अच्छा होगा कि ये लोग गाँव लौट जाएँ। वहाँ कोई-न-कोई दया दिखाकर अपने घर शरण दे देगा। इन्हीं भावों को लेकर वह प्रौढ़ रिक्शावाले ने पूछा, ''काका, आपने पढ़ा इसमें क्या लिखा है?''

''बेटा, आँख से साफ नहीं दिखता। इसलिए बिना पढ़े रख लिया था। तुम ही बताओ, क्या लिखा है?'' गोपालराय ने विवशता दरशाई तो रिक्शेवाला बोला, ''काका, इस कागज पर लिखा है कि ये दोनों लोग असहाय हैं। इनकी कोई संतान नहीं है। पत्र पढ़नेवाले अगर इन्हें किसी वृद्धाश्रम में पहुँचा देंगे तो बहुत धर्म का काम होगा।''

कागज पर लिखे शब्द को सुनकर गोपालराय के नेत्र से आँसू बह निकले। पत्नी तो बेहोश होते-होते बची। अपने कोख से जना इतना बड़ा झूठ बोलेगा। कुछ पल तक दोनों को समझ ही नहीं आया कि अब क्या किया जाए। कुछ देर बात गोपालराय ने अपने दिल को मजबूत किया और रिक्शावाले से कहा, ''बेटा, तुम्हें कष्ट न हो तो कागज पर लिखे स्थान पर हम लोगों को पहुँचा दो, जो भाड़ा होगा, हम दे देंगे।''

''काका, भाड़े की बात आप न करें, मेरी सलाह मानें तो आप लोग गाँव लौट जाएँ। हम आप लोगों को ट्रेन में बैठा देंगे।'' प्रौढ़ रिक्शेवाले ने मानवता दिखाते हुए सलाह दी।

''नहीं बेटा, अब गाँव भी जाकर क्या करूँगा?''

''क्यों?''

''बेटों ने तो गाँव में भी कुछ नहीं छोड़ा है मेरे लिए। वापस जाऊँगा तो लोगों को क्या कहूँगा? इसलिए लौट आया कि बेटे अपनी स्वार्थ लिप्सा में इतने गिर गए हैं कि उन लोगों ने अपना पता देने की जगह वृद्धाश्रम पहुँचाने के लिए अज्ञात व्यक्ति को पत्र लिख दिया था।'' अपनी विवशता को दरशाते हुए अनुरोध भी किया, ''बेटे, तुम दया कर हम लोगों को उसी जगह छोड़ दो, जहाँ इस कागज में लिखा है। शेष जीवन हम लोगों का अब वहीं किसी तरह कट जाएगा। गाँव के लोग भी यही सोचेंगे-समझेंगे कि हम लोग अपने बेटों के साथ खुशी से रह रहे हैं। इस प्रकार यह गलत संदेश गाँव के लोगों तक नहीं पहुँच पाएगा कि संपन्न बेटों ने स्वार्थ में अपने माँ-बाप का सबकुछ लेकर अनाथ वृद्धाश्रम में रहने को भिजवा दिया।

४४-शिव विहार, फरीदी नगर,
लखनऊ-२२६०१५
दूरभाष : ९४१५०४५५८४

पुण्यतिथि (२२ जून) पर विशेष

'विक्रम' के पराक्रम का सूर्य

● राजशेखर व्यास

'प्राय: कहा करता हूँ कि चंदन की छाया में कुछ दिन रहने का सौभाग्य मिला था, सो दुनिया समझ रही मुझको, मैं भी मलयानिल हूँ, मैं भी चंदन हूँ।'

वस्तुत: पंडित व्यास पर लिखने/बोलने के अधिकारी तो डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय हैं, जिन्होंने पं. सूर्यनारायण व्यास के समस्त जीवन एवं साहित्य पर बड़ा आलोड़न-विलोड़न किया है और एक ग्रंथ 'अनुष्टुप' का संपादन भी।

फिर कई बार मैं स्वयं चौंकता हूँ कि पंडितजी अपने से ६०-६० बरस उम्र में छोटे लोगों से कैसे गहन और जीवत संपर्क रखते थे।

जब व्यासजी के बारे में मैं बात करता हूँ तो मुझे कभी-कभी और कई बार राह समझ में नहीं आता कि मैं कौन से व्यासजी की बात कर रहा हूँ 'लेखक सूर्यनारायण व्यास, पत्रकार सूर्यनारायण व्यास, क्रांतिकारी सूर्यनारायण व्यास, इतिहासकार सूर्यनारायण व्यास, ज्योतिषाचार्य सूर्यनारायण व्यास या कालिदास समारोह के संस्थापक सूर्यनारायण व्यास, विक्रम विश्वविद्यालय के निर्माता सूर्यनारायण व्यास, जितना आसान लगता है एक-एक शब्द में यह सब कह देना, उतना ही मुश्किल एक-एक बात पर जीवन व्यतीत हो जाए तो भी कम है। जैसे-जैसे मैं उनके पत्रों, साहित्य से गुजरता हूँ तो मैं कई बार कँपकँपा उठता हूँ कि कैसे एक आदमी, इतनी विभिन्न विधाओं में एक साथ और इतनी तन्मयता के साथ कार्य करता है। अकेले अकादमी बना देना या कालिदास समारोह को जन्म दे देना और उसे जीवनभर चलाए रखना, वर्ष ५८ में शासन को सौंपा, वर्ष २८ से ५८ तक तो उसे उन्होंने स्वयं चलाया। मैंने भी विगत वर्षों में व्यासजी का जन्म शताब्दी मनाने का दु:साहस किया एक बरस, दो बरस आप कितना बड़ा भव्य समारोह करोगे। भारत सरकार ने उनपर डाक टिकट निकाला, दो फिल्म बन गईं, किताबें छप गईं, ज्ञानपीठ से 'यादें' पुस्तक आ गई, लेकिन आपको लगता है कि कैसे एक व्यक्ति अनवरत इस समारोह को जारी रखता होगा बगैर किसी शासकीय सहयोग के, तो मैं सिर्फ समारोह की संकल्पना, जिस विक्रम 'कीर्ति मंदिर' में समारोह का उद्घाटन होता रहा है, उस 'कीर्ति मंदिर' के निर्माता भी पं. सू.ना. व्यास हैं। तो बहुत सारी बातें सोचने में आती हैं। जो कुछ मुझे बचपन में चार साल उनके साथ बैठने का सौभाग्य मिला तो प्रभाकर श्रोत्रिय बालकवि बैरागीजी हैं, तो मुझे बल मिल जाता है कि जो कुछ उनके मानस पुत्र हैं, उनसे रोशनी मिलती है।

आज मेरा मन है कि पत्रकार 'विक्रम' संपादक सूर्यनारायण व्यासजी के बारे में आपको कुछ बताऊँ। उसका भी कालिदास समारोह से गहरा नाता है। पत्रकार सूर्यनारायण व्यास का वर्ष १९४२ में उज्जैन ही में ५८ में अखिल भारतीय कालिदास समारोह की जो बात की जाती है, उससे पहले १९४२ में विक्रम द्विसहस्राब्दी समारोह की परिकल्पना और संकल्पना पं. सूर्यनारायण व्यास ने की। वे स्वयं उस समय ४० वर्ष के थे। (१९०२ में जनमे) और लगभग ११४ देशी राजाओं को उन्होंने उज्जयनी में एकत्र किया। कुंभ का भी पर्व था। असंख्य यात्रियों का जुलूस, विक्रमादित्य का और संवत् स्थापना हेतु उन्होंने 'विक्रम' पत्र का प्रकाशन आरंभ किया; उसके पहले आरंभिक पाँच अंकों के सपादक थे हिंदी के विलक्षण संपादकाचार्य पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र'। उग्रजी महाराज के इस 'विक्रम' पत्र के संपादक संचालक हुए पं. सू.ना. व्यास। मोहन प्रेस, जो पंडितजी की अपनी प्रेस थी, जहाँ से वे पंचांग निकाला करते थे। सेंट्रल इंडिया की सबसे बड़ी प्रेस थी। लगभग ४०० कर्मचारी वहाँ काम करते थे।

उनके काम करनेवालों की सूची अंत में मैं आपको दूँगा तो आप चौंकेंगे। जो कंपोजिटर हैं, जो इस राष्ट्र के बहुत बड़े नाम हैं। जिन्होंने कंपोजिंग की विक्रम कार्यालय में। दुर्भाग्य मालवा का यह है कि अपने अग्रजों से भी अकसर कहता हूँ कि मैं न किसी प्रदेश और राज्य के चिंतन से जुड़ा हुआ हूँ, न प्रदेशवादी हूँ, न जातिवादी हूँ, लेकिन जो इलाहाबाद को यश मिला पत्रकारिता में, दिल्ली के जो गुण गाए जाते हैं या कानपुर के गणेश शंकर विद्यार्थीजी हालाँकि मालवा से गए थे, पुराने लोग शायद जानते हों। बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' भी यहाँ हमारे शाजापुर से गए थे, प्रभागचंद शर्मा भी, लेकिन जो यश मालवा को मिलना चाहिए, जिस यश का मालवा सच्चा हकदार है, वह अब तक नहीं मिला। सुभद्रा कुमारी चौहान लिखती थीं, माखनलाल चतुर्वेदी लिखते थे, सिद्धनाथ माधव आगरकर लिखते थे, लेकिन वे कोर्स बुक में क्या जाएगा, यह ध्यान में रखकर नहीं लिखते थे। कम-से-कम डॉ. रामकुमार वर्मा की तरह 'एकांकी' या धीरेंद्र वर्मा की तरह 'एकांकी' लिखते हों कि ये पाठ्य पुस्तकीय लेखन हो जाए, इस कुटी से उनका लेखन नहीं होता था। सन् १९४२ में जब 'विक्रम' पत्र का आरंभ हुआ तो व्यासजी ने उसमें अपनी संकल्पनाएँ साफ-सुथरे ढंग से कह दीं कि मेरे तीन लक्ष्य हैं—पहला, उज्जयिनी में विक्रम विश्वविद्यालय की स्थापना। दूसरा,

विक्रम कीर्ति मंदिर की स्थापना और तीसरा, हिंदी, मराठी और अंग्रेजी में अपने युग का सबसे बड़ा जीवंत दस्तावेज 'विक्रम स्मृति ग्रंथ' का प्रकाशन है। आज उनके ये तीनों स्वप्न साकार उज्जयिनी में खड़े हैं, मगर उनके नाम का अब कहीं अता-पता नहीं है।

लेखन की दृष्टि से सू.ना. व्यास ने 'विक्रम' का नाम इसलिए नहीं उठाया कि ये कोई राजा हैं। प्रगतिशील लेखकों या मार्क्सवादियों को कुछ ऐसा लगता हो तो मैं उनको यह जानकारी दे दूँ कि पं. सू.ना. व्यास बोल्शेविज्म और कम्युनिस्टों पर १९१८ से पहले यानी बहुत पहले लिख चुके थे। इसलिए नहीं कि 'विक्रम' कोई हिंदुवादी राजा हैं। बरसों से यह पढ़ाया जा रहा था कि हम मुगलों के, अग्रेजों के गुलाम हैं, हारे हुए, थके हुए जुआरी हैं, लुटे-पिटे, मरे हुए निराश, पराधीन और आत्मविश्वासहीन भारतीय हैं। तब इतिहास से 'विक्रम' नाम के पराक्रम का चरित्र निकालकर सूर्यनारायण व्यासजी ने और अब तो 'स्वर्ण-पत्र' में लिखी वह कविता भी उपलब्ध है, जो अरब, ईरान तक में जरहम-बिरतोई पंडितजी ने 'विक्रम स्मृति ग्रंथ' में प्रकाशित की। उन्होंने विक्रम को अपने पराक्रम का चरित्र बनाया और भारतीय डाक टिकट विभाग ने जब उन पर डाक टिकट निकाली तो तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने भी एक सुंदर बात कही कि वे चाहते तो महाकाल यूनिवर्सिटी रख देते और वे चाहते तो पं. सू.ना. व्यास विश्वविद्यालय भी रखवा देते, किसी और से बात उठवा कर, क्योंकि प्राय: ही होता है कि सागर यूनिवर्सिटी हरि सिंह गौर के नाम से जानी जाती है। बनारस यूनिवर्सिटी मदन मोहन मालवीय के नाम से, लेकिन विक्रम यूनिवर्सिटी के तो संस्थापक के बारे में प्राय: ऐसा हुआ कि कई कुलपतियों को भी नहीं मालूम था कि कौन थे वे संस्थापक। पं. व्यासजी ने अपना नाम कहीं चाहा नहीं। लेकिन 'विक्रम' क्यों? यह बहुत महत्त्वपूर्ण बात है। उन्होंने भारतायों के सोए हुए पराक्रम को जगाने के लिए विक्रम के नाम पर विश्वविद्यालय चाहा। मंदिरों और मसजिदों के शहर में उन्होंने कम-से-कम मंदिर और मठ नहीं बनाए, शिक्षा अनुसंधान और कला संस्थान खुलवाए तथा यह बहुत महत्त्वपूर्ण बात है कि जब-जब राजधानी का प्रश्न आया, उसी 'विक्रम' में सू.ना. व्यास की संपादक की टिप्पणी है। १९४२ में वे लिखते हैं कि 'दिल्ली राष्ट्र की असुरक्षित राजधानी होगी।' संपादकीय उनकी संपादकीय के नाम बहुत सुंदर होते थे, पहले वे लिखते थे 'बिंदु-बिंदु विचार'। उग्रजी लगभग ५ अंकों के संपादन के बाद व्यासजी से अलग हो गए। २-४ अंक जब्त हुए, शासन ने उनसे कहा कि माफी माँगें। पंडितजी और उग्रजी ने माफी माँगने से इनकार किया। फिर उग्रजी और पंडितजी में आगे जाकर मजेदार बैर हुआ और उग्रजी घर में ही रहते हुए विक्रम से पृथक् हो गए।

बड़े संपादक हुआ करते थे रामानंद चटर्जी के यहाँ, जैसे बनारसी दासजी रहते थे और विरोध में भी लिखते थे। उग्रजी ने व्यासजी के खिलाफ भी लिखा है 'विक्रम' में रहते हुए, पर मैं ऐसा मानता हूँ कि बड़ों के झगड़े बड़े ही समझ पाते हैं, छोटे आदमी नहीं। यहाँ हिंदी के एक बड़े कवि हुआ करते थे, अब नहीं रहे, महेश शरण जौहरी 'ललित', मुझे

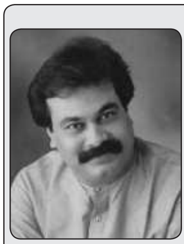

देश-विदेश की प्रायः सभी पत्र-पत्रिकाओं में लगभग ३,५०० लेख प्रकाशित। लगभग ५४ ग्रंथों की रचना। उज्जयिनी पर ३ महत्त्वपूर्ण वृत्तचित्र। अब तक २०० से अधिक वृत्तचित्र, कार्यक्रमों का निर्माण, निर्देशन, लेखन तथा प्रसारण। फ्रांस सरकार एवं संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार से फैलोशिप तथा अनेक सम्मान।

उन्होंने एक बार संस्मरण सुनाए थे, जब व्यासजी और उग्रजी में थोड़ी खट-पट हुई थी तो उज्जैन के कुछ ५-५० विघ्न संतोषी साहित्यकार उग्रजी महाराज के पास जा पहुँचे। साहब व्यासजी के खिलाफ कुछ मसाला लेकर आए हैं, आप इसको छापिए।

तो उग्रजी ने कहा कि 'जब दो शेरों का झगड़ा हो तो मुझे गीदड़ों की जरूरत नहीं होती। पं. सूर्य नारायण व्यास पर हमला तो मैं ही करूँगा, कोई दूसरा नहीं करेगा', लेकिन बाद में जब सूर्यनारायण व्यास गिरफ्तार हुए 'इंडियन डिफेंस ऐक्ट' आजादी की लड़ाई में तो अकेला उग्र ही, जिसने संपादकीय लिखा है कि सूर्य नारायण व्यास का मित्र नहीं, शत्रु हूँ। हाँ, हिंदी संसार भी जानता है, सच भी है, पर मैंने जीवन भर उसके खिलाफ लिखा है, पर मार डालने की नीयत से कम और कूट-पीट के पुष्ट बनाने की नीयत से अधिक। ये ऐसे महान् लोग थे।

ग्वालियर महाराज को चेतावनी देते हुए उग्रजी उसमें लिख रहे हैं कि अब संपादक 'सूर्य नारायण व्यास' विक्रम संपादक जेल से छूटेंगे तो क्या करेंगे, हरि भजन या देशसेवा?

उग्रजी 'मतवाला' में लिख रहे हैं—नहीं। ग्वालियर महाराज शायद भूल गए हैं, वे लिखते हैं कि व्यासजी को भी जनता के निकट जाने का बड़ा शौक था। अब जेल भुगते, फिर आगे पंक्ति लिखते हैं कि महाराज भूल रहे हैं कि व्यासजी को जेल में डालकर मध्यभारत को एक नया तप:पूत व्यक्तित्व प्रदान करने जा रहे हैं। ये उग्र की टिप्पणी थी, जिस उग्रजी के साथ पंडितजी का उठना-बैठना था। 'विक्रम' में 'व्यासोवाच' शीर्षक से संपादक व्यासजी लिखा करते थे। उससे पहले 'बिंदु-बिंदु विचार'। उन्होंने १९४२ में लिखा कि दिल्ली जो है, वह राष्ट्र की असुरक्षित राजधानी होगी, किन कारणों से यहाँ कोई ज्योतिषिय कारण नहीं। पंडितजी यहाँ अपना 'भविष्य वक्त' विक्रम में नहीं लाते। बाकायदा भू-गर्भीय विश्लेषण दे रहे हैं कि दिल्ली सुरक्षा की दृष्टि से असुरक्षित राजधानी रहेगी, फिर कौन सी राजधानी हो? वे कहते हैं कि उज्जैन ही 'विक्रम' की राजधानी सबसे सुरक्षित है। विक्रमादित्य की नगरी है। उस पर राजेंद्र बाबू के बयान आ रहे हैं, अमरनाथ झा के बयान आ रहे हैं और वे सब विक्रम में छप रहे हैं कि उज्जैन ही सर्वाधिक सुंदर राजधानी हो सकती है। नहीं बनी। राष्ट्र आजाद हो गया। पं. व्यासजी बोले कि मध्य भारत की राजधानी बने, नहीं बनी। पं. व्यासजी 'विक्रम विश्वविद्यालय' के लिए आग्रह किया कि यूनिवर्सिटी मेरे शहर को चाहिए। इस पर बालकवि बैरागी ने लिखा है कि पं. व्यासजी के पं. नेहरू से दो टूक सवाद बहुत उम्दा हुए। जवाहरलालजी ने उन पर

व्यंग्य करते हुए कहा कि पंडितजी, आप तो उज्जैन को राष्ट्र की राजधानी बनाना चाहते थे, वो तो बनी नहीं। म.प्र. की भी नहीं बनी, अब आप विश्वविद्यालय पर अड़े हैं, क्या वजह है कि अब इस पर भी मान गए आप, तब तक इंदौर भोपाल में विश्वविद्यालय नहीं थे। यह बात याद रखने की है, व्यासजी ने कहा कि 'जवाहरलालजी आजादी की लड़ाई में हम भी लड़ते थे, अभी भी थके तो नहीं हैं, पर मेरा ऐसा मानना है कि मेरे शहर में विश्वविद्यालय आ गया तो मेरी बाकी लड़ाई मेरे शहर के छात्र खुद लड़ लेंगे। इस नगर की अस्मिता की लड़ाई, छात्र पढ़-लिख लेंगे तो अपने शहर की अन्य लडाइयाँ भी लड़ लेंगे।'

उस 'विक्रम' पत्र के संपादक सूर्य नारायण व्यास ने आज जो हम, 'आपकी अदालत' टी.वी. चैनल पर देखते हैं, 'जनवाणी' देखते हैं, बहुत सारे कार्यक्रम, 'खुला मंच' और 'जन-मंच' आते हैं, वर्षों पूर्व एक नियमित एक कॉलम चलाते थे पंडितजी उसमें 'मंत्रियों के श्रीमुख से'। यह मैं जो घटना दे रहा हूँ सन् ५० की है। देश को आजाद हुए कुल जमा ३ वर्ष हुए थे। व्यासजी अपने पत्र 'विकम' में एक स्तंभ की शुरुआत करते हैं 'मंत्रियों के श्रीमुख से', उसमें उस समय के राष्ट्र के राष्ट्रपति से लेकर (जिनसे उनकी व्यक्तिगत और अंतरंग मित्रता भी है) प्रधानमंत्री और अन्य केंद्रीय मंत्रियों को, उनको एक पत्र लिखते हैं, एक-एक समस्या देते हैं। राजेंद्र बाबू से राष्ट्र के संविधान के बारे में लिखते हैं कि मेरा ऐसा मानना है कि हमारा संविधान दुनिया भर के संविधान की नकल भर है, उसमें भारतीयता का पुट नहीं है। इस विषय पर आपका क्या कहना है?

उस 'विक्रम' पत्र के संपादक सूर्य नारायण व्यास ने आज जो हम, 'आपकी अदालत' टी.वी. चैनल पर देखते हैं, 'जनवाणी' देखते हैं, बहुत सारे कार्यक्रम, 'खुला मंच' और 'जन-मंच' आते हैं, वर्षों पूर्व एक नियमित एक कॉलम चलाते थे पंडितजी उसमें 'मंत्रियों के श्रीमुख से'। यह मैं जो घटना दे रहा हूँ सन् ५० की है। देश को आजाद हुए कुल जमा ३ वर्ष हुए थे। व्यासजी अपने पत्र 'विकम' में एक स्तंभ की शुरुआत करते हैं 'मंत्रियों के श्रीमुख से', उसमें उस समय के राष्ट्र के राष्ट्रपति से लेकर (जिनसे उनकी व्यक्तिगत और अंतरंग मित्रता भी है) प्रधानमंत्री और अन्य केंद्रीय मंत्रियों को, उनको एक पत्र लिखते हैं, एक-एक समस्या देते हैं। राजेंद्र बाबू से राष्ट्र के संविधान के बारे में लिखते हैं कि मेरा ऐसा मानना है कि हमारा संविधान दुनिया भर के संविधान की नकल भर है, उसमें भारतीयता का पुट नहीं है। इस विषय पर आपका क्या कहना है?

राजेंद्र बाबू का उत्तर उसमें आता है—सरदार पटेल को लिख रहे हैं कि गृह-समस्या, कश्मीर-समस्या पर जवाहरलाल नेहरू से उनके पत्र व्यवहार। बार-बार उसमें लिख रहे हैं कि यह संपादक 'विक्रम' की बात है। मेरे-आपके व्यक्तिगत संबंध और स्नेह-सोहार्द का इससे कोई संबंध नहीं। अब वे 'कश्मीर' की समस्या पर लिखते हुए जवाहरलालजी से कह रहे हैं कि इसे आपने यू.एन.ओ. में भेजकर एक नासूर बना दिया, इस बारे में आपकी टिप्पणी क्या है? जवाहरलालजी कहते हैं कि एक प्रश्न ऐसा बार-बार दोहराया जाना मुझे उचित प्रतीत नहीं होता।

तो पंडितजी लिख रहे हैं कि जो दिल और दिमागों को मथ रहा है, वह कश्मीर अब दोहराया जाना उचित प्रतीत नहीं होता, यह राष्ट्र का आगे जाकर विकराल दानव रूप लेगा। यह लेखमाला है, जो कई महीनों चली। उसका सबसे दिलचस्प उस लेखमाला का अंत बताऊँ तो आप चौंकेंगे। २० किस्त में है, अंतिम लेख मध्य भारत के कोई मुख्यमंत्री थे—गोपीकृष्ण विजयवर्गीय, पंडितजी ने लिखा कि देश को आजाद हुए अभी ३ साल नहीं हुए हैं, कल तक वे आदमी, जो घर के दरवाजे पर दुम हिलाते घूमते थे, वे सत्ता के दलाल अपने आपको वायसराय समझकर सत्ता की कुरसियों पर बैठ गए हैं। संपादक की भाषा है, जो बड़ी जबरदस्त है उसमें लिखते हैं कि जनता के पत्रों का उत्तर भी छपा-छपाया देने का दुस्साहस करते हैं कि मैं मामले को दिखवा रहा हूँ ऐसा हो रहा है तो कई मामलों में यह भी कि कई राजनेता लिख रहे हैं कि चूँकि मैं मामले से अनभिज्ञ हूँ, इसलिए इस बारे में तहकीकात करूँगा। तो पंडितजी लिखते हैं कि जो राजनेता जनता के पत्रों का उत्तर भी छपा-छपाया देने का दुस्साहस करता है, उसका हश्र क्या होना चाहिए? अगले अंक समाचार टिप्पणी में लिखते हैं कि श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय पदच्युत हुए। उनको निकाल दिया गया। तो लिखते हैं, जनता के प्रश्नों का उत्तर न देकर गोपीकृष्णजी आज हमारे प्रश्नों का खुद उत्तर बनकर प्रत्यक्ष उदाहरण बन गए हैं कि जो जन-मन का अनादर करेगा, उसको लोकमत कैसे बाहर निकाल फेंकेगा।

इस तरह की अदभुत किश्त/धारावाहिक टिप्पणियाँ एक तरफ संपादक व्यासजी में ऐसी प्रखर तेजस्विता 'बिंदु-बिंदु विचार' बाद में रामानंद दोशी ने 'कादंबनी' में उनका यही शीर्षक लिया। अटल बिहारी वाजपेयीजी ने भी अपनी पुस्तक का शीर्षक लिया और उसमें उल्लेख किया कि 'मैं विक्रम से प्रभावित हूँ।' मुझे विष्णुकांत शास्त्रीजी ने एक पत्र लिखा कि मेरे पिता नरोत्तम शास्त्रीजी नियमित 'विक्रम' पढ़ते थे और मैं बचपन में 'विक्रम' का पाठक था। नियमित पाठक। मुझे राजेंद्र माथुर ने कहा था कि मैं अपने बचपन में रामानुजकोट उज्जैन में रहता था और रोडेशिया, साइप्रस, ईरान, इराक पर कोई आदमी उज्जैन में बैठकर लिखता है, यह बात मुझे बहुत चौंकाती थी। मैं रामानुजकोट की लाइब्रेरी में 'विक्रम' के १६ पृष्ठ के संपादकीय ही पढ़ता था। एक प्रसंग, जिसका उल्लेख प्रभाकर श्रोत्रीय ने भी 'अनुष्टुप' में किया है। 'अभाव मगर दबाव नहीं।' ग्वालियर में चार महारानी के बाद एक युवराज का जन्म हुआ, जिन्हें हम सब लोग आज 'श्रीमंत माधवराव सिंधिया' (अब तो वे

भी स्व.) के नाम से जानते हैं। वे भी हमारे बीच अब नहीं हैं। मेरे उनसे अच्छे अंतरंग संबंध रहे हैं। उनके जन्म के अवसर पर महाराज सिंधिया ने राष्ट्र की सब पत्र-पत्रिकाओं को कुछ पुरस्कार भिजवाए।

उस समय 'विक्रम' को भी ५,००० रुपयों का पुरस्कार पहुँचाया गया। पं. सूर्य नारायण व्यासजी ने अगले ही क्षण उस चेक को आदरपूर्वक लौटाते हुए, उस चेक का मय नं. पत्र अगले सपादकीय में छाप दिया। जिससे मेरे संपादकीय और पत्रकारिता को प्रभावित करने की कोशिश की जाती हो, 'विक्रम' इस तरह के पुरस्कार नहीं स्वीकार करता। दूसरी तरफ वही व्यासजी 'विक्रम' यूनिवर्सिटी के लिए महाराजा सिंधिया के आगे हाथ भी पसारते हैं। लेकिन घर आए ५,००० रुपयों के चेक को लौटा देना और उसे अपने संपादकीय में प्रकाशित कर देना कि इससे मेरी पत्रकारिता को प्रभावित करने की कोशिश की गई, यह पुरस्कार मेरे मन को स्वीकार नहीं है। और जब 'विक्रम' बंद किया तो उन्होंने लिखा है कि मैं अपने हाथों अपने बेटे का गला घोटना उचित समझूँगा, किसी और के द्वार पर भीख माँगने के बनिस्बत। तो विक्रम के अंतिम संपादकीय में पं. सूर्यनारायण व्यास ने लिखा है कि हम पुनर्जन्म में विश्वास करते हैं, चाहे कोई करे न करे। मैं जानता हूँ कि एक दिन 'विक्रम' फिर जनमेगा और मुझे उम्मीद थी तथा जब पं. व्यासजी ने कहा कि मेरी आत्मा को संतोष इस बात का है कि जब मैं विक्रम विश्वविद्यालय बना पाया। विक्रम विश्वविद्यालय का जो त्रैमासिक जर्नल था, उसका नाम भी उन्होंने 'विक्रम' ही रखा, जो आज भी जीवित है।

संपादक की जो गरिमा, संपादक का जो रूप, आचार-विचार और व्यवहार मर्यादा का व्याकरण आप पाएँगे कि गणेशशंकर विद्यार्थी, माखन लाल चतुर्वेदी, सिद्धनाथ माधव आगरकर, बाबूराव विष्णुपराड़कर, कृष्णराव गर्दे, माधवराव सप्रे और १०-५ बड़े नाम अगर आप देंगे तो सूर्य नारायण व्यास हिंदी के उन ५ सवारों में इसलिए भी दिखाई देंगे, बनारसी दास चतुर्वेदी ने 'विक्रम' का सिर्फ २ वर्षों का आकलन करते हुए लिखा था कि जो काम आपने मालव भूमि के लिए विक्रम के माध्यम से किया है, उसका शतांश भी हमसे हमारे बृज के लिए नहीं बन पड़ा है। अगर २ वर्षों में एक आदमी 'विक्रम यूनिवर्सिटी' खड़ी कर सकता है, विक्रम कीर्ति मंदिर खड़ा कर देता है और 'विक्रम स्मृति ग्रंथ' हिंदी, मराठी और अंग्रेजी में। खुद मैं भी २००२ तक जन्म शताब्दी वर्ष तक यही मानता था कि 'विक्रम स्मृति ग्रंथ' जो है हिंदी में है, वही मराठी में है और वही अंग्रेजी में है। लेकिन तीनों भाषाओं में तीन पृथक्-पृथक् ग्रंथ हैं। हजार पृष्ठ का वह ग्रंथ है। संसार भर के महान् विद्वानों का विक्रम पर लिखा हुआ एक जगह। संपादक व्यासजी की और अनेक भूमिकाएँ थीं, 'विक्रम' पत्र के माध्यम से वे अपने प्रेस में क्रांतिकारियों को प्रश्रय दिया करते थे, और यह बात मुझे वर्ष ८० के सिंहस्थ में जब ज्ञात हुई तो 'श्रीराम शर्मा' शांतिकुंज वाले, जो गायत्री युग निर्माण योजना 'हम बदलेंगे युग बदलेगा', वे १९४२ में विक्रम के मोहन प्रिंटिंग प्रेस में छुपकर रहे। १९४२ की क्रांति के समय श्रीराम शर्मा एक और हुए पं. उदयन शर्मा वे भी अब स्व. के पिता। पत्रकार उदयन शर्मा के पिता, जो शिकार कथाएँ लिखते थे, वे यहाँ रह चुके हैं। बाद के काल में उनके प्रेस में काम करनेवालों में से प्रवासीलाल वर्मा मालवीय, जो प्रेमचंदजी के साथ चले गए। बालकृष्ण शर्मा, नवीन के भाई संतु, जिन पर बालकृष्ण शर्मा नवीन की सबसे मार्मिक कहानी है। और बसंतीलाल 'बम', श्रीधर पाठक से लेकर बड़ी भारी परंपरा रही। लेकिन ८ बरस तक 'विक्रम' जो उन्होंने निकाले, आज उसके २५३६ पृष्ठ के संपादकीय भी। 'विक्रम' के अंकों पर उन्होंने 'कालिदास' पर एक विशेष अंक निकाला। 'विक्रम' पर विशेषांक निकाले। 'सिंहस्थ' अंक निकाले। मालवी अंक, आगरकर स्मृति अंक, हृदयांक निकाले। जो आज भी ऐतिहासिक दुर्लभ धरोहर हैं। लेकिन सबसे दिलचस्प बात कि वे 'विक्रम' का होली अंक भी निकालते और उसमें अनेक अंतरराष्ट्रीय राजनेताओं पर अंतरराष्ट्रीय व्यंग्य भी छापते थे। १६ पेज की संपादकीय के साथ-साथ व्यंग्यकार व्यासजी का वह रूप। साथ-साथ विक्रमांक का जो सबसे बड़ा योगदान है, जो मैं मानता हूँ कि आज प्रायः लुप्त हो गया है। आज की पूरी-की-पूरी पीढ़ी अपने संस्कार दाताओं के प्रति कृतज्ञ नहीं है। मैं अकसर डॉ. सुमन से भी कहा करता था कि आपको जो प्रेम मिला है 'निरालाजी' से, अपने युग के महापुरुष से मैंने स्मृति-लेख में पढ़ा था। तो गंगा का यह जो एक प्रवाह है, अपने अग्रजों से मिलता आ रहा है, उसको न रोकें, क्योंकि वह प्रवाह अपने बाद-बाद की पीढ़ियों तक जाएगा। पं. व्यासजी ने अपने अग्रजों पर विशेषांक निकाले, प्रोफेसर रमाशंकर शुक्ल 'हृदय' विशेषांक, सिद्धनाथ माधव आगरकर विशेषांक, लोग कम जानते हैं।

तब हिंदी के समीक्षकों पद्म सिंह शर्मा ने, बनारसी दासजी चतुर्वेदी ने कहा—'नहीं, यह अभावों की नहीं 'सद्भावों की भेंट' है। आज कितने लोग हैं, जो अपने अग्रजों के प्रति इस भाव से जीते हैं! मैं नहीं जानता, इलाहबाद में कितने लोग अब इलाचंद्र जोशी को स्मरण भी करते हो? कितने ही धर्मवीर भारती उन्होंने बनाए थे, लेकिन हमारे संस्कार दाताओं के प्रति हम किस तरह से भुलक्कड़ और कृतघ्न होते चले जा रहे हैं और उस पर से हमें यह भ्रम है कि हमें लोग याद रखेंगे। आज से १०० वर्ष पहले मुझे लगता है कि महान् लोगों, महान् विद्वानों और विचारकों की और साथ-साथ राष्ट्रभक्तों की पीढ़ी रही थी, अंधे राष्ट्रभक्तों की नहीं, जिस तरह आज चौतरफा दिखाई दे रहे हैं महान् राष्ट्रभक्तों की पीढ़ी। लेकिन अब मुझे लगता है कि आज यह पूरी की पूरी शताब्दी बौनों की शताब्दी है। अब बड़े कद के लोग पैदा होना बंद हो गए हैं। उनके संपादकीय आज भी उनकी प्रखर निर्भीक, साहसी पत्रकारिता की याद दिलाते हैं। 'विक्रम' पं. सूर्य नारायण व्यास के बल, विक्रम, पराक्रम, पुरुषार्थ का परिचायक बन गया था। 'पत्रकारिता' ऐसी होती है, यही याद दिलाता है उनका 'विक्रम'।

अतिरिक्त महानिदेशक दूरदर्शन
दूरदर्शन महानिदेशालय, दूरदर्शन भवन
कोपरनिकस मार्ग, नई दिल्ली-११०००१

राम झरोखे बैठ के

पत्थर फेंको, सुखी रहो

• गोपाल चतुर्वेदी

कहना कठिन है कि दुनिया में कौन सुखी है? निर्धन रोटी के सपने देखता है, धनवान और धन के। असंतुष्ट दोनों हैं। किसी को भूख का दु:ख है, किसी को खाना न पचने का। कुछ ऐसे भी हैं, जो परिवार से पीड़ित हैं। अब वे प्रेमिकाओं से भयभीत हैं। किसी ने शिकायत कर दी तो जेल-यात्रा की नौबत न आ जाए! कवि भविष्यदर्शी होते हैं। 'नानक दुखिया सब संसार' कितना सार्वभौमिक सच है! बेकार रोजगार के अभाव से त्रस्त है, नौकरी-पेशा अपने अधिकारी से। ऊपरवाले का कैसा अजीबो-गरीब सृजन है यह अफसर? इसके कान क्या शरीर से अलग हो जाते हैं? सुनता है तो सिर्फ चाटुकारों की। बाकी वक्त क्या कान मेज की दराज में रख लेता है?

यों अफसर नामक इस अजूबे का कोई ठिकाना नहीं है कि निलंबन से कब किसी की नाक काट ले या अच्छी रिपोर्ट देकर जाने-माने करप्ट को पुरस्कृत कर दे? यों ईमानदार आजकल ऐसी प्रजाति के जीव हैं, जिन्हें सरकारी संरक्षण की आवश्यकता है। कार्यालय के 'जू' में एकाध तो हैं, जिनको इंगित कर कहा जा सके कि "यह जो मरियल, दुर्बल शख्स अपने साथियों से बहिष्कृत, कागजों से घिरा, अकेला बैठा है, इसे 'ईमानदार' कहते हैं। इसके विरुद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जाँच चल रही है, कौन जाने कि कब निकाल दिया जाए?" सच है कि सदाचारी से सब त्रस्त हैं। कार्यालय के संपर्क में आनेवालों से लेकर उसके सहयोगी तक। काम का रेट तै होने से फायदा है। गरजू आते हैं, मुसकराकर बाबू के सिर पर पैसा मारते हैं, मन-ही-मन उसे कोसते हुए विदा हो जाते हैं, इस विश्वास के साथ कि काम तो हो ही जाएगा! इससे उलट, यह ईमानदार है। लेन-देन के प्रचलित तरीकों से हटकर नियमों के जंगल में बसता है। इससे बड़ा दुराचरण क्या होगा कि निजी हित का न सोचकर जनहित का सोचता है। ऐसे सजा के पात्र न होंगे तो अन्य कौन होंगे?

फिर भी एकाध अपवाद न हो तो नियम कैसा? इस दुखिया संसार में कुछ सुखी भी हैं। इनमें दूसरों पर पत्थर फेंकने की जन्मजात प्रतिभा है। जब ये माँ की कोख में थे तो विवश थे उस पर पत्थर न फेंक पाने से। रोते थे। जन्म लेने के कुछ समय बाद ही इन्होंने इस कमी को भी सुधार लिया। हुआ यों कि वे एक दिन सड़क के लैंप-पोस्ट, सार्वजनिक पार्क की रोशनी के खंबों की आँख फोड़ने के प्रयासों से थककर लौट रहे थे कि उन्हें अपना एक नन्हा सा दुश्मन, जो घर के पास की बालकनी में नजर आया। उन्होंने उस पर निशाना साधा। निशाना चूका और पत्थर सीधा जाकर उनकी माँ को लगा। वे दोपहर के खाने पर अपने लाड़ले का इंतजार कर रही थीं। गनीमत है कि उनकी आँख बच गई, चोट माथे पर लगी। पड़ोस के एक डॉक्टर ने उनकी मरहम-पट्टी की, पर पत्थरफेंकू खाने में व्यस्त रहे। उन्हें माँ की चोट का दु:ख नहीं था। वे निशाना चूकने पर दु:खी थे।

कुछ हमदर्द सुझाते कि लड़के का भविष्य उज्ज्वल है। यह फौज में जाकर अपने हुनर का प्रदर्शन करने में समर्थ है। उनके माँ-बाप इस सुझाव से सहमत तो थे, पर दोनों को एक ही आशंका थी। घर का यह निशानेबाज होनहार पढ़ाई कैसे पूरी करेगा? स्कूल के सहपाठियों से लेकर प्राध्यापक तक उससे आक्रांत थे। कभी वह किसी सहपाठी का टिफिन-बॉक्स दूसरे पर फेंक देते तो कभी प्राध्यापक की पीठ दिखी नहीं कि उस पर चॉक-पेंसिल। स्कूल के प्राधानाध्यापक ने एक दिन उनके माता-पिता को बुलाकर चेतावनी दी—"लख्ते-जिगर को समझाएँ। यदि उसका व्यवहार ऐसा ही रहा तो उसे स्कूल से निष्कासित करना पड़ेगा।" हुआ भी यही। निशाना साधने से बाज न आने पर स्कूल भी उनको बरदाश्त न कर सका। कई स्कूल बदलकर और परीक्षा में नकल करके पास होते वे कॉलेज तक जा पहुँचे।

जानकार बताते हैं कि यहाँ पत्थर फेंकते-फेंकते वे छात्र-यूनियन के पदाधिकारी बन गए। एक बार यही हरकत उन्होंने छात्र संघर्ष को नियंत्रित करने आए पुलिसकर्मियों से की। वे भला इन्हें क्यों बख्शते? लाठी-डंडों से पिटकर उन्हें एहसास हुआ कि व्यवस्था के पास संगठित व प्रशिक्षित साधन हैं मार-पीट के तथा उनके व्यक्तिगत शौर्य से निबटने के। उसके सामने पत्थर फेंकने का पराक्रम कारगर नहीं है। अस्पताल में कराहते-काँखते उन्होंने निर्णय लिया कि भौतिक के स्थान पर शाब्दिक पत्थर फेंकना एक सुरक्षित विकल्प है। तब से उनके व्यक्तित्व में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आया है। ईंट-पत्थर गुम्मे को देखकर अब उनकी बाँहें नहीं फड़कती हैं, न मुट्ठियाँ तनती हैं उसे फेंकने को। यदि कोई भूल से भी किसी स्थानीय या राष्ट्रीय हस्ती की प्रशंसा कर दे तो उनकी जुबान लपलपाती है। वे उसकी आँखों में आँखें डालकर कहते हैं, "आप जानते भी हैं¨ ?" इसके बाद उस हस्ती का ऐसा चारित्रिक चीर-हरण होता है कि द्रौपदी का क्या हुआ होगा?

पत्थरफेंकू का सौभाग्य है कि आज उनके काल्पनिक या वास्तविक

शाब्दिक प्रहार से सार्वजनिक हस्ती का बचाव करनेवाला कोई कृष्ण भी नहीं है। उलटे सबकी मानसिकता भीड़ की है। अगर किसी असहाय की 'चोर-चोर' के शोर के साथ पिटाई हो रही है तो अंतर की छिपी हिंसा का प्रयोग उस निर्बल पर करना क्या बुरा है? चलते-चलते हर आने-जानेवाला व्यक्ति इस सामूहिक यज्ञ में एक-दो थप्पड़ों की व्यक्तिगत आहुति डालता चला जाता है। उस पत्थरफेंकू का सुखद अनुभव है कि शाब्दिक पत्थर फेंकना लोकतंत्र के निजी अभियान—'सबके साथ सबकी आलोचना' का एक नायाब नमूना है। इसमें न विरोध के स्वर हैं, न किसी महापुरुष के बचाव के। मंच से जिनकी प्रशंसा के महाकाव्य पढ़े जाते हैं, पान की दुकान पर पत्थर-फेंकूँ का अनुकरण कर सब उन्हें दुतकार की शरशय्या का भीष्म पितामह बनाने पर उतारू हैं। पान की दुकान हो या कॉफी हाउस, स्थान परिवर्तन से आलोचना की मानसिकता नहीं बदलती है। यदि आज तुलसीदासजी होते तो वे भी शायद यही लिखते कि 'पर निंदा जस कोई सुख नाहीं।'

विद्वानों की मान्यता है कि पत्थर फेंकना देश का इकलौता सैक्युलर कृत्य है। न इसमें किसी जाति की प्रमुखता है, न संप्रदाय की। जिसका मन चाहे और जिसमें भी योग्यता है, वह अपना नाम पत्थरफेंकुओं की फेहरिस्त में दर्ज करा सकता है। फिलहाल, इसमें न अगड़े-पिछड़े का अंतर है, न दलित और वंचित का। सब निष्ठा से एकजुट होकर जो सामने नहीं है, उस पर पत्थरों की बारिश में व्यस्त हैं। हमने एक सक्रिय पत्थरफेंकू से जानना चाहा कि ''आपको इस नकारात्मक हरकत में क्या मजा आता है?'' उन्होंने उलटे हम पर ही प्रश्न दागा—''भाई मियाँ! आपने कभी पत्थर फेंके हैं?'' यदि अन्य कोई प्रश्न होता, जैसे कि 'मियाँ! आपने कभी कोई लड़की छेड़ी है या पत्नी के अलावा किसी और से प्रेम किया है।' तो हम शायद झूठ बोल जाते। हमारा ही नहीं, कई दूसरों का भी सच-झूठ मानव निर्मित नैतिकता का मापदंड हमेशा लचीला रहा है, पर यहाँ सच का साथ हमें सुविधाजनक लगा। हमने उन्हें बिना हिचक उत्तर दिया—''बिना पत्थर फेंके ही अपने बाल पके हैं।'' वे आसानी से हार कैसे मानते? उन्होंने हमें चुप करने की गरज से कहा, ''फिर तो, भाई मियाँ! हमें कहना पड़ेगा कि बंदर क्या जाने अदरक का स्वाद? एक बार अभी भी फेंककर देखिए। पहले सिर्फ शौक रहेगा, धीरे-धीरे लत बन जाएगा। उसके बाद आप खुद महसूस करेंगे कि इसका सुख गूँगे का गुड़ है, इसका आनंद अवर्णनीय है।''

इसके पश्चात् इस पत्थर-फेंकू पहलवान से मौखिक दंगल अर्थहीन था। कुछ के जीवन का एक ही लक्ष्य होता है—पत्थर फेंकना। उनसे इस बारे में चर्चा या बहस बेकार है। हमसे पत्थर फेंकने के पक्ष में संवाद कर वे भी अपनी टोल के साथ इसी उपयोगी कर्म में लग गए।

हमने भी मुँह की खाकर घर का रास्ता पकड़ा, यह सोचते हुए कि पत्थर फेंकना किस क्षेत्र में अधिक लोकप्रिय है? घर पहुँचते-पहुँचते हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यह जीवन के हर क्षेत्र में समान रूप से स्थान बना चुका है, चाहे साहित्य हो या सियासत अथवा समाज। नहीं तो यह कैसे संभव है कि अपने ही परिवार पर कोई उसी का सदस्य पत्थर उछाले? उमरदार माता-पिता से उन्हीं के घर में रहकर मार-पीट करे, भाई-बहनों से उनको न मिलने दे, न संपर्क करने दे। माँ-बाप का दोष सिर्फ इतना है कि उनका इरादा—अपनी खुद की कमाई दौलत को सब में बराबर बाँटना है।

यों बेटा अपना कर्तव्य निभाता है। कोई पुराना परिचित यदि बुजुर्ग से मिलने आता है तो उन्हें उसके सामने सम्मान देने का स्वाँग रचने में वह किसी से भी पीछे नहीं है। आपस में कितने भी मतभेद हों, इस ढोंग के नाटक में पति-पत्नी एक हैं। दोनों के मुँह से सिर्फ 'जी बाबूजी' और 'जी माताजी' ही सुनाई देता है। यह अस्थायी राग सिर्फ उतनी ही अवधि का है, जितनी देर मेहमानों का रुकना। उसके बाद का स्थायी स्वर सिर्फ माँ-बाप के अपमान का है।

बुढ़ापे का श्रृंगार तरह-तरह के रोग हैं, जो वृद्ध माँ-बाप को युवा बेटे पर निर्भर बना देते हैं। कार उनकी है, ड्राइवर भी; पर अस्पताल जाने के लिए कभी-कभार ही उपलब्ध होती है। बेटे को दफ्तर जाना है, पत्नी को सामाजिक संबंध निभाने हैं। नतीजतन, कहने को उनकी है, पर उपयोग के लिए नहीं। दीगर है कि उसकी खरीद, मरम्मत और चालक का वेतन ही उनका जिम्मा है। कहीं जाने के लिए पुत्र से इजाजत लेनी पड़ती है। कभी-कभी बुढ़े-बुढ़ऊ को खयाल आता हैं कि बेटे से अधिक सगा तो उनका ड्राइवर है, जो मैम की डाँट खाने के बावजूद मालिक की दवा वगैरह लाने का ध्यान रखता है। उन्हें आश्चर्य होता है कि मध्यवर्गीय परिवार में पुत्र की परवरिश में उनसे कहाँ चूक हो गई? बेटे से बेहतर संस्कार तो गरीबी में पले उस ड्राइवर के हैं। अपनी पीड़ा किससे बाँटें? उनके मुँह को आदत है, जब खुलता है तो बेटे की प्रशंसा के लिए ही खुलता है।

साहित्य के मर्मज्ञों का विचार है कि लेखक को उसके लेखन से जानना ही उचित है। कुछ से व्यक्तिगत परिचय उनके साहित्य में रचे जीवन-मूल्यों को ध्वस्त करने में सफल है। उनके सृजित आदर्शों और उनके जीवन की वास्तविकता में जमीन-आसमान का फर्क है। वह महिला समानता और सम्मान के प्रबल पक्षधर हैं, पर यह गोष्ठी-सेमिनारों तक ही सीमित है। घर में उनकी पत्नी की हैसियत बिना वेतन की नौकरानी से अधिक नहीं है। कहने को वे लेखन को समर्पित हैं, पर हर पुरस्कार पर उनकी गिद्ध-दृष्टि रहती है। उसके लिए जोड़-तोड़ में उनकी सानी नहीं है, न पीठ पीछे हर प्रतिद्वंद्वी पर पत्थर फेंकने में। जो मानवीय मूल्य उनकी कविता की हर पंक्ति में झलकते हैं, वह उनके खुद के जीवन से कोसों दूर है। आलम यह है कि वे कवि-सम्मेलन में आने-जाने के लिए हवाई टिकट माँगवाते हैं और यदि कहीं और भुगतान अधिक हो तो टिकट ट्रेवल एजेंसी को बेचकर उसमें पधारते हैं। पत्थर फेंकने की उनकी योग्यता के लिए एक लेख काफी नहीं है, किसी प्रतिभा-संपन्न के लिए यह उपन्यास का विषय है। कथनी और करनी का अंतर हर सृजनधर्मी के लिए उसके चरित्र और व्यक्तित्व का आभूषण है।

सियासी हस्तियों का कहना ही क्या! वे तो एक-दूसरे पर पत्थर फेंकने में इतने सिद्धहस्त हैं कि निशानेबाजी में उनसे अर्जुन भी शरमाएँ। जैसे किसी-न-किसी द्रोणाचार्य की 'पत्थरफेंक आधुनिक अकादमी' में

इन सबका प्रशिक्षण हुआ हो! कभी नेता जनता के लिए अनुकरण योग्य थे, आज ये उपहास और विद्रूप के पात्र हैं। यदि कोई शातिर और भयंकर अपराध-माफिया हो तो लोग मानकर चलते हैं कि यह किसी-न-किसी राज्य का गृहमंत्री बनकर रहेगा। यहाँ तक कि पुलिसवाले भी उसे हमेशा सलाम ही नहीं करते, बल्कि उससे खौफ भी खाते हैं। जिस प्रकार नेता प्रजातंत्र को अपना पारिवारिक तंत्र बनाने को कृत-संकल्प हैं, उससे मन में संदेह उठता है कि क्या लोकतंत्र को वे अपना जेबी जनतंत्र समझते हैं? मुमकिन है कि उन्हें यकीन हो कि प्रधानमंत्री का पद उनकी खानदानी विरासत का अंग है? किसी दूसरे को इस कुरसी पर देखकर उनका खून खौलता है, आँखें अविश्वास से निहारती हैं कि यह नालायक कैसे विराजा उनकी पुश्तैनी कुरसी पर? वह हिंसक तो नहीं है, पर क्या करे? वह उस पर कभी चुप रहने, कभी हर समस्या के जन्मदाता होने का शाब्दिक पत्थर उछालता है, यह भलीभाँति जानते हुए कि कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक हर गलत निर्णय उनके परिवार का रहा है। पर जुबान का दोष है कि वह अकसर फिसल जाती है। ऐसे वे झूठ नहीं बोलते हैं। एक धर्मभीरु व्यक्ति होने के नाते उन्हें झूठ से परहेज है। पर विवशता है। उन्हें सच-झूठ बोलकर अपनी पारिवारिक कुरसी को पाना है, इस झपटू बागी से।

घर में उनकी पत्नी की हैसियत बिना वेतन की नौकरानी से अधिक नहीं है। कहने को वे लेखन को समर्पित हैं, पर हर पुरस्कार पर उनकी गिद्ध-दृष्टि रहती है। उसके लिए जोड़-तोड़ में उनकी सानी नहीं है, न पीठ पीछे हर प्रतिद्वंद्वी पर पत्थर फेंकने में। जो मानवीय मूल्य उनकी कविता की हर पंक्ति में झलकते हैं, वह उनके खुद के जीवन से कोसों दूर है। आलम यह है कि वे कवि-सम्मेलन में आने-जाने के लिए हवाई टिकट मँगवाते हैं और यदि कहीं और भुगतान अधिक हो तो टिकट ट्रेवल एजेंसी को बेचकर उसमें पधारते हैं। पत्थर फेंकने की उनकी योग्यता के लिए एक लेख काफी नहीं है, किसी प्रतिभा-संपन्न के लिए यह उपन्यास का विषय है। कथनी और करनी का अंतर हर सृजनधर्मी के लिए उसके चरित्र और व्यक्तित्व का आभूषण है।

उन्होंने दुष्यंत को तो पढ़ा नहीं है, पर किसी ने उन्हें 'एक पत्थर तो तबीयत से उछालो यारो' के बारे में बताया है। तब से वे एक नहीं, सैकड़ों पत्थर इस अयोग्य की लोकप्रियता में छेद करने को उछालकर प्रफुल्लित हो लेते हैं। निष्काम कर्म की इस खुशी का कोई अंत नहीं है। शाब्दिक पत्थरबाजी उनके हर दुःख की दवा है।

देश में बाढ़ आए या सूखा पड़े, लड़कियों का अपहरण हो या बलात्कार, नेता हर पत्थर अपने दुश्मन पर फेंककर ऐसे खिलखिलाता है कि जैसे उसकी सत्ता की लॉटरी खुल गई हो। जीवन में उसका एक ही मिशन और उसूल— पत्थर फेंककर खुश रहना है।

सा अ

९/५, राणा प्रताप मार्ग
लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

सुधी पाठकों से निवेदन

- ❖ जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- ❖ सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- ❖ सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- ❖ चैक अथवा बैंक-ड्राफ्ट **साहित्य अमृत** के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ❖ ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. ११९०७३४३९३ अथवा CBIN ०२८०२९७ में **साहित्य अमृत** के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- ❖ पत्रिका न मिलने पर १५ से २० तारीख तक सूचित कर दें, ताकि वह अंक नए अंक के साथ भेजा जा सके।
- ❖ आपको अगर **साहित्य अमृत** का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- ❖ सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया कार्यालय दिवस में २ से ५ बजे तक फोन नं. ०११-२३२५७५५५, २३२७६३१६ अथवा sahityaamrit@gmail.com पर इ-मेल करें।

तुलसीदास की प्रथम रचना—रामलला नहछू

● मजीद अहमद

सुपरिचित लेखक। कई पुस्तकें संपादित तथा कई समाचार-पत्रों के संपादकीय विभाग से संबद्धता। संप्रति बँधुआ मजदूरों की समस्याओं का अध्ययन।

'रामलला नहछू' गुसाईं तुलसीदास की प्रथम रचना है। इस लघु कृति के बीस सोहर छंदों में नहछू लोकाचार का वर्णन हुआ है।

सोहर छंद

'सोहर' अवध प्रांत का एक अति ख्यात छंद है। इसके अतिरिक्त कर्णवेध, मुंडन और उपनयन संस्कार तथा नहछू लोकाचारों के अवसर पर स्त्रियाँ इसे गाती हैं। कवि ने जीवन में शास्त्रसम्मत विधानों के साथ लोकाचार के परिपालन का भी महत्त्व निरूपित किया है, 'लोक वेद मंजुल दुइ कूला'। वेदाचार लिखित संविधान की भाँति ग्रंथबद्ध और व्यापक है, लेकिन लोकाचार परंपराओं पर आधारित होता है। नहछू लोकाचार का शास्त्रीय विधान न होते हुए भी अवध में कम-से-कम पाँच सौ वर्षों से व्यापक रूप से प्रचलित है।

नहछू का अर्थ

'नहछू' दो शब्दों से बना है—नख और क्षुर अर्थात् नख काटना। इस संस्कार में विवाह के लिए दूल्हे को सजा-सँवारकर तैयार किया जाता है। नहछू की रस्म में नायिता (नाइन) ससुराल जाने के लिए सजते समय दूल्हे के पैरों के नख नहनी से काटती है और उसके पाँवों को महावर से चीतती है। दूल्हे का स्नान और शृंगार इसी रस्म के अंतर्गत होता है।

दूल्हा सजाने का आमंत्रण

दूल्हा सजाने का आमंत्रण पाते ही अड़ोस-पड़ोस की स्त्रियाँ गाली गाती हैं। माँ के लिए गाई जानेवाली गालियाँ सुनकर दूल्हे को लज्जा और संकोच की विचित्र प्रथमानुभूति होती है, जो थोड़ी ही देर में विनोद के ठहाकों में घुल जाती है। लोकगीतों में रामकथा सहस्रमुखी धाराओं में प्रवाहित हुई है। समाज के हर वर्ग ने उसे अपनी मान्यताओं के अनुकूल गढ़ा है, अपनी भावनाओं के रंग में रँगा है। गुसाईं तुलसीदास की काव्य-प्रतिभा ने नहछू लोकाचार का अत्यंत सजीव वर्णन किया है—राजा दशरथ के आँगन में आले बाँस का मंडप छाया गया है। मणियों मोतियों की झालर लगी हैं। चारों ओर कनक-स्तंभ हैं, जिनके मध्य राजसिंहासन है। गजमुक्ता, हीरे और मणियों से चौक पूरे गए हैं।

मंगल स्नान

भागीरथी-जल से राम को स्नान कराया गया। युवतियों ने मांगलिक गीत गाए। राम सिंहासन पर विराजमान हैं। हाथों में नवनीत लिये अहीरिन खड़ी है, तांबूल लेकर तंबोलिन, जामा जोड़ा लिए दरजिन, पनही लिये मोचिन और कनक रत्न, मणिजटित मयूर लिसे मालिन आ पहुँची है। बारिन हाथ में छत्र लिये खड़ी है। बड़री आँखोंवाली नायिता भौंह नचाती हुई भाग-दौड़ कर रही है। सारी तैयारी हो जाने पर कौशल्या की जेठि, कुल की पुरखिन ने उन्हें आज्ञा दी—जाओ, सिंहासन पर बैठे रामलला का नहछू करा दो। माँ कौशल्या रामलला को गोद में लिये बैठी हैं। दूल्हा राम के सिर पर उनका आँचल छत्र की भाँति सुशोभित है। नहछू के लिए नायिता को पुकारा गया। बनी-ठनी, हँसती-मुसकराती गौरवर्ण नायिता कनकलसित नहनी हाथ में लिये खड़ी दूल्हा राम की शोभा निहार रही है। अब बड़भागी नायिता राम के पाँवों के नख काटने लगी। बीच-बीच में वह मुसकराती हुई तिरछे नयनों से उन्हें निहारती भी है।

विभिन्न रसोंवाले सोहर

नहछू शुरू होते ही उपस्थित युवतियाँ सोहर गाने लगीं। सबसे पहले कौशल्या की खबर ली, फिर सुमित्रा की—

काहे रामजिउ साँवर लछिमन गोर हो,
कीदहुँ रानि कौउसिलहिं परिगा भोर हो।
राम अहहिं दशरथ के लछिमन आनि क हो,
भरत सत्रुहन भाई तौं सिरी रघुनाथ क हो॥

(एक ही पिता के पुत्र होकर राम साँवले क्यों हैं और लक्ष्मण गोरे क्यों हैं? कहीं दशरथ के धोखे में कौशल्या से चूक तो नहीं हो गई? अरे, नहीं-नहीं! राम तो दशरथ के ही पुत्र हैं। लक्ष्मण, संभव है—दूसरे के हों! भरत और शत्रुघ्न भी राम के भ्राता हैं।)

अगले छंद में उपस्थित माँ के प्रति सोहर सुनकर रामलला के सकुचाने का मनोवैज्ञानिक चित्र है—

गावहिं सब रनिवास देहिं प्रभु गारी हो,
रामलला सकुचाहिं देखि महतारी हो।

नख काटने के बाद नायिता ने राम के पैरों की अंगुलियों को जावक से चर्चित कर सूख जाने पर उन्हें धो-पोंछ दिया। नहछू संपन्न

हो जाने पर नेग की बारी आई। कवि ने इस अवसर पर नेग की प्रचुरता और विपुलता का अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया है। अंत के दो छंदों में माँ कौशल्या की प्रसन्नता और कृति की फलश्रुति का वर्णन हुआ है—

दूलह के महतारि देखि मन हरखई हो।
कोटिन्ह दीन्हेऊ दान मेघ जनु बरसइ हो॥
यो यह नहछू गावे गाइ सुनावइ हो।
रिद्धि-सिद्धि कल्यान मुक्ति नर पावइ हो॥

रचना काल

'रामलला नहछू' में रचना-काल का उल्लेख नहीं है। 'गोसाईं चरित' में लिखा है कि 'पार्वती मंगल', 'जानकी मंगल' और 'रामलला नहछू' की रचना एक साथ मिथिला में हुई। 'पार्वती मंगल' में रचना-काल का उल्लेख इस प्रकार है—

जय संवत् फागुन सुदि पाँचै गुरु दिन।
अस्विनि विचरेऊँ मंगल सुनि सुख छिन-छिन॥

वाराणसी के पृथुपृथ ज्योतिषी गणेशदत्त पाठक ने गणना करके 'पार्वती मंगल' की रचना संवत् १५८२ वि. मानी है और गुसाईं तुलसीदास का जन्म संवत् १५५४ माना जाता है। स्पष्ट है कि 'रामलला नहछू' कवि के तारुण्य का उद्गीत है, जिसमें एक ओर अवस्थानुरूप सुलभ शृंगारप्रियता है और दूसरी ओर उनकी प्रकृति के अनुरूप मर्यादावादिता का गंगा-जमुनी संगम है। नव-युवतियों के मांसल सौंदर्य में जो अभिरुचि कवि ने इस कृति में दिखलाई है, वह अन्य कृतियों में दुर्लभ है।

राम का ब्रह्म स्वरूप

'रामलला नहछू' के लघुकाय होने के कारण रचनाकार को यद्यपि यह सुविधा नहीं थी कि 'रामचरितमानस' की भाँति बीच-बीच में पाठकों को स्मरण कराते कि राम सच्चिदानंद ब्रह्म हैं, तथापि इस लोकगीत में वे अपने उपास्य की लोकोत्तर महिमा का बोध कराना न भूले—

जो पग नाउनि धोव राम धोवावइं हो।
सो पगधूरि सिद्ध मुनि दरसन पावइं हो॥
रामलला कर नहछू इहि सुख गाइय हो।
जेहि गाए सिधि होइ परम पद पाइय हो॥

'रामलला नहछू' की भाषा अवधी है, 'रामचरितमानस' की भाँति साहित्यिक अवधी अथवा 'विनय पत्रिका' की भाँति संस्कृतनिष्ठ अवधी नहीं, बल्कि 'पद्मावत' की भाँति ठेठ ग्रामीण पूर्वी अवधी, जो गोंडा और अयोध्या के आसपास बोली जाती है। भाषा में बोलचाल के ही शब्द अधिक हैं, जैसे—अहिरिन, महतारि, आवइ, हरखइ।

सा
अ

के-३४, सरिता विहार
नई दिल्ली-११००७६
दूरभाष : ०९९७१४२५६४९

सर्वव्यापी माँ आद्यशक्ति

कविता

• जूही वैष्णव

सृष्टि के स्थूल स्वरूपों में, अत्यंत सूक्ष्म, आवरित रूपों में,
चिर-शांत, शून्य अंतरिक्षों में, प्रकट और अप्रत्यक्षों में।

सारे सौरमंडलों के कण-कण में, उसकी समांग उपस्थिति साकार है...

धरा उसकी गोद में, आँचल में नीला नभ है,
वो प्रकाश, उसके बिन तो, हर दीप अप्रतिम है।

वो वनों की हरीतिमा, मरुधरा स्वर्णवर्णा,
वह सागर की नीलाभा, वह वायु वर्णहीना।

हर दृश्य में होकर भी व्यक्त वह, अव्यक्त है, निराकार है...

जहाँ उसकी अनंत विशालता, नेत्रों में न समाए,
वहीं चरम सूक्ष्म हो, वह परम अणु बन जाए।

वनों-जीवों की जहाँ वह, चेतना और जिजीविषा,
वहीं जीवन उससे है पाती, हर नन्ही कोशा।

उसकी ममता में पल रहा, धरा का यह परिवार है...

वह प्रचंड है ज्वाला सी, वह शीतल ज्योत्स्ना,
वह अज्ञेय, जटिल उसे जानना, वह सहज-सरस भी सरल मना।

सर्वशक्तिमयी वह गर्विता, वही सौम्या, वही नम्रता,
हर कंठ की वह गिरा, हर मन की आशा-आस्था।

वह गति हर गतिमान की, वह बोध, वही मेधा,
वह माँ ही देती हर जीवन को आधार है...

केसरी रथारूढ़ा बन वह पाप का संहार करे,
हंसवाहिनी बन पुस्तक धर वो ही तो अज्ञान हरे।

उसकी द्युति विद्युत् सी, वह अग्निवर्णा,
वह शारदा श्वेता, वही चंडिका कृष्णा।

वह ममता-दया की सागर, वह प्रेम निर्झर,
वह भोली माँ करुणामयी, वात्सल्य की अक्षय लहर।

जहाँ हर नन्हे से हृदय में सुलभ है वह, वहीं अप्राप्य उसका विस्तार है...

सा
अ

13-09 6B mayspring condomium,
6 petir road, Bukit Panjang
Singapoor-678267

कसक

• रेखा लोढ़ा 'स्मित'

सुपरिचित रचनाकार। सीप (कविता/गीत संग्रह); मुखर होता मौन (गजल-संग्रह), विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं व साझा काव्य-संकलनों में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी से कविताएँ प्रसारित। छोटे-बड़े लगभग दो दर्जन सम्मान प्राप्त।

खेत से उखड़कर गमले में सिमटी जड़ों का दर्द एक लड़की ही समझ सकती है, जो अपने मायके की उन्मुक्तता से निकलकर ससुराल की रोक-टोक व बंधनों में जकड़ी परायी होने की कसक को जीती है।

कहने को तो वर्तमान युग में स्त्री हेय नहीं रही। पुरुष के कंधे-से-कंधा मिलाकर खड़ी है, अर्थोपार्जन भी कर रही है, पर आज भी कुछ परिवारों को छोड़ मध्यम वर्ग के अधिकांश परिवारों में सद्य ब्याहता बहू तकनीकी महाविद्यालय में प्रवेश पाए विद्यार्थी की तरह रैगिंग की शिकार होती है।

मायके की सुघड़, कार्यकुशल, मृदुभाषी लड़की जाने क्यों ससुरालवालों को फूहड़, कामचोर और कर्कशा लगने लगती है? कभी लगता है कि यह व्यवहार एक कार्यशाला का कार्य करता होगा, एक लड़की को बहू के रूप में स्थापित करने, नए परिवार के तौर-तरीके में ढलने और जीवन में आनेवाली मुसीबतों से दो-चार होने को तैयार करने के लिए। पर क्या कोमल मन की भावनाओं को आहत कर, एक उत्साही आँख के सपने को चूर करके ही यह संभव है? क्या प्रेम, सौहार्द और आत्मीयता से यह नहीं किया जा सकता? क्या सास नाम की जीव अपनी सास से जो पाया, वही बहू को हस्तांतरित करके ही अपने दायित्व से उऋण हो पाती है?

ऐसे ही सोचते-सोचते कब सारी रात बीत गई, जाने कितनी देर अपने अश्रु-जल से तकिये को सिंचित करती रही शिल्पा ने जब रसोई में प्रेमाजी के प्रलाप और बरतनों की भड़भड़ाहट सुनी तो चौंक पड़ी। बत्ती जलाकर देखा तो सुबह के छह बज गए थे। हड़बड़ाकर शिल्पा उठी और स्नानघर में घुस, दिसंबर की कड़कड़ाती ठंड में पानी से कुश्ती लड़ती नहाकर बाहर आई। किटकिट करते दाँत और थरथर काँपती देह की परवाह न करते हुए झटपट से लटपट सी साड़ी लपेटती रसोईघर की ओर दौड़ी, जैसे सीमा पर शुरू हुई गोलीबारी से सैनिक सचेत होकर अपनी स्थिति लेता है। नहाना रसोई-प्रवेश का पास था, जिसके बिना बहू का रसोई-प्रवेश वर्जित था। फिर चाहे ठंड हो, गरमी हो या बदन बुखार से तप रहा हो, नियम तो नियम ही है और बहू को नियम तोड़ने का हक कोई भी सास कभी नहीं देती।

रसोई को अखाड़े की शक्ल दे चुकीं प्रेमा देवी शिल्पा को देखते ही ऐसे भभकने लगीं, जैसे तेल चुके दीये की लौ बुझने से पहले भभक जाती है। शिल्पा ने डरते-डरते सास प्रेमा देवी के चरण छुए तो आशीर्वाद की जगह तानों का प्रसाद मिला, ''वाह! क्या कहने आजकल की चतुर लड़कियों के, देरी से उठो और पाँव छू लो, ताकि कोई कुछ कह भी न पाए। अरे, हमारे जमाने में तारे रहते न उठो तो सास कान उमेठ देती थी। पर मेरी भलमनसाहत है कि मैं कुछ नहीं कहती हूँ तो बहू महारानी बनती जा रही है।'' इसके आगे भी बड़बड़ाहट जारी थी।

शिल्पा ने मन मसोसकर तानों को आशीर्वाद समझ ग्रहण कर लिया। रसोई में यत्र-तत्र फैले बरतन रूपी शस्त्रों को समेट चूल्हे पर चाय का पानी चढ़ाया और नाश्ते में उपमा बनाने की सोचकर सूजी निकालने लगी। चाय बनी तब तक सब्जियाँ काटकर दूसरे बर्नर पर सूजी सेंकने को चढ़ा दी। जल्दी-जल्दी हाथ चलाना जरूरी था, क्योंकि नाश्ते के बाद दोपहर का भोजन और कार्यालय व कॉलेज जानेवालों के लिए टिफिन भी बनाने था। चाय छानकर प्रेमा देवी के मनपसंद बिस्किट ट्रे में सजाकर बैठक में बैठी सास के सामने रखकर बोली, ''मम्मीजी, आप चाय पी लीजिए, मैं पापाजी और विक्रम को चाय देकर आती हूँ।'' यह कहकर पलटी ही थी कि मुँह बिगाड़ते हुए प्रेमा देवी बोलीं, ''एक चाय तक तुम ढंग से नहीं पिला सकती, कच्ची पड़ी है चाय, पूरी तरह उबालने से तुम्हारा काम बढ़ नहीं जाता।'' शिल्पा ने कहना चाहा कि कल ज्यादा उबली चाय को आप कड़वा काढ़ा बता रही थीं तो आज थोड़ी कम उबाली। लेकिन मन की बात को बीच में ही रोक प्रत्यक्षत: बोली, ''मम्मीजी, कोई बात नहीं, इसे रहने दीजिए, मैं दूसरी बनाकर लाती हूँ।'' बस शिल्पा ने मुँह क्या खोला, आग में घी पड़ गया। दुश्मन मुल्क पर गोले बरसाते लड़ाकू विमान की तरह प्रेमा देवी के मुँह से अंगारे बरसने लगे—''चार-चार कप चाय फेंककर नई चाय बनाओगी, पैसा तो बिना कमाए आता है, पेड़ पर उगता है। अरे, मेरा पति और बेटा रात-दिन खटते हैं, अफसरों की खरी-खोटी सुनते हैं, तब तनख्वाह के दर्शन होते हैं, पर तुम्हें क्या दर्द, रहने दो, ऐसे ही पी लूँगी।''

शिल्पा सोचने लगी, खटते तो दोनों बाप-बेटे ही हैं, वह तो ऑफिस में पिकनिक मनाने जाती है। कैसी दोहरी सोच है मम्मीजी की! एक अजीब सा भाव शिल्पा के चेहरे पर आने-जाने लगा, जिसमें न दुःख था, न खुशी, बस आँखें नम थीं और होंठ मुसकान से कुछ फैले हुए थे। वह कुछ समझ पाती, तब तक मौलवी के फतवे की तरह फरमान जारी करते हुए प्रेमा देवी बोलीं, ''नाश्ते में उपमा-वुपमा बनाकर इतिश्री मत कर लेना, विक्रम के लिए आलू के पराँठे, वैभव के लिए पोहा और तुम्हारे पापा के लिए टोस्ट बना देना। मेरा क्या है मैं तो कुछ भी खा लूँगी।'' शिल्पा की नजर घड़ी की तरफ उठी देख प्रेमाजी ने कहा, ''देरी से उठोगी तो यही होना है। समय क्या तुम्हारा नौकर है, जो ठहरा रहेगा,

उसे तो भागना ही पड़ेगा।'' अपने आपको संयत करती शिल्पा रसोई में जुट गई और एक कुशल बावरची की तरह अलग-अलग टेबल से आए आदेश पूरे करने लगी। बमुश्किल रसोई निपटाकर भागती-दौड़ती ऑफिस के लिए तैयार हुई। आज फिर ऑफिस देर से पहुँचने पर बॉस के मुखारविंद रूपी रायफल से निकली गोलियाँ भी तो उसे अपने कानों में झेलनी पड़ेंगी।

दिनभर ऑफिस में ये फाइल, वो फाइल, मीटिंग, प्रजेंटेशन करते-करते बिना पानी के मुरझाए पौधे-सी मुखाकृति लिये, थके-थके कदमों से मन में यह सोचते हुए ऑफिस के बाहर आई कि रसोई का चूल्हा भी बंकर में बैठे दुश्मन के सिपाही की तरह घात लगाए बैठा होगा। अभी तो उससे भी दो-दो हाथ होना है। बाहर निकल ऑटोवाले को आवाज लगाने ही वाली थी, तब तक विक्रम गाड़ी लिये सामने आ गया। उसे देखते ही पहली बारिश में झुलसती घास जैसे हरिया जाती है, उसका मुख भी एक मधुर स्मित से खिल गया।

गाड़ी में बिठाते हुए विक्रम बोला, ''चलो, आज हरणी महादेव चलते हैं। बहुत दिन हुए, हम दोनों कहीं गए नहीं। लौटते समय नंदनी टर्निंग पॉइंट में खाना खाते हुए लौटेंगे।'' पर शिल्पा को कर्तव्यनिष्ठ सिपाही की तरह अपनी ड्यूटी पर पहुँचने की जल्दी थी। उसने विक्रम को मना किया और बोली, ''मम्मीजी नाराज हो जाएँगी। घर पर बाकी सब लोगों का खाना भी बनाना है। हम सीधे घर ही चलते हैं।'' पर विक्रम नहीं माना, उसने कहा, ''मैं मम्मी को फोन कर देता हूँ। वे कहेंगी तो हम सबके लिए खाना पैक करवाकर ले चलेंगे। यदि वे मना करेंगी तो बोल दूँगा कि आज खाना मम्मी खुद बना लें।'' शिल्पा ने बहुत मना किया, पर विक्रम के आगे उसकी एक न चली। हारी हुई सेना की तरह उसने हथियार डाल दिए।

थकी हुई शिल्पा आँखें बंद कर पुश्त पर टिकी होनेवाली बमबारी के लिए सोचने लगी तो विक्रम ने कहा, ''शिल्पा, मैं तुमसे पहले भी कह चुका हूँ, आज फिर कह रहा हूँ, तुम्हें ये सब ज्यादतियाँ सहने की कोई जरूरत नहीं है। तुम मुझे कुछ नहीं बताती हो, पर मेरे आँख-कान सब खुले रहते हैं। मैं जानता हूँ, मम्मी तुम्हें कितना और कैसे-कैसे परेशान करती हैं? मेरी कंपनी मुझे फ्लैट देने को तैयार है। हम कंपनी की कॉलोनी में शिफ्ट कर लेते हैं। तुम मान क्यों नहीं लेतीं? तुम यह सब क्यों सहना चाहती हो? क्यों नहीं, अलग रहने की बात पर राजी हो जाती हो?''

पति का अपने प्रति लगावपूर्ण व्यवहार देख उसकी आँखों से खुशी के दो मोती टपक गए। अपने भावों को संयत करते हुए बोली, ''विक्रम, माना कि मम्मीजी का व्यवहार कठोर है, वे मुझसे किसी भी हाल में खुश नहीं होतीं पर वे एक माँ हैं और स्त्री होने के नाते मुझमें भी कहीं एक माँ छुपी हुई है। मैं एक माँ की पीड़ा को समझने की क्षमता रखती हूँ। मैं तुम्हें मम्मीजी से दूर कर उनकी पीड़ा को नहीं बढ़ाना चाहती। यदि उनका लाड़ला उन्हें छोड़कर अलग रहने चला गया तो वे बिखर जाएँगी और मैं एक औरत को, एक माँ को हारते-बिखरते नहीं देखना चाहती हूँ, इसलिए विक्रम, तुम अपने मन से अलग होने की बात निकाल दो।''

''हाँ, मैं एक बात से जरूर व्यथित और हतप्रभ हूँ। मेरे मन में एक कसक-सी उठती है कि कई बहू-बेटे अपने माँ-बाप को बहुत कष्ट देते हैं। उनकी परवाह, मान-सम्मान नहीं करते। उन्हें कबाड़ की तरह घर के कोने में पड़े रहने को मजबूर कर देते हैं। कुछ तो उन्हें वृद्धाश्रम तक पहुँचा देते हैं पर मैं तो अपने सास-ससुर व परिवार के प्रति स्नेह, सम्मान रखती हूँ, फिर भी मम्मीजी की बेरुखी कम नहीं होती, न ही उनके व्यवहार की कड़वाहट जाती है। यहाँ तक कि वे मुझे परेशान करने, ताने मारने का कोई भी अवसर खाली नहीं जाने देतीं। मेरे मन में एक प्रश्न हमेशा सिर उठाता है कि अपने माता-पिता को वृद्धाश्रम पहुँचानेवाले बच्चों को क्या अपने माता-पिता का मम्मीजी जैसा व्यवहार ही तो मजबूर नहीं कर देता है? वरना क्यों कोई भी बच्चा अपने ही माता-पिता के साथ ऐसा सलूक करेगा?

''क्या आपको नहीं लगता, विक्रम, कि एक उम्र के बाद माता-पिता को अपने बच्चों को खुलकर साँस लेने व जीने का मौका देना चाहिए? अपनी भावनाओं से बच्चों की भावनाओं का ताल-मेल बिठाना चाहिए, ताकि दो पीढ़ीयों के बीच का टकराव और गृह-कलह की स्थिति बन ही न पाए। चलिए, हम कहीं नहीं जाते, घर चलते हैं। आप गाड़ी घर की तरफ मोड़ लीजिए और मुझ पर भरोसा रखिए। मम्मीजी कितनी भी उग्र क्यों न हो जाएँ, मेरे संस्कार मुझे कभी उनका विरोध नहीं करने देंगे।''

घर पहुँचकर विक्रम और शिल्पा यह देखकर विस्मित हो जाते हैं कि प्रेमा देवी हाथ में आरती की थाली लिये नई बहू के गृह-प्रवेश की तैयारियों के साथ दहलीज पर खड़ी हैं। दोनों को कुछ समझ नहीं आया कि माजरा क्या है? विक्रम ने प्रश्नवाचक दृष्टि से अपने पिता की ओर देखा तो वे बोले, ''तुमने अपनी माँ को फोन लगाया, जो कनेक्ट तो हो गया, पर तुम शिल्पा से बात करने की धुन में यह भूल गए कि तुमने फोन लगा रखा है और वह चालू है। तुम्हारी माँ ने तुम दोनों की सारी बातें सुन लीं। शिल्पा की समझदारीवाली बातें और परिवार के प्रति प्रेम ने मेरी प्रेमा को कड़क सास के आवरण से आजाद कर दिया और उसके मन में ममतामयी माँ को जगा दिया। वह आज शिल्पा का पुन: गृह-प्रवेश सास के चोले से बाहर निकल माँ बनकर करना चाहती है।''

अब भी शिल्पा के मुख पर असमंजस के भाव थे, जहाँ आँखों से खुशी बरस रही थी और होंठों की मुसकान चौड़ी हो गई थी। उसके मन की कसक दबे पाँव गायब हो गई थी। (सा अ)

सी-२०७, आलोक स्कूल रोड
सुभाष नगर, भीलवाड़ा-३११००१ (राजस्थान)
दूरभाष : ०९८२९६१०९३९

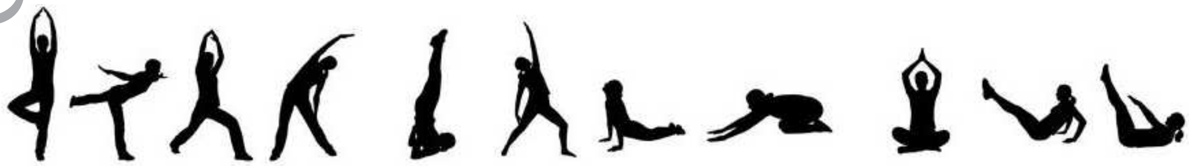

वैश्विक परिदृश्य में योग का महत्त्व

● मारूफ उर रहमान

भारतीय चिंतन में मनोविज्ञान का अत्यधिक सूक्ष्म और व्यावहारिक रूप योग में ही दिखाई देता है। योग भारतीय ऋषि-मुनियों द्वारा विश्व को दी गई सबसे अमूल्य देन है, जो न केवल भारतीयों के लिए अपितु सारी मानव जाति के लिए एक वरदान है। इस विश्व बंधुत्व सिद्धांत का मकसद स्वयं भी खुश रहना और अपने माध्यम से दूसरों को भी खुश रखना है। योग केवल शारीरिक व्यायाम तक सीमित नहीं है, अपितु यह शरीर, मन बुद्धि और आत्मा को जोड़ने की समग्र-जीवन पद्धति है।

भारत की प्राचीन विरासत योग का परचम २१ जून, २०१५ को दुनिया के सबसे ऊँचे युद्धक्षेत्र सियाचिन से लेकर विवादास्पद दक्षिण चीन सागर तक लहराता नजर आया। योगदिवस के मौके पर भारतीय सेनाओं ने सियाचिन की बर्फीली चोटियों से लेकर ऊँचे आसमान और समुद्र की पछाड़ खाती लहरों के बीच योगाभ्यास किया। भारतीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी की अगुआई में हजारों लोगों ने एक साथ नई दिल्ली के राजपथ पर योग किया। पहले अंतरराष्ट्रीय योगदिवस के अवसर पर राजपथ पर आयोजित समारोह को 'गिनीज बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड' में दर्ज कर लिया गया। भारतवासियों को फख्र है कि भारतीय प्रधानमंत्री मोदीजी के अथक प्रयास से योग को संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त हुई और २१ जून को 'विश्व योगदिवस' के रूप में सारी दुनिया में मनाया जाने लगा है।

मजहब, संप्रदाय, भाषा, संस्कृतियाँ ही नहीं, सप्रभुता, भूगोल और राजनीति की सीमाओं को लाँघकर अगर इतनी संख्या में लोगों ने एक ही प्रकार की क्रिया की तो इससे कुछ समय के लिए ही सही, एकता का प्रादुर्भाव तो हुआ। रमजान का महीना होने पर भी योगदिवस में बड़ी संख्या में मुसलमान राजपथ पर शामिल हुए थे। भारत में ही नहीं, बल्कि विश्व भर में मुसलमान, ईसाई व अन्य धर्म के अनुयायियों ने योगदिवस में हिस्सा लिया।

योग को किसी धर्म विशेष से जोड़कर उसमें दोष निकलने की बजाय शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य से जोड़कर देखना उदार दृष्टि का परिचायक है। आज संपूर्ण विश्व में योग का अनुसरण कर संतुलित तथा प्रकृति से सुसंगत जीवन जीने का प्रयास करनेवालों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है, जिसमें दुनिया की विभिन्न संस्कृतियों और मतों के माननेवाले शामिल हैं। इससे सिद्ध होता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ के १९३ सदस्यों में से लगभग १७७ सदस्य राष्ट्रों ने २१ जून, २०१५ को अंतरराष्ट्रीय योगदिवस के रूप में मान्यता देने के प्रस्ताव पर सहमति दी, जिसमें ४७ मुसलिम देशों ने भी इस प्रस्ताव पर मुहर लगाई।

सुपरिचित लेखक एवं आचार्य। अब तक 'संस्कृत साहित्य में मनोविज्ञान' एवं अनेक शोध-पत्र प्रकाशित। अनेक सेमिनार, गोष्ठी आदि में पेपर प्रस्तुति एवं सहभागिता। 'संस्कृत समाराधक' सम्मान से सम्मानित। संप्रति जाकिर हुसैन कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय में संस्कृत के सहायक आचार्य।

भारत के प्रस्ताव से स्वीकृत योग ने पता नहीं कितने वर्षों बाद विश्व के हर कोने के लोगों को एक धरातल पर लाकर खड़ा किया और यह मानवीय एकता का आधार बना है। इस अवसर पर दुनिया भर में ३० करोड़ से ज्यादा लोगों ने योग किया। यह विश्व कल्याण में मानव समुदाय के हित में अपनी विद्या के प्रयोग की विनम्र आत्मसंतुष्टि है। वास्तव में भारतीयों को आज यह एहसास होना चाहिए कि हमारा अपने प्रति और विश्व के प्रति दायित्व क्या है और उस दायित्व के अनुरूप हमको आगे कार्य करना है।

सृष्टि के आदि में पृथ्वी पर जन्म लेने के साथ ही मनुष्य ने जीवन में दुःख का अनुभव करके उससे बचने का प्रयास प्रारंभ किया, जिसके संकेत हमें 'तमेव विदित्वा अतिमृत्युमेति' मंत्र से प्राप्त होते हैं। उसी काल में उसने त्रिविध (आध्यात्मिक, आदिभौतिक और आदिदैविक) दुःखों का निवारण करने के लिए जिन अनेक उपायों का अनुसंधान किया, योगसाधना उनमें मुख्य है।

भारतीय दर्शन का मूल उद्देश्य परमसत्य को पहचानना रहा है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्राचीन दार्शनिकों ने सिद्धांत और व्यवहार पक्ष को माध्यम बनाया था; परंतु योगदर्शन ने व्यवहार पक्ष को प्रधानता दी। योगदर्शन अपने विशृंखलित रूप से वेदों, उपनिषदों तथा सूत्रों में उपलब्ध होता है। योग पद 'युज समाधौ' धातु से निष्पन्न हुआ है,

जिसका अर्थ है—समाधि। मन की समाधि स्वरूपता ही परम योग है, यही योग का परमलक्ष्य है तथा युजिरयोगे धातु से भी योग शब्द निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है—जुड़ना अर्थात् जीवात्मा के साथ परमात्मा में मिल जाना है। आत्मदर्शन प्राप्त करना ही परम धर्म है—

'अयं तु परमो धर्मो यद् योगेनात्मदर्शनम्।'

कठोपनिषद् में योग की महत्ता को स्वीकार किया गया है।

यदा पञ्चावतिष्ठन्ते ज्ञानानि मनसा सह।

बुदिश्च न विचेष्टति तामाहु: परमां गतिम्॥

तां योगमिति मन्यन्ते स्थिरामिन्द्रयधारणाम्।

योग त्रेत को मानता है। योगदर्शन में मोक्ष की प्राप्ति को मनुष्य के जीवन का परम लक्ष्य माना जाता है। योग भाष्यकार के अनुसार परम गुरु ईश्वर के प्रति सभी कर्मों का अर्पण करना ही ईश्वर प्राणिधान है। भौतिकता स्थापना तथा कर्मफल के प्रदायक के रूप में ईश्वर की सत्ता स्वीकार की गई है। उत्तर-आधुनिकता के दौर में ईश्वर की अवहेलना से नैतिकता का ह्रास होता दिखाई देता है, जिनसे अनैतिक गतिविधियाँ, जैसे भ्रष्टाचार, रिश्वत, चरित्रहीनता आदि की वृद्धि हो रही है।

योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:—चित्त की वृत्ति को निरोधित करना ही योग कहलाता है। अंत:करण चतुष्ट्य मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार को चित्त कहा जाता है। चित्त की अनेकानेक वृत्तियाँ होती हैं, क्योंकि चित्त जिस अवस्था अथवा स्थिति में रहता है, वह उसकी वृत्ति बन जाती है। वृत्ति का अर्थ ढंग अथवा रीति है। चित्त अनेक रूपों में परिणत होता रहता है। अत: वह अनेक वृत्तियोंवाला कहा जा सकता है। मनुष्य में सत्त्व, रजस् और तमस्, इन तीन गुणों में से किसी एक गुण की प्रधानता रहती है। जब मनुष्य राजस, तामस वृत्तियों का निरोध कर लेता है तो उसमें सात्त्विक वृत्ति का उदय होता है। चित्तवृत्ति के द्वारा हमें सांसारिक विषयों का ज्ञान होता है और यह ज्ञान प्रति क्षण बदलता रहता है।

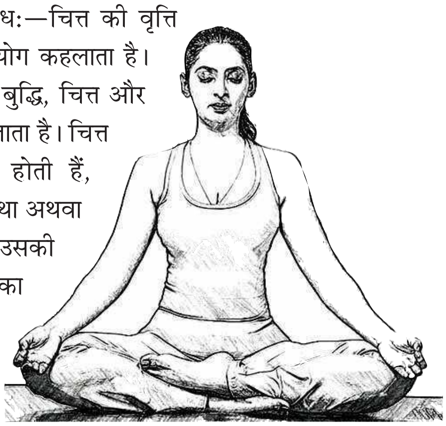

प्राचीन भारतीय चिंतन का परम लक्ष्य शुद्ध ज्ञान आधारित सुख (आनंद) प्राप्ति रहा है। संसार के दु:खों से मुक्ति-प्राप्ति के फलस्वरूप इस संदर्भ में अनेक चिंतनधाराएँ विकसित हुईं, जिनका उद्‍देश्य परमसत्ता को जानना तथा दु:खों से आत्यंतिक निवृत्ति था। योग भारतीय संस्कृति की एक समृद्ध संपत्ति है। योग शब्द साधन और साध्य, दोनों का वाचक है।

पतंजलि योगसूत्र में योगदर्शन के चार पदों—समाधिवाद, साधनावाद, विभूतिवाद और कैवल्यवाद में विभाजित १९५ सूत्रों की रचना हुई है। भारतीय दर्शन की विविध शाखाओं, मुख्यत: सांख्य और योग-दर्शनों का प्रमुख सिद्धांत है—विवेकज्ञान अर्थात् आत्मा (पुरुष) शरीर इंद्रिय मन और बुद्धि से भिन्न है और इसके ज्ञान के बिना दु:खों से मुक्ति प्राप्त करना संभव नहीं है। परंतु मनुष्य इस ज्ञान का अधिकारी तभी बन पाता है, जब वह शारीरिक एवं मानसिक वृत्तियों का नियमन करते हुए आत्मा और पुरुष के यथार्थ के स्वरूप को पहचाने। आत्मा के स्वरूप का ज्ञान होने पर ही उसे ज्ञान हो पाता है। शरीर, इंद्रिय, मन, बुद्धि (चित्त) और सुख-दु:ख के भोक्ता अहंकार से आत्मा भिन्न है। वह पाप, रोग, जरा, जन्म और मृत्यु से परे है। यह ज्ञान ही आत्मज्ञान है, इस आत्मज्ञान को ही विवेक ज्ञान कहते हैं। आत्मज्ञान की साधना के लिए योगदर्शन में व्यावहारिक मार्ग बताया गया है।

योगाङ्गनुष्ठानादषुद्धिक्षयेज्ञानदीप्तिरा विवेकख्याते:।

इसकी प्राप्ति 'यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहार धारणाध्यान समाधयोऽष्टावङ्गानि।'

वेद में कर्म, ज्ञान, उपासना में कर्म के अंतर्गत यज्ञादि कर्मों के कौशल को योग कहा है, इसका लक्ष्य निष्काम होकर कर्म करना है। कर्म करते हुए कर्म-बंधन से मुक्त होना ही योग का स्वरूप माना गया है। ज्ञानकांड के अनुसार, जीवात्मा और परमात्मा के एकीकरण को योग कहा गया है। उपासनाकांड के अनुसार, चित्तवृत्तियों के निरोध को योग कहते हैं। योग सूत्र के अनुसार, चित्त एक स्फुटिक सा निर्मल और शांत तालाब है, वह तब तक निर्मल और शांत ही रहता है, जब तक उसमें विचार या वृत्तियों की लहरें नहीं उठतीं।

योगसूत्र के अनुसार, आत्मा में कोई विकार नहीं होता, तथापि परिवर्तनशील चित्तवृत्तियों में उसके प्रतिबिंबित होने के कारण उसमें परिवर्तन का अभ्यास होता है, जैसे नदी की लहरों में प्रतिबिंबित चंद्रमा हिलता हुआ जान पड़ता है। विवेकज्ञान न होने पर आत्मा उन्हीं में अपने को देखने लगती है और सांसारिक विषयों में सुख-दु:ख एवं राग-द्वेष का भाव रहने लगता है। इसी बंधन से छुटकारा पाने का एकमात्र उपाय चित्त की वृत्ति का निरोध है।

सहायक आचार्य (संस्कृत विभाग)
जाकिर हुसैन कॉलेज (सांध्य)
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
दूरभाष : ०९८७३३०४९७२

झुर्रियाँ

• **ममता चंद्रशेखर**

प्राध्यापिका एवं लेखिका। अब तक ग्यारह पुस्तकें प्रकाशित एवं दो पुस्तकें विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में पढ़ाई जा रही हैं। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में ५३ शोधपत्र व ४४ आलेख प्रकाशित। रानी दुर्गावती अवार्ड, श्रेष्ठ वक्ता अवार्ड एवं अन्य सम्मान।

वे चंद पलों के लिए आईने के सामने क्या खड़ी हुईं कि चेहरे पर पड़ी झुर्रियों ने चुगली करनी शुरू कर दी। झुर्रियों के पीछे से झाँकती अपनी अवहेलना के दर्द से उपजी उम्र की गहरी लकीरें, माथे पर पड़ी सलवटों पर लिपटे जीवन के किस्से, धँसी हुई आँखों से छलकती बेबसी, सिले से होंठों से निकलती एक अनकही दास्ताँ और भी बहुत कुछ कह रहा था आईना। खुद को आईने में निहारती अम्माँ असहज सा महसूस कर रही थीं। बड़ा आक्रोश आ रहा था उन्हें चेहरे की इन झुर्रियों पर। वे सोचने लगीं कि ये झुर्रियाँ बड़ी मनहूस हैं। ये अकेले नहीं आई हैं, अपने साथ-साथ ये लाचारी बीमारी व अकेलापन भी लाई हैं। जब ये नहीं थीं, मैं जवाँ थी, मेरे बच्चे मेरे पास थे। वे 'मेरी माँ', मेरी माँ' कहकर आपस में मेरे लिए लड़ते थे। तीनों आपस में अपनी तरफ खींचते और मैं हँसती रहती।

वक्त ने मेरी झोली में अब तन्हाई डाल दी है। उम्र के साथ-साथ आई इन झुर्रियों ने मुझे मेरे अपनों से अलग कर दिया है। समय बदला बच्चे बदल गए। लड़ते तो वे अब भी हैं आपस में मेरे लिए, पर कहते हैं, 'तेरी माँ है, तू रख।' दूसरा कहता है, 'तेरी भी तो माँ है, तू रख।' उनकी इस आपसी लड़ाई ने मेरा दिल तोड़ दिया। चिड़चिड़ा बना दिया। उम्र के इस मुकाम पर कहाँ जाऊँ। यह अवहेलना सहन नहीं होती। तभी एक आहट ने अम्माँ का ध्यान भंग कर दिया। दरवाजे पर बाहर से लगे ताले को खोलने की आवाज आई। अम्माँ झट से आईना के सामने से हट गईं। उन्हें पता था कि कम्मो ही होगी। अम्माँ को अपने बड़े बेटे-बहू के साथ रहना ठीक लगता था, क्योंकि यहाँ पर उसका ध्यान रखने के लिए कम्मो थी। काम करनेवाली इस लड़की के कारण ही वे इतने बड़े घर में अकेले होकर भी अकेलेपन से दूर रहती थीं। यद्यपि अपनों से दूर रहने का दर्द तो उन्हें सताता ही था। पर ठीक है, एक कमरा उन्हें दे दिया गया था, जिसमें उनकी जरूरत का सारा सामान था। पति की पेंशन उनके सम्मान के रक्षक जैसी थी।

कम्मो के अंदर आते ही अम्माँ ने पूछा, ''आज इतनी देर क्यों कर दी?''

''मेरी मौसी की लड़की की सगाई है तो मैं पार्लर गई थी।''

''पार्लर!''

''हाँ, आइब्रो बनवानी थी न!''

''चल ठीक है, पहले खाना ले आ।''

कम्मो के जाते ही अम्माँ सोचने लगीं—आजकल की लड़कियाँ तो न जाने क्या-क्या करती हैं। मैंने तो कभी आर्लर-पार्लर का मुँह तक नहीं देखा।

''अम्माँ यह लो खाना।'' थाली आगे बढ़ाते हुए कम्मो ने कहा।

''तू भी अपने लिए ले आ।''

खाना खाते-खाते अम्माँ ने कम्मो से पूछा, ''और क्या-क्या होता है पार्लर में?''

कम्मो बताने लगी, ''अरे अम्माँ, वहाँ सिर के बाल काटते हैं, हाथ-पाँव के रुआँ निकालते हैं और हाँ, मुँह की झुर्रियाँ कम करवाने के लिए भी मैडम लोग आती हैं।''

''क्या मुँह की?''

''अरे, सॉरी-सॉरी चेहरे की।''

''चेहरे की झुर्रियाँ कम हो जाती हैं!'' अम्माँ ने जिज्ञासावश पूछा।

''हाँ अम्माँ, होती होंगी।''

कुछ सोचते हुए अम्माँ बोलीं, ''मेरे चेहरे की भी कम हो जाएँगी?''

कम्मो अम्माँ की यह बात सुनकर हँस पड़ी। हँसते हुए बोली, ''अम्माँ कैसे जाओगी पार्लर, चलते तो बनता नहीं है?''

कम्मो की बात सुनकर अम्माँ ऐसे चुप हो गईं, मानो चलती गाड़ी में किसी ने अनायास ही ब्रेक लगा दिया हो। अम्माँ का उतरा मुँह देखकर कम्मो भी चुपचाप वहाँ से चली गई।

दूसरे दिन अम्माँ को फिर बाहर से ताला खोलने की आवाज आई। उन्होंने सोचा, कम्मो होगी। हाँ, कम्मो ही थी, लेकिन उसके साथ एक महिला भी थी। उसे देखकर अम्माँ ने पूछा, ''ये कौन हैं?''

''ये पार्लरवाली दीदी हैं।''

वह महिला बिना वक्त गँवाए बोली, ''नमस्ते अम्माँ, मैं सिमरन हूँ, चलिए, आपका फैशियल कर दें।''

उसकी बात सुनकर अम्माँ थोड़ी शरमाईं। झेंपते हुए कम्मो को देखा, उसने समर्थन में गरदन हिला दी। अम्माँ बिना कुछ कहे ब्यूटीशियन के साथ अंदर अपने कमरे में चली गईं। शाम को अम्माँ का चेहरा चमक

रहा था। इसलिए नहीं कि झुर्रियाँ कम हो गई थीं, बल्कि इसलिए कि उन्होंने अपने लिए जिया था। वह किया, जिसे करने का उनका मन किया। यह उनके आत्मविश्वास की चमक थी।

बेटे-बहू के आने पर अम्माँ उनका सामना करने में थोड़ा झिझक रही थीं। पर बेटे-बहू के पास वक्त कहाँ है उन्हें निहारने या सराहने का। वे दोनों तो अंग्रेजी में अपनी गिटर-पिटर करते खाना खाकर सोने चले गए। पहली बार अम्माँ को उनका यों अंग्रेजी में बतियाना अच्छा नहीं लगा।

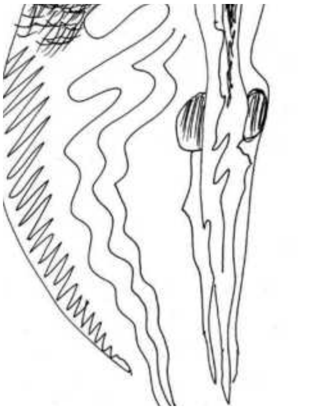

वे अपनी इस पीड़ा को दबा न सकीं और दूसरे दिन कम्मो के मार्फत पार्लरवाली को बुलाया। उससे अम्माँ पूछने लगीं, ''बेटी, आपकी पहचान में कोई अंग्रेजी सिखानेवाला है क्या?

''हाँ है, पर क्यों अम्माँ?''

''मेरे मन में अंग्रेजी सीखने का विचार आया है।''

वह ध्यान से अम्माँ को देख रही थी।

अम्माँ को ६६ की उम्र में न जाने क्या हुआ कि वे दिलोजान से अंग्रेजी सीखने लगीं।

सुबह टहलने जाने लगीं। अपना खयाल रखने लगीं। अपना काम खुद करने लगीं। हवाई जहाज में बैठने से डरनेवाली अम्माँ ने अपनी बेटी के घर पुणे जाने के लिए एयर का सफर तय किया।

बेटी ने अम्माँ में आए बदलावों को तुरंत एयरपोर्ट पर ही महसूस कर लिया। वह अभिभूत थी—उनकी चाल देखकर, उनके शब्दों के चयन व अंग्रेजी का उच्चारण सुनकर। वह खुशी से फूले नहीं समा रही थी। सबसे अपनी माँ को मिलवाती। दोनों भाइयों को भी उसने माँ में आए परिवर्तनों के बारे में बताया।

पोतियाँ भी अब अम्माँ के साथ समय बिताने लगी थीं। एक सप्ताह कब बीत गया, पता ही नहीं चला। एक दिन अम्माँ के छोटे बेटे का फोन आया, ''माँ, वहाँ बहुत रह लीं, अब मेरे यहाँ अहमदाबाद आ जाओ।'' दीदी ने माँ से फोन छीनते हुए अपने भाई को जवाब दिया, ''अभी नहीं आएगी माँ।''

भाई ने जवाब दिया, ''मेरी भी माँ है, क्यों नहीं आएगी!''

यहीं से बेटी ने कहा, ''ठीक है, ठीक है, पर अभी तो माँ यहीं रहेगी।''

अपने बच्चों के बीच होनेवाली इस नोक-झोक को सुनकर अम्माँ की आँखें भर आईं। उन्हें वही पुराने दिन याद आ गए। उन्हें अब शिकायत नहीं थी अपनी झुर्रियों से।

२८ रेडियो कॉलोनी
इंदौर-४५२००१
दूरभाष : ०९९७७९९३३१०

लघुकथा

सच बताना

• अशोक गुजराती

और वह साथ ही बी.एस-सी. कर लेंगे। तब तक एक-दूसरे को जानने का भरपूर मौका मिलता रहेगा। हमारा प्यार परवान चढ़ता रहेगा। इसके पश्चात् वह बी.एड. करेगी, मैं एम.एस-सी.। मैं प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी में लग जाऊँगा। उसे स्थानीय कॉन्वेंट में नौकरी मिल जाएगी। मेरा परिश्रम सफल होगा। मैं आई.ए.एस. करने के बाद धीरे-धीरे प्रथम श्रेणी का राजपत्रित अधिकारी बन जाऊँगा। तब हम दोनों वैवाहिक सूत्र में बँध जाएँगे। हमारे दीर्घ अतीव प्रेम की इस परिणति पर हम प्रत्येक आगत दिन को जश्न की तरह मनाएँगे।

हमारे एक बेटा और एक बेटी होंगे। हमारी आय तथा साधन संपन्नता इतनी अधिक रहेगी कि बच्चों के पालन-पोषण में कोई कमी नहीं रहेगी। बच्चे निश्चित ही बेहद जहीन होंगे। वे उम्र की सीढ़ियाँ चढ़ते चले जाएँगे। बेटा इंजीनियरिंग करने के उपरांत एम.एस. करने अमेरिका चला जाएगा। वहीं उसे बढ़िया जॉब मिल जाएगा। बेटी इस बीच एम.बी.बी.एस., फिर एम.एस. कर लेगी।

बेटा अपनी प्रेमिका और बेटी अपने प्रेमी सहपाठियों से शादी के लिए इसरार करेंगे। उनकी उच्च शिक्षा और सुसंस्कृत घरानों को देख हम तुरंत राजी हो जाएँगे। एक ही मंडप से हमें शालीन बहू और सुशील दामाद की प्राप्ति हो जाएगी। बेटा कुछ दिनों के बाद बहू को लेकर अमेरिका चला जाएगा। वहाँ जाकर वह न कहने के बावजूद काफी पैसे भेजता रहेगा। मोबाइल से, नेट से हमारा हमेशा संपर्क बना रहेगा। दामाद भी चूँकि एम.डी. होगा, उन्हें मैं एक विशाल हॉस्पिटल बनवा दूँगा, जहाँ वे अनेक मरीजों के मसीहा बन जाएँगे।

सबकुछ सुखद। आनेवाले सालों में पोते-पोती, नाती-नातिन के लाड़ में हम पति-पत्नी भी अपने उत्तर काल का आशातीत उपभोग करते रहेंगे।

यह कथा इस छोर तक आ चुकी होगी किसी भी रुकावट के बिना। अब आप तय करें कि क्या सबकुछ यों ही खुशनुमा चला और चलता रहेगा?

बी-४०, एफ-१, दिलशाद कॉलोनी, दिल्ली-११००९५
दूरभाष : ०९९७१७४४१६४

पुस्तक-प्रेमी

• अश्विनी कुमार दुबे

सुपरिचित व्यंग्य लेखक एवं उपन्यासकार। 'घूँघट के पट खोल', 'शहर बंद है', 'अटैची संस्कृति', 'अपने-अपने लोकतंत्र', 'फ्रेम से बड़ी तसवीर', 'कदंब का पेड़' (व्यंग्य-संग्रह), 'जाने-अनजाने दुःख' (उपन्यास)। उत्कृष्ट लेखन के लिए भारतेंदु पुरस्कार, अखिल भारतीय अंबिका प्रसाद दिव्य पुरस्कार प्राप्त।

पड़ोस में वर्माजी ने एक बहुत बड़ा मकान बनवाया। गृह प्रवेश के दिन उन्होंने हवन-पूजन कराया और शाम को भव्य पार्टी आयोजित की। उनका शानदार भवन और विशाल भोज का आयोजन देखकर मन प्रसन्न हो गया। वे उत्साह में मुझे अपना घर दिखाने भीतर ले गए। वहाँ सबकुछ सुंदर और भव्य था। बैठक में आते ही मेरी निगाह सामने अलमारी में रखी हुई किताबों पर गई। वहाँ संस्कृत, उर्दू, हिंदी और अंग्रेजी की कुछ प्रसिद्ध किताबें रखी हुई थीं। किताबें देखकर मुझे प्रसन्नता हुई। मैंने झट वर्माजी से पूछा, ''ये प्रसिद्ध किताबें आप पढ़ते हैं?'' उन्होंने खुश होकर मुझसे ही पूछा, ''क्या ये किताबें बहुत खास हैं?'' अब मेरे चौंकने की बारी थी। मैंने कहा, ''हाँ, ये बहुत प्रसिद्ध किताबें हैं।'' वे बोले, ''अच्छा-अच्छा, इंटीरियर डेकोरेटर ने लाकर यहाँ सजा दीं और कहा था कि इससे लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा। लोग आपको सुरुचि-संपन्न और साहित्य प्रेमी समझेंगे। ऐसा समझने से लोगों में आपकी इज्जत बढ़ेगी। इंटीरियर डेकोरेटर की बात सही निकली। आपको ये किताबें यहाँ देखकर अच्छा लगा, और लोगों को भी लगेगा। इंटीरियर डेकोरेटर की सूझ-बूझ काम आई। बहुत अच्छा बंदा है वो। पैसे जरूर उसने मेरे अनुमान से ज्यादा लिये। पत्नी ने मुझसे कहा भी था कि ये डेकोरेटर बहुत महँगा है, कोई दूसरा कर लें? परंतु मुझे उसकी बातों ने प्रभावित किया। जब उसने बैठकवाली इस रैक में कुछ किताबें सजाने की बात कही, तब मुझे अटपटा जरूर लगा था। मेरे पास दोस्तों के दिए हुए कई महँगे गिफ्ट हैं, मैं उन्हें यहाँ सजाना चाहता था। अपनी विदेश यात्राओं के दौरान मैं कई प्रकार के महँगे सजावटी सामान लाया था, वह सब सामान तो उसने लगाया ही, परंतु ये किताबें स्वयं लाकर इस रैक में सजाईं। उस समय मुझे लगा कि व्यर्थ ही उसने इन किताबों में मेरे पैसे बरबाद किए। पर अब समझ में आया, वह ठीक कहता है। उसने सही जगह पर सही चीजें सजाईं।''

मेरे पास अब पूछने और कहने के लिए कुछ न था। मैं चुपचाप उस महाभोज में सम्मिलित होकर घर आ गया। टी.वी. खोला तो प्रसिद्ध लेखिका महाश्वेता देवी के निधन का समाचार सुनकर मन उदास हो गया। कई राजनेताओं के श्रद्धांजलि वक्तव्य प्रसारित हो रहे हैं। एक ने कहा कि महाश्वेताजी हिंदी की महान् कवयित्री थीं। उनके निधन से हिंदी साहित्य का बहुत बड़ा नुकसान हो गया है। दूसरे ने उन्हें महान् लेखिका बताते हुए कहा कि उनके कई उपन्यासों पर लोकप्रिय फिल्में बन चुकी हैं, इस प्रकार फिल्म-जगत् में उनके निधन से जो शून्य व्याप्त हुआ है, उसे कभी नहीं भरा जा सकता। एक मंत्री ने तो यहाँ तक कहा कि उनकी प्रसिद्ध कृति 'प्रथम प्रतिश्रुति' मैंने पढ़ी है, इतनी दिलचस्प किताब मैंने फिर नहीं पढ़ी। काश, हमारे मंत्री महोदय को कोई बताता कि 'प्रथम प्रतिश्रुति' महाश्वेता देवी की नहीं, आशापूर्ण देवी की प्रसिद्ध रचना है। सारे देश ने हमारे राजनेताओं के ये प्रभावशाली वक्तव्य टी.वी. पर देखे-सुने और अपने जनप्रतिनिधियों के साहित्यिक ज्ञान पर बहुत गर्व किया।

एक प्रसिद्ध क्रिकेट खिलाड़ी पिछले दिनों मेरे शहर में आए। वे आए तो अपने किसी निजी कार्यक्रम में थे, परंतु युवा पीढ़ी उनकी दीवानी। पत्रकारों के लिए कुछ नया मसाला। इत्तफाक से मैं भी उस दिन उस होटल में ठहरे हुए अपने एक मित्र से मिलने गया था। होटल के हॉल में पैर रखने तक की जगह नहीं थी। लड़के-लड़कियाँ उन खिलाड़ी महोदय की एक झलक पाने के लिए बेचैन थे। पत्रकार अपने-अपने माइक थामे उनसे कुछ भी पूछ लेने के लिए पूरी तरह मुस्तैद। कुछ इंतजार के बाद वे अपनी विशिष्ट अदाओं सहित हॉल में प्रकट हुए। वे अपने हाथ में क्रिकेट का बल्ला थामे हुए थे, जैसे क्रीज पर उतरे हों। उन्होंने बल्ला हवा में लहराते हुए अपने प्रशंसकों का अभिवादन किया। हवा में सैकड़ों हाथ लहराए। पत्रकार उनकी ओर लपके और पहला प्रश्न उछला, ''आपकी प्रेरणा?'' दर्शक सोचते थे कि वे भावुक अंदाज में अपनी पत्नी या किसी गर्लफ्रेंड का नाम लेंगे। या जैसा कि चलन है, अपने माता-पिता का नाम लें, भले ही उनके माता-पिता उनकी फैमिली में एडजस्ट न हो पाने के कारण अलग किसी फ्लैट में रहते हों। उन्होंने इन पारंपरिक जवाबों से हटकर स्वामी विवेकानंद का नाम लिया और कहा, ''मैंने उनका पूरा साहित्य पढ़ा है और मुझे उनकी किताब 'योगी कथामृत' बहुत पसंद है।'' अब इन्हें कौन बताए कि 'योगी कथामृत' विवेकानंद की नहीं, परमहंस योगनंदजी की प्रसिद्ध कृति है। दरअसल विवेकानंद से उन्हें कोई लेना-देना नहीं है। उन्होंने विवेकानंद का सिर्फ नाम सुना है और शहर में उनके स्टैच्यू देखे हैं। वे एक महान् योगी थे, ऐसा उन्होंने सुन रखा है, उनके विषय में उन्होंने पढ़ा कुछ भी नहीं। उनका नाम लेने से अपनी महानता बढ़ जाती है। अहा! इन्होंने स्वामी विवेकानंद

से प्रेरणा ली। कितने महान् व्यक्ति हैं ये! जबकि रात में इनके लिए बढ़िया दारू-मुरगे का यहाँ आयोजन है। आगे उन्होंने कहा कि विवेकानंद खेलों को पसंद करते थे और अपने जीवन में सदा हर खेल में अव्वल आते थे, मानो वे बहुत बड़े खिलाड़ी रहे हों। आगे कुछ सुनना मुझे गवारा नहीं हुआ। मैं अपने मित्र से मिलकर झटपट वहाँ से आ गया।

दूसरे दिन अखबारों में छपा कि हमारे शहर में पधारे लोकप्रिय क्रिकेट खिलाड़ी ने अपने जीवन में क्रिकेट खेलने की प्रेरणा स्वामी विवेकानंद से ली। एक बार फुटबॉल खेलने की बात होती, तब भी गले उतर जाती, क्योंकि विवेकानंद बच्चों के फुटबॉल खेलने का समर्थन करते थे। बहरहाल विवेकानंद का नाम उनकी लोकप्रियता के लिए जरूरी है। विवेकानंद के आदर्शों का अनुसरण करके महान् बनना तो कठिन है। हाँ, उनका नाम अपने साथ जोड़कर जरूर महानता का भ्रम पैदा किया जा सकता है। प्रेरणा के पुराने स्रोत माता-पिता, गुरुजन, भाई, पत्नी या प्रेमिका, ये अब पुराने हुए। इनका नाम लेने से कोई ज्यादा प्रभावित नहीं होता। ये तो सबके जीवन के प्रेरणास्रोत होते हैं। इसमें नया क्या? वैसे आजकल माता-पिता, गुरुजन आदि, जिनकी आपके जीवन में कितनी ही महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है, उन्हें उपेक्षित करने का चलन ज्यादा है। कोई ऐसा नाम प्रेरणा के लिए लो, जो जग-प्रसिद्ध है, उससे जुड़कर हमें ज्यादा प्रसिद्धि मिल सकती है। भले ही हम उस महान् व्यक्ति के विषय में कुछ न जानते हों। जानने की जरूरत क्या है! हमें तो उनका नाम भर चाहिए, सो हमने ले लिया और उन्हें अपना प्रेरणास्रोत बना लिया, बस।

आजकल साहित्योत्सवों में फिल्म स्टारों को बुलाने का चलन बढ़ गया है। हमारे यहाँ फिल्म स्टार माने खुदा। कभी-कभी लगता है, खुदा से भी ज्यादा सर्वगुण-संपन्न, सर्वज्ञाता, विशिष्ट, वगैरह-वगैरह। किसी भी क्षेत्र की कोई घटना हो, जिसके विषय में हमारे फिल्म स्टार महोदय को कुछ नहीं मालूम, परंतु अखबार में उनका वक्तव्य प्रमुखता से छापा जाएगा। वे सर्वज्ञाता जो ठहरे। वे अपने बयानों में प्रधानमंत्री को सलाह देते हुए पाए जाएँगे, जैसे राजनीति के विशेषज्ञ हों। सामाजिक सुधार के आंदोलन में नेतृत्व करने पहुँच जाएँगे। धार्मिक कार्यों में उनका पूरा हस्तक्षेप रहेगा। उनका बस चले तो वे वैज्ञानिकों को भी सलाह देने से न चूकें। हर क्षेत्र में उनके बेसिर-पैर वाले वक्तव्य हाजिर होते हैं। इधर साहित्य-उत्सवों में उनको साहित्य पर तकरीरें झाड़ते हुए देखा जा सकता है। मानो उनसे ज्यादा पुस्तक-प्रेमी कोई है ही नहीं। हर फिल्म स्टार कुछ हो न हो, एक अदद लेखक जरूर होता है। इन दिनों आत्मकथाएँ लिखने का फैशन चल निकला है। हर अदना फिल्म कलाकार जुटा है अपनी आत्मकथा लिखने में। वह अपने भाषणों में फख्र से बताता है कि उसने निराला, पंत, महादेवी और प्रेमचंद से लेकर कुशवाहाकांत तक, सबको पढ़ा है। फिल्मों में न आता तो आज वह देश का सबसे बड़ा लेखक होता। साहित्य-उत्सवों के आयोजक खुशी-खुशी हमारे फिल्म स्टारों को अपने आयोजन में मुख्य अतिथि और अध्यक्ष बनाते हैं। मंच पर ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित लेखक बैठे हैं। साहित्य अकादेमी से पुरस्कृत साहित्यकार मौजूद हैं, उनके बीच में हमारे फिल्म स्टार महोदय अपनी आभा बिखेरते हुए विराजमान हैं। कितना मनोरम और गौरवशाली दृश्य होता है यह! फिर हमारे फिल्म स्टार महोदय उस मंच से अपनी खिचड़ी भाषा में भाषण बघारते हैं, जिसमें वे कई नामी साहित्यकारों और उनकी प्रसिद्ध किताबों का नाम लेना नहीं भूलते, हालाँकि वे किताबें उन्होंने देखी तक नहीं होतीं। अब नेट से भाषण लायक जानकारी तो आसानी से निकाली ही जा सकती है। उन्होंने निकाल ली और अपना भाषण अपने अभिनयवाले अंदाज में खूब झाड़ा। आयोजक धन्य हुए और दर्शक खुश। साहित्यिक आयोजन स्थल के मुख्य द्वार पर साहित्यकारों के नहीं, फिल्म स्टारों के पोस्टर ही प्रमुखता से लगाए गए थे। वे सेलीब्रिट्रीज जो ठहरे, युवा पीढ़ी पागल है उनकी एक झलक पाने के लिए। इस प्रकार साहित्य और साहित्यकारों की महत्ता, ऐसे आयोजन भलीभाँति स्थापित कर रहे हैं। आयोजकों को साधुवाद!

इन दिनों आत्मकथाएँ लिखने का फैशन चल निकला है। हर अदना फिल्म कलाकार जुटा है अपनी आत्मकथा लिखने में। वह अपने भाषणों में फख्र से बताता है कि उसने निराला, पंत, महादेवी और प्रेमचंद से लेकर कुशवाहाकांत तक, सबको पढ़ा है। फिल्मों में न आता तो आज वह देश का सबसे बड़ा लेखक होता। साहित्य-उत्सवों के आयोजक खुशी-खुशी हमारे फिल्म स्टारों को अपने आयोजन में मुख्य अतिथि और अध्यक्ष बनाते हैं। मंच पर ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित लेखक बैठे हैं। साहित्य अकादेमी से पुरस्कृत साहित्यकार मौजूद हैं, उनके बीच में हमारे फिल्म स्टार महोदय अपनी आभा बिखेरते हुए विराजमान हैं।

पुस्तकें पढ़ने से ज्यादा अपने आपको पुस्तकों का प्रेमी साबित करना बड़ी बात है। हमारे एक मित्र हैं—अंग्रेजी भाषा के जानकार। न उन्होंने हिंदी साहित्य पढ़ा और न अंग्रेजी साहित्य, मगर वे साहित्य के विशेषज्ञ माने जाते हैं। यह अंग्रेजी भाषा का चमत्कार है। उनका मानना है कि दुनिया में जो कुछ अच्छा लिखा-पढ़ा गया है, वह सब अंग्रेजी में।

गोष्ठियों में अच्छा वक्ता वही माना जाता है, जो आठ-दस अंग्रेजी लेखकों के नाम ले और उनकी पुस्तकों की सूची गिनवाए। लोग वाह-वाह कर उठते हैं ऐसा विद्वत्तापूर्ण भाषण सुनके। अहा! कितने विद्वान् हैं ये। कितना विशाल अध्ययन है इनका। अद्भुत! विचार, दर्शन और साहित्य उनके भाषण में सिरे से नदारत होता है। कुछ संस्मरण, बड़े लेखकों से अपने संपर्क-संबंध, कुछ प्रसिद्ध किताबों के नाम और अंग्रेजी के महान् लेखकों का जरूरी जिक्र, इस प्रकार उनका भाषण विशिष्ट, उल्लेखनीय और नए लेखकों के लिए आदर्श व अनुकरणीय टाइप कुछ।

आजकल यह फैशन है कि कहीं भी आप भाषण दे रहे हों तो कुछ बड़े लेखकों के नाम जरूर लें और उनसे संबंधित सच्चे-झूठे संस्मरण

भी सुनाएँ। प्रसिद्ध किताबों का जिक्र भी करें। अब वे किताबें तो आपने पढ़ी नहीं, बस उनके नाम भर सुने हैं, इसलिए उन किताबों में क्या लिखा है, यह बता पाना तो आपके लिए कठिन होगा। यहाँ सिर्फ नामोल्लेख करके आप अपना काम चला सकते हैं। कुछ नोबल प्राइज विनर लेखकों और उनकी किताबों के नाम आपको याद हों तो बहुत अच्छा रहेगा। उनका उल्लेख करने से आपका भाषण उच्च स्तरीय हो जाएगा। बस यही तो आप चाहते हैं। इस प्रकार एक सफल वक्ता को प्रसिद्ध किताबें पढ़ने का जोखिम नहीं उठाना चाहिए। उसे कुछ प्रसिद्ध लेखकों के नाम और उनकी किताबों के विषय में भाषण देने के पूर्व नेट से कुछ सामान्य जानकारी भर मालूम कर लेना ठीक होगा। बस! अत: अच्छा भाषण देने के लिए आपको अच्छी पुस्तकें पढ़ना कतई जरूरी नहीं है। हाँ, अच्छी और प्रसिद्ध पुस्तकों के नाम आपको जरूर मालूम होने चाहिए। इस प्रकार विद्वान् और पुस्तक-प्रेमी के रूप में आपकी छवि बरकरार रहेगी।

एक कार्यक्रम में किसी युवा लेखक ने अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखकों का खूब जिक्र किया। उसने बड़े-बड़े नाम लिये और उनकी कृतियाँ गिनाईं। उस युवा लेखक को अपने अंग्रेजी ज्ञान पर बड़ा गर्व था। कार्यक्रम के पश्चात् ये युवा किसी बुजुर्ग लेखक से खीझते हुए कह रहे थे, ''आपने शेक्सपियर, बड्सवर्थ और यीट्स को नहीं पढ़ा।'' बुजुर्गवार लेखक तुरंत बोले, ''आपने भी वाल्मीकि, कालिदास और भवभूति को नहीं पढ़ा!'' अब ये युवा लेखक बगलें झाँकने लगे। आगे उन बुजुर्ग लेखक ने उन्हें आत्मीयतापूर्वक समझाया, ''जिस प्रकार तुम्हें अपने अंग्रेजी भाषा के जानने पर गर्व है, उसी प्रकार मुझे संस्कृत जानने-समझने पर गर्व है। इससे किसी भाषा का साहित्य छोटा या बड़ा नहीं हो जाता। सभी भाषाओं के साहित्य की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं।'' वे युवा लेखक समझदार थे, इसलिए उस दिन बहुत शर्मिंदा हुए।

नेता, अभिनेता और समाज के अन्य प्रतिष्ठित लोग सिर्फ किताबों के नाम लेकर सफलतापूर्वक अपना काम चला रहे हैं। यह तरीका अत्यंत लोकप्रिय है। आप भी इस स्टाइल को अपना सकते हैं, लेकिन यह जान लीजिए कि पुस्तकें पढ़ना और सिर्फ पुस्तक-प्रेमी कहलाना, दोनों अलग-अलग बातें हैं। चुनाव आपके हाथ में है। किसी कवि ने लिखा है—'महाकाव्य के ओ क्रेताओ/ओ प्रबंध के विक्रेताओ/ ये व्यापार तुम्हीं को शुभ हो!'

सा अ

५२५-आर., महालक्ष्मी नगर, इंदौर-१० (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२५१६७००३

कविता

रूह का शीतल आभास

• गरिमा चारण

आत्माभिव्यंजना

खोजती हूँ पहचान अपनी अजनबी भीड़ में
अलग-अलग चेहरे मेरा नहीं कोई इसमें
हर कोई अपनी दास्तान सुनाता है मुझे
जब भी मुड़ने हो होती हूँ रोक देता है
पल भर देखता है टकटकी लगाए
दूसरे ही पल हँस देता है,
उसकी पहचान मैं नहीं कर पाती
जिसको तलाशने निकली थी मैं स्वयं में
देखती जहाँ तलक स्वयं में सिमटी जाती
लोग हजारों मिले सब नकाब ओढ़े
आत्मा के भार में कुछ दबे
मैं उनके बीच जाती हूँ हर शाम ढले
अपने दिन के उजाले को खोजने
पर प्रहर ढलते-ढलते सब ओझल
पलकों से जहन तक सब बोझिल
सबकुछ तिरोहित हो जाता पलभर में
जहाँ हमारा कोई बस नहीं,
न जाने कैसे पल होते हैं वे
जिनमें नित्य सपने उतरते हैं जमीं पर
पर ठहर नहीं पाते वे
आँखें तो पहले से ख्वाबों से लिपटी थीं
किस द्वार किस ओर निकल गया वह
जिसकी वर्षों से मैंने की थी खोज
पर मेरी जिद है कि उस अनाम राह पर
प्रतीक्षा करूँगी सृष्टि के अंतिम पल तक
साँसों के दबे पाँव निकल जाने तक।

तादात्म्य

काश! दरक जाए आसमां से बादल
आकर बैठ जाएँ मेरे घर के आँगन में
उसकी ठंडी फुहार में सीख लूँ
दर्द पर पैबंद लगाने का हुनर
सबकुछ समेटकर अपने अंदर
बाहर जीने का कसीदा
पत्तों पर छम-सी गिरती ओस-बूँद
आकर मिल जाए आँसू से मेरे
समझ लूँ मैं भी फर्क का दायरा
बसंत की कोयल का राग
घुल जाए मेरा जीवन लघुगान में
जान लूँ मैं भी क्या होता
जीवन उन्माद या विरह तान?
कवियों की कविता का मर्म
ज्ञानियों का तत्त्व-ज्ञान
भक्ति का सागर अपार
देख लूँ भीतर मेरे क्या है?
प्रेम शब्द ब्रह्मरूप समान
रेत की तपन का एहसास
बारिश की ठंडी बौछार
अनुभूत कर लूँ आज मैं
देह की मांसलता से परे
रूह का शीतल आभास,
नभ में पंछियों का कलरव,
अंतस तक कुछ दरकने की झनकार
संगीत माधुर्य और वेदना ज्वार
मुनि साधते सत्य प्रेम तत्त्व-विचार
मैं स्वयं भीतर साधती सकल संसार।

सा अ

हिंदी विभाग,
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय
जोधपुर (राजस्थान)

मकान के किराए का सवाल

मूल : **गुरदेव चौहान**
अनुवाद : **योगेश्वर कौर**

ग्लोबल गाँव

मेरे गाँव में अब कोई कुआँ नहीं रहा
सभी कुएँ भर दिए गए हैं

पूछने पर पता चला कि जिन्हें पीने का पानी
चाहिए था, कुएँ उन तक चलकर नहीं जाते थे
और जिन्हें मौत चाहिए
वे स्वयं चलकर कुएँ तक आ जाते थे
इसलिए सभी कुएँ भर दिए गए हैं।

पता यह भी चला है कि
पीने को पानी और जीने के लिए मौत की सुविधा
अब घर में कर दी गई है
मेरा गाँव अब कितना ग्लोबल हो गया है!

आलोचक

कविता की तारीफ के लिए आलोचक
बार-बार हिम्मत जुटाए नए उदाहरण दें
अन्य भाषाओं के कवियों संग पंजाबी कविता को
मिलाए, उसकी तुलना करे, कितना जोर लगाए

कवि को कुछ समझ आए, कुछ न आए
लेकिन उसके कविता के पाठ को फूल-पत्ते लगाना
कवि को अच्छा लगे, मानो कोई कारीगर
शादी में डालनेवाले, पहननेवाले जेवर पर
झाल चढ़ाए उसे चमकाए

जिसे देखते ही होनेवाली दुलहन
शर्म करे, मुसकाए।

कवि को आलोचक, कविता का निकटवर्ती संबंधी नजर आए
मामा, चाचा, बुआ अथवा फूफड़
कहीं कविता पर वह कब्जा ही न जमा लें,
कवि को बस यही भय खाए।

कबाड़खाना

प्रतिदिन घर में वह किसी वस्तु को खोजता है
घर की वस्तुओं में से जो अपनी जगह टिकी हैं
अथवा खिसक गई हैं अपनी जगह से

कमीज की तह में से जेब की रेजगारी पैसे
वही चीज नहीं मिलती, जिसकी उसे तलाश थी
घर से बाहर आते ही कहता—'कबाड़खाना'

मित्र तक जाता है, गुमशुदा वस्तु की बात करता
मित्र के यहाँ नहीं मिलती, उसमें से मित्र दिखना हट जाता
बाहर आकर कहता—'कबाड़खाना'

अपने पुराने दफ्तर जाता, फिरकी से घूमते हैं
कर्मचारी देखता है नहीं मिलती वस्तु
बाहर आते चिल्लाता है—'कबाड़खाना'

फिर खरीदता दारू की शीशी एक ही साँस में पीता
शीशी बनी रहती खामोश और गुमशुदा वस्तु नदारद
फेंकता है शीशी, सबका सुनने की मुद्रा में चीखता—'कबाड़खाना'

घर आते ही याद आते बच्चे और पत्नी
न जाने क्यों पहले स्मरण नहीं आए सब
तभी आता है उसे भोजन का खयाल
मकान के किराए का सवाल
मालिक-मकान की बदतमीजी का हाल
इन्हीं सवालों के घेरे में
खाट पर लुढ़क जाता वह बेहाल
पत्नी चिल्लाती कहती है—'कबाड़खाना।'

२३९, दशमेश एन्क्लेव
ढकौली-१६०१०४, जीरकपुर
निकट चंडीगढ़
दूरभाष : ९३१६००१५४९

कहानी

रंग

• रोचिका शर्मा

देश की पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, आलेख, कहानी, मुक्तक, दोहे, बाल कविताएँ एवं कहानियाँ आदि एवं साझा कहानी-संग्रह, कविता-संग्रह, लघुकथा-संग्रह प्रकाशित। साहित्य मंडल, श्रीनाथद्वारा द्वारा वर्ष २०१६ में काव्य भूषण सम्मान।

''माँ, मुझे वही चूड़ियाँ चाहिए, सतरंगी चूड़ियाँ!'' उर्मिला अपनी माँ का हाथ खींचते हुए जिद कर मेले में लगी उस दुकान की तरफ इशारा कर रही थी।

''अरे! आगे और भी दुकानें हैं, पूरे बीस दिन तक चलेगा मेला, पहले घूम-फिर तो लें।''

''नहीं माँ, पहले मुझे सतरंगी चूड़ियाँ लेनी हैं, मुझे नहीं झूलना झूला-वूला, न ही मुझे कुछ खाना-पीना है। मुझे तो सतरंगी चूड़ियाँ पहननी हैं।''

हारकर उर्मिला की माँ को पीछे मुड़कर उसी दुकान पर जाना पड़ा और उन सतरंगी चूड़ियों का सेट ऊर्मि को पहनाया, तब कहीं जाकर वह अन्य दुकानों में सामान देख पाई।

दुकानों की मध्यम रंगीन रोशनी में ऊर्मि की नाजुक कलाई में चढ़ी सतरंगी चूड़ियाँ झिलमिला रही थीं; वह अपने हाथ नचा-नचाकर उन्हें निहारती, खिलखिलाती और कभी-कभार अपने नन्हे कदम थिरकाकर नाच उठती, 'मेरे हाथों में नौ-नौ चूड़ियाँ हैं···'

उसकी माँ उसकी अदाएँ देखकर मुसकरा उठती।

सर्दी की गुनगुनी धूप में उसके चेहरे की लालिमा और भी ज्यादा निखरी सी दिखाई पड़ रही थी, मात्र नौ वर्ष की कच्ची उम्र; किंतु सजने-धजने का शौक जैसे कोई नवयौवना।

''माँ, ये तितलियाँ उड़ क्यों जाती हैं? क्यों नहीं एक ही फूल पर बैठ जातीं? क्यों मँडराती हैं इस फूल से उस फूल? माँ, इनके रंग देखो, कितने चटख, कितने लुभावने!''

वह उछलती-कूदती उन रंग-बिरंगी मनभावन तितलियों को पकड़ने उनके पीछे इस क्यारी से उस क्यारी दौड़ने-भागने लगती।

सोलह वर्ष लगते ही यौवन की दहलीज पर ज्यों ही कदम रखा, उस की स्वर्ण सरीखी देह अब गोलाई लेने लगी थी, किसी घुमावदार सड़क के मोड़ सी उसकी कमर जब वह चलती तो ऐसे बल खाती, जैसे कोई नागिन सपेरे की बीन पर नृत्य कर रही हो।

कॉलेज के प्रथम वर्ष की छात्रा उर्मिला अब सलवार-कमीज के साथ दुपट्टा ओढ़ने लगी थी। वही चटख रंग के दुपट्टे, जिस में ढका उसका निखरा हुआ यौवन···चाँद भी उसे देखे तो उसपर रीझ जाए।

कॉलेज के तीन वर्ष पूर्ण होते-होते अपने ही कस्बे के एक फौजी के मन भा गई ऊर्मि।

''डिप्टी कमांडेंट अमर···जी, इसी नाम से पुकारते हैं मुझे।'' वह ऊर्मि के पिताजी के समक्ष हाथ बाँधे खड़ा था। उसका गठीला शरीर, छह फुट का कद और चौड़े कंधे मानो अडिग हिमालय, फौलादी बाँहें जैसे बरगद की मजबूत शाखाएँ। बड़ी विनम्रता से ऊर्मि के पिताजी के सामने सिर झुकाए वह ऊर्मि का हाथ माँग बैठा था।

ऊर्मि कमरे में परदे के पीछे खड़ी कनखियों से उसे झाँक रही थी और लजाई निगाहों से बाबा का जवाब सुनने को आतुर उसका चेहरा सुर्ख हो उठा था।

''दो दिन का समय दो बाबू, जरा घर में सलाह-मशवरा कर लूँ तो कुछ फैसला कर सकूँ।''

''जी जरूर, मैं आपके सकारात्मक फैसले का इंतजार करूँगा।'' और वह मुसकराता हुआ जैसे ही वहाँ से चला, ऊर्मि के हाथों में सजी सतरंगी चूड़ियाँ खनक उठीं, चोर नजरों से वह अमर को जाते हुए देखने लगी और तब तक देखती रही, जब तक वह उसकी नजरों से ओझल न हो गया।

ऊर्मि की माँ तो डिप्टी कमांडेंट अमर को तब से ही पसंद करती थी, जब वह सिर्फ बारहवीं कक्षा का अमर था, सो घर में बातचीत कर ऊर्मि का रिश्ता पक्का कर दिया गया।

पंडितजी से मुहूर्त निकलवा अगले ही महीने दोनों का विवाह संपन्न हुआ और अब ऊर्मि की कलाइयाँ चूड़ियों से ज्यादा भरी-भरी रहने लगीं। महीन-महीन सतरंगी चूड़ियाँ, नित नया श्रृंगार, काजल की तीखी धार जैसे धनुष से निकला तीर, जो किसी के दिल पर लगे तो वहाँ से प्रेम का सोता फूट पड़े।

एक माह के अवकाश के पश्चात् ज्यों ही डिप्टी कमांडेंट अमर ने पोस्टिंग पर कश्मीर जाने की घोषणा की, ऊर्मि की कजरारी आँखें पनीली हो उठीं।

''अरे पगली! यह तो मेरा काम है और मेरा धर्म भी, मुझे जाना ही होगा, तुम यहाँ माँ-बाबा के साथ रहो और मुझे मेरा फर्ज निभाने दो।''

''मैंने कब कहा कि मुझसे ब्याहकर तुम अपना फर्ज त्याग दो, पर क्या मैं तुम्हारे संग नहीं जा सकती?''

''कैसी बात कर रही हो तुम? भला वहाँ रहकर क्या करोगी?

मुझे तो अपनी ड्यूटी निभानी है, कभी देर रात तक आना तो कभी भोर से पहले ही सरहद पर तैनात। तुम जिद न करो, जरा बात को समझो।'' डिप्टी कमांडेंट अमर ने उसे गले से लगाकर अपनी बाँहों का हार पहनाते हुए कहा, ''मैं कहाँ तुम बिन स्वयं को पूर्ण पाता हूँ, किंतु देश के प्रति मेरा धर्म, मेरा कर्म मुझे तुम्हें यहाँ छोड़ जाने को मजबूर कर देता है, मुझे जाना ही होगा।'' और वह ऊर्मि की मुसकराती आँखों को नमी दे अपनी ड्यूटी पर रवाना हो गया।

''पहुँचते ही खबर करना।'' रुँधे कंठ से बस इतना ही बोल पाई थी ऊर्मि।

सर्द रात में आसमाँ में चमकता चाँद देख उसे ऐसा महसूस हो रहा था जैसे वह उसे चिढ़ा रहा हो, चाँदनी में झिलमिल चमकती उसके माथे की बिंदिया की झिलमिलाहट जैसे हर रात धीमे-धीमे धुँधली पड़ने लगी थी।

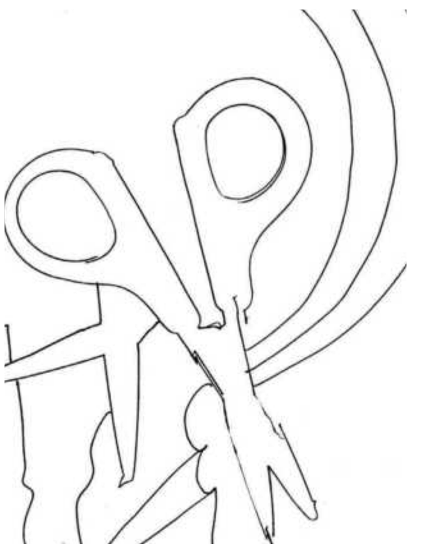

रोज दुपहरी एक खत अपने प्रियतम के नाम लिख पोस्ट बॉक्स में डाल देती, कल तक रंगीन तितलियों को पकड़ लेने की चाहतवाली ऊर्मि के मन के भाव अब बेरंग होने लगे थे।

'चिट्ठी' डाकिया की आवाज सुन वह घर की चौखट की तरफ दौड़ पड़ी और डाकिया के हाथ से अपना खत ले लिया, उसपर लिखा अपना नाम देख उसकी आँखों में चमक खिल उठी थी। लिफाफे को कोने से फाड़कर खत पढ़ा और सीने से लगा लिया, जैसे यह मात्र एक खत नहीं, उसका अमर स्वयं उसके पास हो।

एक फौजी की अर्द्धांगिनी के लिए शायद ही इससे ज्यादा खुशी का और कोई पल होता हो। अपने पति के खत से सुंदर न कोई तोहफा, न ही उसमें लिखे शब्दों से सुंदर कोई गीत या गजल। और इस बार तो डाकिया एक बहुत सुंदर पैगाम लेकर आया था। अमर ने खत में लिखा था कि वह जल्दी ही आ रहा है और ऊर्मि को अपने साथ कश्मीर ले जाएगा। उसने वहाँ ऊर्मि के लिए रहने की व्यवस्था कर ली है।

कुछ महीनों बाद ऊर्मि कश्मीर की वादियों में अपने वरदीधारी सिपाही की बाँहों में बाँहें डाले बर्फीली घाटियों का आनंद ले रही थी। कभी-कभार जब सरहद पर गोलीबारी होती तो गोलियों की धाँय-धाँय से उसका दिल दहल जाता और डिप्टी कमांडेंट अमर ऑन ड्यूटी होता तो सारी-सारी रात उसकी राह देखा करती। जब कभी जरा देर होती तो गोली का एक खटका भी उसे डरा देता, किसी अनहोनी का खौफ उसे खाए जाता; किंतु अगले ही पल वह सोचती, आखिर एक फौजी की पत्नी हूँ, ऐसे डरूँगी तो कैसे काम चलेगा? और फिर हिम्मत कर बर्फीली चोटियों पर पड़ती भोर की स्वर्णिम किरणों का नजारा देखने लगती।

''देखो अमर, बाबा का खत आया है। मेरे मामा के लड़के का ब्याह तय हो गया है। मैं अगले महीने जाऊँगी, तुम्हें भी छुट्टी मिल सके तो बात करो न, सिर्फ हफ्ते भर की ही तो बात है।'' बाबा का खत अमर को दिखाते हुए ऊर्मि ने अमर के काँधे पर सर रख दिया। ''हाँ, कोशिश करता हूँ ऊर्मि, इस बहाने मैं भी सभी रिश्तेदारों से मिल लूँगा।''

□

शहनाई की मधुर आवाज बरामदे में गूँज रही थी, दूल्हा घोड़ी चढ़ने की तैयारी में और ऊर्मि अपने केसरिया लहँगे-ओढ़नी में, सिंदूरी माँग व रंग-बिरंगी चूड़ियाँ हमेशा की तरह खिलखिलाती-मुसकराती अपने प्रियतम की राह देख रही थी। अमर ने उसे विवाह के एक सप्ताह पहले ही भेज दिया और स्वयं घुड़चढ़ी के दिन आने का वादा किया था। तभी मामा के घर के फोन की घंटी बजी, दूसरी तरफ की बात सुन उसके मामा उसे गले से लगा फफककर रो पड़े। अपने मामा की आँखों से आँसुओं की बरसात देख ऊर्मि को समझते देर न लगी कि जहाँ बारात रवानगी की तैयारी थी, वहाँ बरामदे में तिरंगे में लिपटा कफन आया, पल भर को ऊर्मि निढाल सी निवार की खटिया पर बैठ गई, फिर भागकर अमर के कफन से जा लिपटी। उसकी रुलाई रोके न रुकती थी, बाबा ने जैसे-तैसे उसे वहाँ से उठाया, सीने से लगाया और बोले, ''बेटी, शहीदों के लिए रोते नहीं, उन्हें सम्मानपूर्वक रुखसत करते हैं।''

''हाँ बाबा!'' उसने अपने आँसू पोंछे और शहीद डिप्टी कमांडेंट अमर को अंतिम विदा देने के लिए तैयार हो गई।

बेटी के दु:ख से बाबा स्वयं टूट रहे थे, किंतु ऊर्मि ने जाहिर न होने दिया कि वह टूट गई है, फौजी की पत्नी का फर्ज वह बखूबी जानती थी। अंतिम विदा के बाद साधारण रूप से विवाह संपन्न हुआ, सभी रिश्तेदार ऊर्मि की हिम्मत की दाद दे रहे थे। उसने अपने भीतर उमड़े सैलाब को रोके रखा, ताकि विवाह में आए किसी भी रिश्तेदार को बुरा महसूस न हो।

जब डिप्टी कमांडेंट अमर का बक्सा आया, ऊर्मि ने सबकुछ सहेजकर रख लिया, उनकी तसवीर अपने कमरे में लगा ली।

अगले दिन माँ ने उसपर एक फूलमाला चढ़ा दी।

'यह क्या माँ, फूलमाला क्यों? मेरा अमर शहीद हुआ है, मरा नहीं, वह अमर है माँ!'' उसने भौंहें चढ़ाते हुए कहा। उसने फूलमाला को तसवीर से उसी समय हटा दिया। रोज सवेरे पहले की तरह ही शृंगार करती। कस्बे की महिलाएँ उसे सुहागन सी सजी-धजी देखतीं तो तरह-तरह की बातें बनातीं।

कुछ महिलाओं ने तो उसकी माँ के मुँह पर ताना भी दे दिया,

"आखिर कब समझेगी तुम्हारी बेटी, अब वह विधवा है, ये सज-धज और शृंगार किसलिए?"

ऊर्मि की माँ ने उसे बहुत समझाया, "बेटी, लोक-लाज भी तो देखनी पड़ती है, ये चूड़ियाँ सुहाग की निशानी होती हैं, इन्हें उतार क्यों नहीं देती, अमर तो अब रहा नहीं।"

"नहीं माँ, ये कैसी बातें कर रही हो तुम, अमर मेरे लिए जिंदा है, अमर है, मैं ये चूड़ियाँ बिल्कुल नहीं उतारूँगी, मुझे ये रंगीन चूड़ियाँ बहुत पसंद हैं माँ, मुझसे मेरे रंग न छीनो।"

ऊर्मि के बाबा से उसका दु:ख देखा न जाता, सो बोले, "ऊर्मि की माँ, उसके जीवन में बचा ही क्या है, जो तुम छीन लेना चाहती हो, यदि वह रंग-बिरंगी चूड़ियों, और सज-धज में खुश है तो करने दो उसे यह सब। ठीक ही तो कहती है, शहीद अमर होते हैं तो फिर वह विधवा कैसे हुई? मैं अपनी बेटी के लिए दुनिया के ताने सह लूँगा, किंतु उसे उदास न होने दूँगा। यदि अमर सरहद पर हुई बमबारी में मारा गया तो उसमें ऊर्मि का भला क्या दोष है?"

कस्बे के लोग ताने मारते, किंतु ऊर्मि के माँ व बाबा ने हिम्मत न हारी और विनम्रता पूर्ण व्यवहार कायम रखा।

छब्बीस जनवरी को होनेवाले गणतंत्र दिवस के कार्यक्रम में ऊर्मि को निमंत्रण-पत्र मिला। उसके पति डिप्टी कमांडेंट अमर को पुलिस पदक सम्मान से सम्मानित किया जाना था। वह अपने माँ-बाबा के साथ दिल्ली पहुँची, वहाँ उनके व अन्य शहीदों के परिवारों के ठहरने के लिए खास व्यवस्था की गई थी। अगले दिन जब मुँह अँधेरे वह नहा-धोकर तैयार होने लगी, उसकी माँ ने उसे एक पैकेट लाकर दिया और कहा, "ऊर्मि, तुम्हारे लिए बॉर्डर सिक्योरिटी फोर्स की तरफ से यह पैकेट आया है और तुम्हें ये कपड़े पहनकर तैयार होना है।"

ऊर्मि ने जैसे ही वह पैकेट खोला, उसकी आँखों से अश्रुधारा बह निकली। उसकी माँ ने उसे अपनी छाती से लगा लिया। वह जानती थी कि उसकी ऊर्मि यह दु:ख सहन नहीं कर पाएगी। ऊर्मि अपनी माँ की गोद में निढाल सी पड़ी सिसकियाँ भर रही थी, आज उसकी हिम्मत टूट गई, बाबा ने अपने कलेजे के टुकड़े को इतना मजबूर पहले कभी न देखा था, सो पैकेट उठाकर देखा।

उसमें सफेद रंग की साड़ी व दूधिया शॉल थी, जो ऊर्मि के पहनने के लिए भेजी गई थी। सरहद पर शहीद कहलाने वाले जवानों के कफन को तो तिरंगे से ढका जाता है किंतु उनकी पत्नियों को सफेद रंग दे उनकी जिंदगी से रंग छीन लिये जाते हैं। बाबा को समझ आ गया था, शायद हमारा समाज उनकी पत्नियों को एक विधवा का ही दर्जा देता है।

'शहीद अमर होते हैं।' इस सफेद साड़ी ने इस कथन को झुठला दिया। ऊर्मि ने आज फिर हिम्मत करके वह सफेद साड़ी पहन ली और अपने पति का पदक लेने समारोह में गई, लेकिन आज उसने रंगों से नाता तोड़ लिया था, कटु सत्य को स्वीकार कर लिया था। (सा॰अ॰)

एफ-२०६, किब्रोस बेलवेडर, मॉडल स्कूल रोड
कुमारसामी नगर, शोलिंगनाल्लौर
चैन्नई-६००११९
दूरभाष : ९५९७१७२४४४

कविता

पानी की पहचान

• राधाकांत भारती

कभी-कभी विकराल रूप
धारण कर लेता है पानी,
रौद्र हो, गर्जन-तर्जन और
बाढ़ प्रलयंकारी।

विभिन्न नामों से,
अनेक रूपों में विराजमान है पानी,
यहाँ, वहाँ सर्वत्र धरातल,
आकाश और पाताल में।

समुद्र का पानी
देता है पनाह
तमाम जीव-जंतुओं को
छिपाए मोती-मूँगा

नदी का पानी
सींचता है खेतों बाग-बगीचों को
और बुझाता रहता है प्यास
प्राणियों की।

तालाब का पानी
पालता है मछली
खिलाता है कमल-पुष्प।

नलकूप का पानी
सिखाता है सामंजस्य,
परिस्थितियों के अनुरूप ढलना
और फिर चल देना।

तापमान के अनुसार
अपने को तब्दील करता
बदलकर भाप और बर्फ
फिर बादल बन, बरसता पानी।

पानी का मोल अनमोल है
धरती पर।
किंतु कभी-न-कभी
भयभीत कर देता है,
जन-जीवन को
पानी की कमी।

जन-जीवन के
इस संबल को आदर दो
बचाओ पानी की निर्मलता
मानव कल्याण के लिए
सुरक्षित रखो
मत प्रदूषित होने दो
अमृत तुल्य पानी को। (सा॰अ॰)

५६, नागिन लोक, पीरागढ़ी
नई दिल्ली-११००८७
दूरभाष : ०९९११९८६६७७

गहन अनुभवों की कथा लिख रहा हूँ

● विनय मिश्र

जाने-माने रचनाकार। 'सच और है', 'बनारस की हिंदी गजल' संपादित (गजल-संग्रह); 'समय की आँख नम है' (गीत-संग्रह); 'सूरज तो अपने हिसाब से निकलेगा' (कविता-संग्रह); 'इस पानी में आग' (दोहा-संग्रह); 'तेरा होना तलाशूँ' (गजल-संग्रह); 'पलाश वन दहकते हैं' स्व. मंजु अरुण की रचनावली का संपादन। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर (राज.) के हिंदी विभाग में कार्यरत।

: एक :

बाँटनेवाली कोई जब तक हवा मौजूद है,
हम गले मिलते रहें पर फासला मौजूद है।

और कुछ ज्यादा सँभलकर और कुछ होकर सजग,
भीड़ में जो चल सको तो रास्ता मौजूद है।

इस उदासी के समय को भी बताएगा बहार,
झूठ का बाजार लेकर मीडिया मौजूद है।

आज सड़कों पर है वो मंजर जो कत्लेआम का,
जेहन में तेरे कहीं उसका सिरा मौजूद है।

आँसुओं का इक समंदर चुप्पियों का एक शोर,
इस अकेले में गजब की संपदा मौजूद है।

मुद्दतों से सोचता हूँ चंद सपनों के लिए,
कम नहीं है आदमी लड़ता हुआ मौजूद है।

बर्फ होकर रह गई है जिंदगी अपनी मगर,
अब भी पानी आँख में कुछ गुनगुना मौजूद है।

: दो :

सबकुछ बिखर गया है सँवारा नहीं गया,
अपना ही बोझ सिर से उतारा नहीं गया।

उस घर से कितनी यादें जुड़ी हैं मैं क्या कहूँ,
जिस घर में लौटकर मैं दुबारा नहीं गया।

कुछ भीगे पल रहे हैं हमेशा हमारे साथ
मौसम हमारी आँखों का खारा नहीं गया।

माना बहुत है सस्ता यह सौदा जमीर का,
जीते जी मुझसे मौत से हारा नहीं गया।

गरमाहटें नहीं तो भी दिल के अलाव से,
बुझती उदासियों का सहारा नहीं गया।

अपने दु:खों की राख से जनमा हूँ बार-बार,
लपटों के हाथ मैं कभी मारा नहीं गया।

होने लगी जो भोर तो गजलों ने दी चहक,
हालात से मैं करके किनारा नहीं गया।

: तीन :

गहन अनुभवों की कथा लिख रह हूँ,
मेरे दिल ने जैसा कहा लिख रहा हूँ।

वही प्यास दिल में लिये हूँ अभी तक,
तेरे साथ जैसा लगा लिख रहा हूँ।

जिसे ये पता भी नहीं वो किधर है,
उसी वेदना की दिशा लिख रहा हूँ।

यह दुनिया है वीरानियों की जो मुझमें,
यहाँ कैसे उजड़ा-बसा लिख रहा हूँ।

कहीं तीव्र है तो कहीं स्वर है मद्धम,
जो गाती है हरदम हवा लिख रहा हूँ।

मैं काँटों में कितना रहा क्यों बताऊँ,
मैं खुशबू से कितना भरा लिख रहा हूँ।

मैं अपने बिखरने को पढ़ते हुए अब,
सँवरने को जो कुछ मिला लिख रहा हूँ।

: चार :

उस हवा के साथ घर की भी हवा बदली,
वक्त बदला तो सभी की भूमिका बदली।

कागजों पर ही मिला स्वाधीनता का सुख,
सच कहूँ तो बस गुलामी की सजा बदली।

बात छोटी थी तो कैसे प्रश्न करते ही,
एक पल में बात की सारी दिशा बदली।

कुरसियाँ सिर पर, प्रजा उतरी है आँखों से,
राजमद में सेवकों की चेतना बदली।

पास थी जो धूप, दो पल के लिए देखा,
कितनी उजली थी मगर वो दूर जा बदली।

फूल अपने आँसुओं के देवता तुम हो,
तुम बताओ कब हमारी आस्था बदली।

नींद में शामिल नहीं था रंग सूरज का,
आँख खुलते ही हमारी प्रार्थना बदली।

: पाँच :

दिन हमारे और दूभर हो गए,
आप जो अपने मुकद्दर हो गए।

राम की भी शक्ति का है इम्तिहान,
इतने रावण के यहाँ सर हो गए।

जिस जगह पर बूँद भर की प्यास थी,
अब वहाँ कितने समंदर हो गए।

अक्ल उनकी भी ठिकाने आ गई,
हम जहाँ आपे से बाहर हो गए।

चुप ही रहने में भला है सोचकर,
लोग सारे घर के अंदर हो गए।

जो नहीं होना था आखिर क्यों हुआ,
बद से जो हालात बदतर हो गए।

खामुशी की इक नजर ऐसी पड़ी,
बोलने वाले निरुत्तर हो गए।

सा अ

बी-१६१, हसन खाँ मेवाती नगर
अलवर-३०१००१ (राज.)
दूरभाष : ०९४१४८१००८३

मिर्जा की दृष्टि

मूल : **जोसेफ एडीसन**
अनुवाद : **भद्रसैन पुरी**

जब मैं ग्रांड कायरा में था, तब वहाँ मैंने कई पूर्वदेशीय हस्तलिपियाँ इकट्ठी की थीं, जो अब भी मेरे पास हैं। उनमें से मुझे एक मिली, जिसका शीर्षक था—'मिर्जा की दृष्टि।' उसको मैंने प्रसन्नता से पढ़ा। मैं उसे पाठकों को देना चाहता हूँ। मेरे पास उनके मनोविनोद के लिए और कुछ नहीं है। मैं पहली दृष्टि से आरंभ करूँगा, जिसका अक्षरश: अनुवाद मैंने किया है। वो निम्नलिखित है—

अपने पूर्वजों के रीति-रिवाज के अनुसार, चाँद की पंचमीवाले दिन मैंने सदा अपने आपको पवित्र रखा। नहा-धोकर और प्रात:कालीन नमाज पढ़कर मैं बगदाद की ऊँची पहाड़ियों पर चढ़ जाता था, ताकि बाकी का दिन ध्यान और प्रार्थना में व्यतीत कर सकूँ। जब मैं पहाड़ी के शिखर पर हवाखोरी कर रहा था, मैं सहसा मानव जीवन के झूठे अहंकार की गहरी सोच में डूब गया और एक विचार से दूसरे पर जाते हुए मैंने कहा, ''निश्चय ही मनुष्य एक छाया है और जीवन एक स्वप्न।'' जब मैं ऐसा विचार कर रहा था तो मैंने अपनी नजर चट्टान की चोटी पर डाली, जो मुझसे दूर नहीं थी। वहाँ मैंने एक चरवाहे को हाथ में छोटा सा साज थामे देखा। ज्यों ही मैंने उसे देखा, उसने उसे होंठों से लगाया और बजाना शुरू कर दिया। उसकी ध्वनि अत्यंत मधुर थी और भिन्न-भिन्न स्वरों से बनी थी, कुल मिलाकर वह ऐसी थी, जिसको मैंने कभी नहीं सुना था। उसने मेरे मन में वे दिव्य स्वर भर दिए, जो भले व्यक्तियों की दिवंगत आत्माओं के लिए बजाए जाते हैं। वह पहले-पहल स्वर्ग में पहुँचते हैं, ताकि वे अपने पुराने दु:खों के प्रभाव को नष्ट कर सकें और अपने आपको उस स्थान के आनंद के लिए योग्य बना सकें। मेरा हृदय गुप्त आनंद में पिघल गया।

मुझे बताया गया कि मेरे सामनेवाली चट्टान किसी सुदैव का आश्रय स्थान था और कई लोगों का संगीत से मनोविनोद किया जा चुका था—जो इसके पास से गुजरे थे; परंतु यह कभी नहीं सुना था कि संगीतकार कभी दिखाई दिया हो। जब उसके बजाए हुए स्वर मेरे विचारों को उभार चुके और एक हैरान आदमी की तरह मैंने उसकी ओर देखा, तो उसने मुझे पुकारा और अपना हाथ हिलाकर उस जगह पर आने को कहा, जहाँ वह बैठा हुआ था। मैं आदरपूर्वक उसके निकट गया, जो ऐसे विशिष्ट स्वभाववाले व्यक्ति के योग्य था; और क्योंकि उसके लुभावने स्वरों को सुनकर मेरा हृदय मोहित हो गया था। मैं उसके पैरों पर गिर पड़ा और रोने लगा। दया और सुशीलता की दृष्टि के साथ सुदैव मुझपर हँसा, जिसने उसे मेरी कल्पना के साथ परिचित करवा दिया और मेरी सारी शंका तथा भय, जिनके साथ मैं उसके निकट गया था, दूर हो गए। उसने मुझे भूमि से उठाया और मेरा हाथ पकड़ते हुए कहा, ''मिर्जा, मैंने तुम्हें तुम्हारे स्वगत भाषणों में सुना है; मेरे पीछे आओ।''

फिर वह मुझे चट्टान की सबसे ऊँचे स्थान पर ले गया और मुझे उसपर बैठाते हुए बोला, ''अपनी आँखें पूरब की ओर करो और मुझे बताओ कि तुम क्या देखते हो?''

''मैं एक बड़ी घाटी देखता हूँ।'' मैंने उत्तर दिया, ''और पानी का विचित्र ज्वार-भाटा उसमें उठ-गिर रहा है।''

''जो घाटी तुम देख रहे हो, वह दु:ख की घाटी है, '' उसने कहा, ''और पानी का ज्वार-भाटा जो देख रहे हो, यह अनंत काल के ज्वार-भाटे का भाग है।''

''इसका क्या कारण है,'' मैंने पूछा, ''कि ज्वार-भाटा, जो मैं देख रहा हूँ, वह एक सिरे पर गहरी धुंध से उठ रहा है और दूसरे सिरे पर गहरी धुंध में लुप्त हो जाता है?''

''जो तुम देखते हो,'' उसने कहा, ''वह अनंतकाल का भाग है, जिसको समय कहते हैं और संसार के आदि-अंत तक इसको सूर्य से नापा जाता है। अब परीक्षण करो, यह सागर, जो दोनों सिरों पर अँधेरे से घिरा है, और मुझे बताओ कि तुम इसमें क्या पाते हो?''

''मैं एक सेतु देखता हूँ,'' मैंने कहा, ''जो ज्वार-भाटे के बीच में खड़ा है।''

''वह सेतु जो तुम देखते हो,'' उसने कहा, ''यह मानव जीवन है, इसपर ध्यान से विचार करो।'' इसके और ध्यानपूर्वक सर्वेक्षण के बाद मैंने मालूम किया कि इसमें सत्तर संपूर्ण मेहराबें थीं और कई टूटी हुई भी थीं, जिनको यदि संपूर्ण मेहराबों में जोड़ दिया जाए तो इनकी संख्या सौ बनती थी। जब मैं मेहराबों को गिन रहा था, सुदैव ने मुझे बताया,''पहले इस सेतु की एक हजार मेहराबें थीं, परंतु एक भयानक बाढ़ बाकी मेहराबों को बहाकर ले गई और सेतु को घातक स्थिति में छोड़ गई, जैसा कि मैं देख रहा था।''

''आगे बताओ,'' उसने कहा, ''तुमने सेतु के ऊपर क्या देखा है?''

''मैंने लोगों की भीड़ को उसके ऊपर जाते देखा है,'' मैंने उत्तर दिया, ''और एक काले बादल को इसके दोनों छोरों पर मँडराते हुए देखा है।'' मैंने देखा कि कई यात्री सेतु से गिरकर ज्वार-भाटे में उसके नीचे से बह गए। आगे परीक्षण के बाद मैंने देखा कि सेतु में छिपे अनंत कूट द्वार थे, जिनपर ज्यों ही यात्री पैर रखते तो उसके बीच में से ज्वार-भाटे

में गिर जाते थे और तुरंत लुप्त हो जाते थे। ये गुप्त संकट छिद्र अस्पष्ट रूप से सेतु के प्रवेश द्वार पर बनाए गए थे, ताकि लोगों की भीड़ बादल से जल्दी रास्ता न बना सके, परंतु उनमें से ज्यादातर नीचे गिर जाते थे। वे मध्य में छिछले होते जाते थे, परंतु वे बढ़ते जाते थे और संपूर्ण मेहराबों की सीमा पर जमा हो जाते थे।

कुछ व्यक्ति वास्तव में ऐसे थे, परंतु उनकी संख्या न्यून थी, जो टूटी हुई मेहराबों पर लंगड़ाकर चलना जारी रखते थे, परंतु थककर अथवा लंबी यात्रा के कारण टूटकर वे एक-दूसरे के बाद गिर जाते थे।

मैंने कुछ समय इस अद्‍भुत ढाँचे के बारे में और उन वस्तुओं के बारे में, जो इसने प्रस्तुत कीं, सोचकर व्यतीत किया। विनोद और प्रसन्नता के बीच कई आकस्मिक शिथिलताओं को और अपने बचाव के लिए उनका अपने पास खड़ी हर वस्तु को पकड़ना देखकर मेरा दिल उदासी से भर गया। कुछ ध्यानमग्न होकर आकाश की ओर देख रहे थे, उन्होंने विचार के बीच ठोकर खाई और दृष्टि से ओझल हो गए। झुंड-के-झुंड उन बुलबुलों की खोज में व्यस्त थे, जो उनकी आँखों में चमकते थे और उनके सामने नाचते थे; परंतु जब उन्होंने सोचा कि वे प्राय: उनकी पकड़ से बाहर थे तो उनका नाचना विफल हो गया और वे नीचे गिरकर डूब गए। चीजों की इस गड़बड़ी में मैंने कुछ व्यक्तियों के हाथों में खड्‍गों को और कुछ को गोलियों के बक्सों को थामे देखा। कई आदमी कूट द्वारों पर धकेलते हुए सेतु पर इधर-उधर भाग रहे थे; कूट द्वार उनके रास्ते में पड़ते प्रतीत नहीं होते थे और वे उनसे बच सकते थे, यदि उन्हें धकेला न जाता।

मुझे इस उदासी के आलोक में मग्न देखकर सुदैव ने मुझे बताया कि इसपर मैं काफी चिंतन कर चुका था। ''सेतु की ओर से अपनी आँखें हटा लो,'' उसने कहा, ''और मुझे बताओ कि तुम अब भी कोई चीज देखते हो, जिसके बारे में विचार करते हो?'' ऊपर देखते हुए मैंने पूछा, ''इसका क्या अर्थ है? वे पक्षियों की महान् उड़ानें हैं, जो सेतु के ऊपर सदा उड़ते रहते हैं और समय-समय पर उसपर आकर बैठ जाते हैं। मैं गिद्धों, काल्पनिक दैत्य-पक्षियों, भूखे कौओं, समुद्री चिड़ियों और दूसरे पंखोंवाले पक्षियों में छोटे पंखोंवाले बच्चों को देखता हूँ, जो बड़ी संख्या में आकर मध्यवर्ती मेहराब पर अपने डंडों पर बैठते हैं।''

''वह,'' सुदैव ने कहा, ''ईर्ष्या, लोभ, मूढ़ विश्वास, निराशा और प्रेम हैं, जो मानव जीवन को चिंता और लालसा की तरह कष्ट देते हैं।''

यहाँ मैंने गहरी ठंडी आह भरी—''काश!'' मैंने कहा, ''मनुष्य को व्यर्थ ही बनाया होता! उसे दु:ख और विनाश कैसे दिए गए! जीवन भर यातना और मृत्यु द्वारा निगलना।''

मेरे प्रति दया से प्रेरित होकर सुदैव ने मुझे सर्वेक्षण को त्यागने के लिए व्यग्रता से आदेश दिया। ''अब अधिक मत देखो,'' उसने कहा, ''आदमी के अनंत की ओर जाने में उसके अस्तित्व की पहली स्थिति को मत देखो, परंतु उस घनी धुंध को देखो, जिसके कारण ज्वार-भाटे में मरनेवालों की कई पीढ़ियाँ पड़ी हैं, जो उसमें गिरती रही हैं।''

मैंने अपनी दृष्टि को मोड़ा, जैसा आदेश दिया गया था और (अच्छे सुदैव ने अलौकिक शिक्त से इसको पुष्ट कर दिया था अथवा नहीं या फिर धुंध के भाग को हटा दिया, जो पहले आँखों के छेदन के लिए बहुत घनी थी) मैंने दूर सिरे पर उस घाटी को देखा, जो बड़े सागर तक फैली हुई थी, जिसके बीचोबीच वज्रमय चट्‍टान स्थित थी और उसको दो बराबर भागों में बाँटती थी। बादल अब भी उसके आधे से ज्यादा हिस्से पर मँडरा रहे थे। फलस्वरूप मैं उसमें कुछ भी देख नहीं सकता था, परंतु दूसरे हिस्से में एक बड़ा सागर मेरे सामने प्रकट हुआ, जिसमें असंख्य टापू थे, जो फलों एवं फूलों से लदे थे और छोटे-छोटे चमकते समुद्रों से जुड़े हुए थे। मैं लोगों को शानदार कपड़े पहने, अपने सिरों पर फूलमालाएँ बाँधे वृक्षों से गुजरते हुए, फौआरों के पास लेटे हुए या फूलों की सेजों पर आराम करते हुए देख सकता था; पक्षियों के चहचहाने की व्याकुलता को सुन सकता था और देख सकता था जलप्रपातों को तथा संगीत के साजों को! इस दृश्य को देखकर मेरा हृदय प्रफुल्लित हो गया। मैंने गरुड़ के पंखों की याचना की, ताकि उड़कर उन सुंदर स्थानों पर जा सकूँ; पर सुदैव ने मुझे बताया कि वहाँ जाने के लिए कोई रास्ता नहीं है, सिवा मृत्यु के द्वार के, जिसको मैं हर क्षण सेतु पर खुलते देखता था। ''वे टापू,'' उसने कहा, ''जो तुम्हारे सामने ताजा और हरे नजर आते हैं तथा जिनसे सारा सागर चिह्नित प्रतीत होता है, और जहाँ तक तुम उन्हें देख सकते हो, उनकी संख्या सागरतट पर पड़ी रेत के कणों से भी अधिक है। जिन टापुओं को तुम देख रहे हो, उनके पीछे जहाँ तुम्हारी दृष्टि नहीं जाती अथवा जहाँ की कल्पना भी तुम नहीं कर सकते, हजारों टापू हैं। ये मरे हुए अच्छे आदमियों के भवन हैं, जो प्रवीणता प्राप्त उनके गुणों की दशा और श्रेणी के अनुसार उनको इन कई टापुओं में बाँटे गए हैं—टापू भिन्न-भिन्न प्रकार की खुशियों और आनंद से भरपूर हैं, जो उन लोगों की अन्यान्य रुचियों और प्रवीणता के योग्य हैं, जो यहाँ बसाए गए हैं। वहाँ रहनेवालों के अनुसार प्रत्येक टापू स्वर्ग है। ओ मिर्जा! क्या यह निवासस्थान स्पर्धा के योग्य नहीं है? क्या यह इनाम प्राप्त करने के लिए अवसरों को जुटाना, तुम्हें जीवन में दु:खदायी प्रतीत होता है? क्या मृत्यु से डरना होगा, जो तुम्हें ऐसे प्रसन्न अस्तित्व में ले जाती है? मत सोचो कि आदमी को व्यर्थ बनाया गया, जिसके लिए ऐसा अनंत सुरक्षित है।''

मैंने अवर्णनीय प्रसन्नता के साथ उन टापुओं को घूरा। अंत में मैंने कहा, ''मैं प्रार्थना करता हूँ कि मुझे वे भेद बताओ जो उन काले बादलों, में छिपे हुए हैं, जिन्होंने वज्रमयी चट्‍टान के दूसरी ओर सागर को ढाँप रखा है।''

सुदैव के उत्तर न देने पर मैंने उससे पुन: पूछा, परंतु मैंने देखा कि वह मुझे छोड़कर जा चुका था। मैं फिर उस दृष्टि की ओर मुड़ा, जिसके विषय में मैं सोचता रहा था, परंतु गिर-उठ रहे ज्वार-भाटे, मेहराबोंवाले सेतु और रमणीक टापुओं के अतिरिक्त मैंने कुछ नहीं देखा—हाँ, बगदाद की खोखली घाटी मेरे सामने थी, जिसके एक तरफ बैल, बकरियाँ और ऊँट चर रहे थे। सा अ

विश्वप्रसिद्ध जंतुविज्ञानी डॉ. रामेश बेदी : कुछ संस्मरण

● प्रेमपाल शर्मा

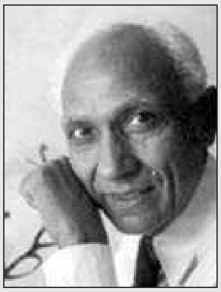

आयुर्वेदाचार्य, विश्वप्रसिद्ध जंतुविज्ञानी, लेखक, प्रकृति के कुशल फोटोग्राफर श्री रामेश बेदी का जन्म २० जून, १९१५ को कालाबाग, उ.-प. प्रांत (अब पाकिस्तान) में हुआ। उनकी शिक्षा-दीक्षा गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार में एक अंतेवासी के रूप में हुई। जड़ी-बूटियों की खोज में बेदी साहब ने हिमालय तथा भूटान के हरे-भरे पहाड़ों और हिमालय पार लद्दाख के उजाड़ पर्वतीय मरुस्थली की अपनी खोज-यात्राओं में जड़ी-बूटियों के दस हजार से अधिक नमूने (स्पेसिमैन) संग्रह किए, जो राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय महत्त्व के हर्बेरियमों में सुरक्षित हैं। आयुर्वेद, वन्य जीव, बाल-साहित्य, यात्रा-वृत्तांत विषयक अस्सी से अधिक पुस्तकें, जिनमें साँपों का संसार, प्रचंड धावक चीता, चरक संहिता के जीव-जंतु, आदमखोरों के बीच, गुणकारी फल, जंगल के उपयोगी वृक्ष, जंगल की जड़ी-बूटियाँ, हमारी पुष्पश्री आदि बेहद चर्चित रहीं। उनका ड्रीम प्रोजेक्ट था 'बेदी वनस्पति कोश' (सचित्र छह खंड), जिस पर उन्होंने अपनी सारी जमा पूँजी लगा दी। उनके लेख अंग्रेजी, रूसी, जर्मन, जापानी, इतालवी, नेपाली, पुर्तगाली के साथ-साथ कन्नड़, बँगला, उड़िया, पंजाबी, मराठी, गुजराती आदि भाषाओं में अनूदित हुए। अनुसंधान कार्य के लिए उन्होंने ब्रिटेन, ब्राजील, कनाडा, भूटान, श्रीलंका आदि देशों की यात्राएँ कीं। उनकी कई पुस्तकें सरकारी संस्थानों द्वारा पुरस्कृत हैं। उन्हें अनेक विशिष्ट पुरस्कार मिले।

संस्मरण भी कम मधुर नहीं होते हैं। बात बहुत पुरानी भी नहीं है, वर्ष कौन सा था, यह मैं निश्चित तौर पर नहीं जानता। हाँ, इतना अच्छी तरह से याद है कि महीना सितंबर का था और उन दिनों गुजरात के सूरत में भयंकर रूप से प्लेग फैल गया था, उसकी दस्तक राजधानी दिल्ली तक भी सुनाई पड़ रही थी। पूरे देश में इस महामारी का भय व्याप्त था। अपने चार-छह शोध-सहायकों के साथ जंतु-विज्ञानी एवं आयुर्वेदाचार्य श्री रामेश बेदी साधनारत रहकर 'बेदी वनस्पति कोश' का प्रणयन कर रहे थे। उन्हीं दिनों मैं एक प्रूफ-रीडर के नाते उनसे जुड़ा।

प्रथम साक्षात्कार में मुझे बेदी साहब स्पष्टवादी, अत्यंत मेहनती, सिद्धांतप्रिय तथा कार्य के प्रति समर्पित व्यक्ति लगे। हल्की कद-काठी के बेदी साहब अस्सी पार कर चुके थे। मेरी शिक्षा-दीक्षा के बारे में भूपसिंह (ऑफिस असिस्टेंट) से उन्होंने पहले ही जान लिया था, तो उन्होंने गलती से स्नातकोत्तर की जगह स्नातक बता दिया था या बेदी साहब ने ही ऐसा समझ लिया था, सो उनके सामने पहुँचते ही उन्होंने पुकारा, ''आइए स्नातकजी!'' और फिर बड़े ही साफ शब्दों में कहा, ''मैंने अस्पताल से आने के बाद आपका टेस्ट तथा बायोडाटा देखा। मेरी अनुपस्थिति में मेरे सहायकों ने आपके साथ बड़ा अन्याय किया। क्या अब आप मेरे साथ काम करना चाहेंगे?'' मेरे 'हाँ' कहने पर बोले, ''आपको एक सप्ताह का ट्रायल देना होगा। और एक विशेष बात यह कि मैं यह सब कार्य अपनी जेब से कर रहा हूँ। अपनी सरकारी सेवा का सारा फंड इस कार्य में लगा दिया है। मेरी दूसरी कोई आमदनी नहीं है। मैं ज्यादा कुछ दे नहीं पाता हूँ। यहाँ तो सरस्वती यज्ञ हो रहा है। आप भी अपनी श्रम-आहुति डालिए, जो दक्षिणा बन पड़ेगी, मैं अवश्य दूँगा।'' आखिरकार यह दक्षिणा २२०० रुपया मासिक निश्चित हुई।

बेदी शोध संस्थान में कार्य का समय प्रातः नौ बजे से सायं साढ़े पाँच बजे तक था। घर-बाहर तथा संस्थान में सब बेदी साहब को 'पापाजी' कहते थे। बेदी साहब प्रूफ-शुद्धि के मामले में बड़े बेरहम थे, एक नुक्ते की गलती भी उन्हें बरदाश्त न थी। दिनभर जो प्रूफ पढ़ा जाता, रात्रि में वे उसकी बारीकी से जाँच करते थे। कार्य करते हुए मुझे अभी तीन-चार दिन ही बीते थे कि उन्होंने मुझे १०-१२ पृष्ठों की एक भूमिका पढ़ने को दी और कहा कि आप इसे शुद्ध कर दीजिए तो आपका ट्रायल आज ही पूरा हो जाएगा। मैंने इसे मनोयोगपूर्वक पढ़कर शुद्ध कर दिया। जाँचने पर बेदी साहब को कोई गलती हाथ न लगी तो वे बेहद खुश होकर बोले, ''शर्माजी, तुम हमारे काम के व्यक्ति हो, मुझे तुम्हारा काम पसंद है। पर मेरी इच्छा है कि आप कुछ दिन संस्थान को और दें।''

बेदी शोध संस्थान में उस समय चार शोध सहायक थे—इनमें भूपसिंह, जो हिंदी में एम.ए. और अमर उजाला दैनिक में काम कर चुके थे; वे बेदी साहब के सचिव के रूप में, ऑफिस असिस्टेंट, फोटो, टी. पी. सँभालना तथा बाहर के सभी काम किया करते थे। निशि त्यागी, जो संस्कृत में एम.फिल. थीं और संस्कृत ग्रंथों से संदर्भ आदि ढूँढ़कर देना उनका काम था। इमामुम रहमान, जो बॉटनी में एम.एस-सी. थे और

बेदी साहब के लिखे को री-राइट कर उसे संबंधित फाइलों में पहुँचाते थे। अरविंद शुक्ला, जो बी.ए. पास थे और प्रविष्टियों को री-राइट के साथ-साथ प्रविष्टियों की पर्चियों को अकारादि क्रम में छाँटना, फिर उन्हें पिनिंग करना तथा बाद में फाइनल चैकिंग हो जाने के बाद प्लेन कागज पर चिपकाकर पांडुलिपि तैयार करते थे।

न थकने का फॉर्मूला

बेदी साहब इस आयु में भी कठोर परिश्रम करते थे। प्रात: नौ बजे जब हम संस्थान में पहुँचते तो बेदी साहब को पहले से ही लेखन-कार्य में जुटा पाते और सायं साढ़े पाँच बजे जब छुट्टी करते तो उन्हें काम करते हुए ही छोड़कर जाते। जाने से पूर्व दिनभर के कार्य की रिपोर्टिंग होती और अगले दिन क्या करना है, यह भी तय होता। गरमी में भी हमने उन्हें कभी बार-बार पानी पीते हुए नहीं देखा, दस बजे नाश्ता जरूर करते थे, दिनभर में एक-दो बार ही बाथरूम जाते थे। इतना ही नहीं, वे रात को भी प्रूफ की जाँच और लेखन कार्य करते थे। अपने लक्ष्य के प्रति ऐसा जुनून था कि काम करते हुए वे थकते ही न थे। पहले मैं बड़ी थकान महसूस किया करता था, मैंने देखा कि अस्सी पार का यह व्यक्ति जब इतना परिश्रम करने के बाद भी नहीं थकता तो मैं क्यों थकने लगा? सच में, अब मुझे कभी थकान महसूस नहीं होती है। बेदी साहब ने एक बार बताया भी था कि थकान तो मन के सोचने से होती है। आप जब सोचते हैं कि मैं बहुत थक गया हूँ, तो शरीर भी थकान महसूस करने लगता है और शिथिल हो जाता है। किसी भी महान् कार्य को सिरे चढ़ाने के लिए कार्य के प्रति ऐसे ही जुनून की दरकार होती है, यह मैंने बेदी साहब से सीखा।

बेदी शोध संस्थान में अनुशासन बड़ा सख्त था। संस्थान में आवाज केवल पक्षियों की सुनाई देती थी। किसी की कलम अगर टेबल से नीचे गिर जाती तो बेदी साहब पूछ बैठते कि यह आवाज कैसी थी? टेबल के इर्द-गिर्द एक आलपिन या साफ कागज का एक टुकड़ा भी नजर आ जाता तो यह भी अक्षम्य अपराध होता था। सायं को कार्य करने के बाद छुट्टी के समय सबको अपनी-अपनी फाइलें, संदर्भ-ग्रंथ, शब्दकोश आदि यथास्थान रखना जरूरी होता था। प्रात: आने में विलंब होने पर पाँच मिनट का आधा घंटा कटता था। लेकिन संस्थान की छुट्टी का समय भी अटल था। साढ़े पाँच बजे वे निश्चित ही हम सबको विदा कर देते थे। समय व नियम-पालन के मामले में 'न ऊधो का लेना, न माधो का देना' नियम के पाबंद थे।

मित्रों की सलाह

अब तक मैं अपने लगभग सभी साथियों का विश्वासभाजक और सम्मान का पात्र बन गया था। एक दिन मेरे साथियों ने मुझे समझाया कि शर्माजी, आप बड़े भोले हैं। बेदी साहब को आप नहीं जानते। यहाँ पर कोई भी गलती अक्षम्य है। बेदी साहब अपनी सफाई का कोई मौका भी नहीं देते हैं। प्रूफ-रीडर विशेष रूप से उनकी हिंसा के शिकार होते हैं। उनकी सबसे ज्यादा मार प्रूफ-रीडर पर ही पड़ती है। अब तक बारह-तेरह प्रूफ-रीडर इनके हाथों अपनी नौकरी गँवा चुके हैं। अधिकतम तीन

सुपरिचित लेखक-संपादक। बुलंदशहर (उ.प्र.) के मीरपुर-जरारा गाँव में जन्म। देसी चिकित्सा लेखन में विशेष दक्षता। 'जीवनोपयोगी जड़ी-बूटियाँ', 'स्वास्थ्य के रखवाले, शाक-सब्जी-मसाले', 'सचित्र जीवनोपयोगी पेड़-पौधे', 'घर का डॉक्टर', 'स्वस्थ कैसे रहें?' तथा 'स्वदेशी चिकित्सा सार' कृतियाँ चर्चित। पत्र-पत्रिकाओं में विविध लेख प्रकाशित। श्रीनाथद्वारा (राज.) की सुप्रसिद्ध संस्था 'साहित्य मंडल' द्वारा 'संपादक-रत्न' की मानद उपाधि। संप्रति 'सवेरा न्यूज' (साप्ताहिक) का संपादन एवं आयुर्वेद पर स्वतंत्र लेखन।

महीने से ज्यादा यहाँ कोई चल नहीं पाया, लिहाजा आप पहले जहाँ काम कर रहे थे, वहाँ से रिजाइन अभी न दें। साथियों ने जो कहा, वह कोई अतिशयोक्ति नहीं थी, या मुझे डराने की नीयत से नहीं कहा था। बाद में मुझे वहाँ काम करते हुए पता चला था कि बेदी साहब चेक-बुक अपने कुरते की जेब में रखते थे। एक-दो उदाहरण ऐसे देखे कि व्यक्ति नियत समय पर अपने काम पर आया और बेदी साहब ने सुबह-ही-सुबह उसे चेक थमाकर बैरंग लौटा दिया। खैर, मेरे लिए इधर कुआँ, उधर खाईवाली बात थी, इसलिए कोई डर नहीं था। मेरी सबसे बड़ी हसरत थी कि मैं डिक्शनरी-वर्क करूँ, भले ही एक महीना ही सही!

बेदी साहब के रौद्र रूप के दर्शन

उन्हीं दिनों बेदी साहब को इलाहाबाद विश्वविद्यालय के आयुर्वेद विभाग से व्याख्यान देने के लिए निमंत्रण मिला, विषय था, 'चरक संहिता के जीव-जंतु'। यह व्याख्यान लगभग ५०० पृष्ठों का बन गया था। इसकी प्रूफ-रीडिंग का कार्य द्रुति गति से चल रहा था, समय लगभग करीब आ चुका था। फाइनल प्रूफ-रीडिंग के बाद इसे जिल्द भी कराना था। लगभग ६० पृष्ठ प्रूफ-रीडिंग के लिए बचे थे। आज इस कार्य को समाप्त करना जरूरी था। काम को नियंत्रण में लाने के लिए भूपसिंहजी ने कहा कि शर्माजी, लाओ कुछ पृष्ठ मैं पढ़ देता हूँ। इस तरह लगभग २५-३० पेज उन्होंने पढ़े और सायं तक काम पूरा हो गया। वह सब बेदी साहब को सौंपकर हम सब चले गए।

अगले दिन प्रात: जब मैं काम पर आया तो बेदी साहब ने मुझे ऊपर अपनी सीट पर न जाने देते हुए नीचे ही रोक लिया और अत्यंत क्रोध में तमतमाते हुए बोले, ''अरे शर्मा, तुम तो बड़े धोखेबाज निकले। पहले अच्छा माल दिखाकर फिर चालू माल देते हो, तुम्हें मेरे साथ धोखा नहीं करना चाहिए था।'' आदि-आदि और भी बहुत कुछ सुनाया। बेदी साहब का चेहरा तमतमा रहा था, मुँह से लार और झाग निकल रहे तथा आँखों से पानी! उनका ऐसा रौद्र रूप मैं पहली बार देख रहा था। मैं तो हतप्रभ रह गया। आश्चर्यचकित हो साहस बटोरते हुए मैं इतना ही कह पाया, ''आखिर बात क्या है, पापाजी? क्या हो गया?'' बेदी साहब गुस्से में ही बोले, ''अभी दिखाता हूँ तुम्हारी···।'' और पेंसिल से गोला लगाए हुए पृष्ठों को दिखाने लगे कि कितनी घटिया प्रूफ-रीडिंग की है। मैं लापरवाही से बोला, ''इन्हें मैंने नहीं पढ़ा है।'' बेदी साहब गुस्से

में तमतमाए, ''तब किसने पढ़े हैं? हमारे यहाँ तो तुम्हारे अलावा कोई और पढ़ता नहीं है?'' मैंने थोड़ा हँसते हुए कहा, ''भूपसिंहजी ने।''

तुरत-फुरत भूपसिंहजी को बुलाया गया। उन्होंने अपनी सफाई में कहा, ''पापाजी, वो जल्दी की वजह से ये कुछ पृष्ठ मैंने देखे हैं।'' इतना सुनते ही बेदी साहब का रौद्र रूप शांत हो गया। फिर अपने को संयत बनाते हुए सहज मुसकान के साथ बोले, ''मैं भी सोच रहा था कि शर्माजी ने उतने ही पृष्ठों में गलती क्यों छोड़ी? खैर, चलो हमसे चूक हो गई।'' पर इस अप्रत्याशित हमले से मैं तो हिल गया था। मित्रों द्वारा दी गई सलाह अभी-अभी साकार होते-होते रह गई। मैंने थोड़ा रुष्ट होते हुए कहा, ''पापाजी, मेरे साथ यह आपका पहला वाकया है। भविष्य में यदि सच्चाई को जाने बिना आपने ऐसा व्यवहार किया तो मैं आपके साथ काम नहीं कर पाऊँगा और आपको मेरे मान-सम्मान का भी ध्यान रखना होगा।'' फिर तो हम दोनों की ऐसी पटी कि उनके घरवाले भी अचंभित! और वर्षों बाद भी बेदी साहब मुझे छोड़ने के लिए तैयार न थे।

बेदी साहब ने पुराने कागज से नएवाले कागज का साइज नापा तो संतुष्ट हो गए। फिर मैंने कागज की लंबी पट्टियाँ उनकी टेबल पर रख दीं। बेदी साहब चौंककर बोले, ''इन्हें कहाँ से ले आए, शर्माजी?'' मैंने कहा, ''पापाजी, ये इन्हीं सीट में से निकली हैं। आपके लिखने के काम आएँगी।'' बेदी साहब खुशी के मारे गद्गद हो गए और आँखों की दोनों कोर में आँसू छलक आए। सबको अपने कमरे में बुलाकर बोले, ''देखो, मेरे लिखने के लिए छह महीने का कागज मिल गया। शर्माजी तो गांधीजी के प्यारेलाल हैं।

पापाजी, चूक हो गई

बेदी साहब क्षमाशील भी गजब के थे। बेदी शोध संस्थान में कोई कर्मचारी कितनी बड़ी गलती कर दे या प्रूफ-रीडर से कोई भारी भूल हो जाए तो बेदी साहब के सामने पेशी होने पर 'पापाजी, चूक हो गई' कहने भर से सबका परिमार्जन हो जाता था। सफाई देने या बहस करने का परिणाम भयंकर होता था। लिखते समय जब उनसे भी कोई भूल हो जाती और वह हमारी पकड़ में आ जाती तो हम जान-बूझकर उनसे पूछने जाते कि पापाजी, यह समझ नहीं आ रहा है, तो उसे ठीक करते हुए वे कहते कि 'अरे, मेरे से भी चूक हो गई है।' जब हममें से किसी एक से कोई भूल हो जाती थी तो वे डाँटने-डपटने या गुस्सा होने के बजाय हम सबको अपने कमरे में बुलाकर अर्धवृत्त में खड़ा कर लेते और फिर एक कहानी सुनाते थे। पहले तो कुछ पता न चलता था कि आखिर पापाजी सबका समय क्यों बरबाद कर रहे हैं। लेकिन जब कहानी का अंत होता तो यह सबके लिए एक सबक होता कि यह भूल दोबारा नहीं होनी चाहिए। वह भूल दोबारा होती भी नहीं थी। उनका कहानी सुनाने का मकसद भी यही होता था। गलतियों को जड़-मूल से मिटाने का यह उनका बहुत ही कारगर तरीका था।

बेहद मितव्ययी इनसान

बेदी साहब जैसा मितव्ययी व्यक्ति मैंने आज तक नहीं देखा। गरीबी तथा साधनहीनता में मितव्ययी होना एक बात है, लेकिन धनी और साधन-संपन्न व्यक्ति की मितव्ययता के कुछ मायने होते हैं। मितव्ययता बेदी साहब की मजबूरी नहीं, उनके संस्कार और आदत में शामिल थी। कागज के मामले में वे अत्यधिक मितव्ययी थे। मेरी जानकारी में उन्होंने छोटी-बड़ी शताधिक पुस्तकें लिखीं, लगभग एक टैंपों में आ पाएँ, इतनी उनकी हस्तलिखित फाइलें थीं, पर उन्होंने लिखने के लिए कागज कभी नहीं खरीदा। उन्होंने सिगरेट की डिब्बी के कागज, पैंफलेट्स, बच्चों की पुरानी किताब-कॉपियों के रद्दी पन्नों, छपे अखबार के एक-डेढ़ इंची खाली हाशिए, कपड़े-जूतों आदि की पैकिंग आदि को सीधा कर सब पर लिख डाला। अखबार में आनेवाले वन साइड पेपर को उन्होंने कभी बेकार नहीं जाने दिया। कागज केवल फाइनल पांडुलिपि के लिए रिम लेकर ए-फोर साइज में कटवा लिया जाता था।

इस बार कागज की जरूरत पड़ी तो मुझे ही यह काम दिया गया। वास्तव में बेदी साहब बहुत झंझट करते थे और चीजों के दाम अपने जमाने के दाम से आँकते थे। राजा गार्डन चौराहे के पास कागज की दो-चार दुकानें हुआ करती थीं। पहले कागज का सैंपल लेकर आओ, फिर बेदी साहब से सैंपल पास कराओ। इसमें भी यह नहीं तो वो वाला लेकर आओ! फाइनल होने पर कागज को बाइंडर के पास ले जाकर ए-फॉर साइज में कटवाकर लाओ। इस प्रक्रिया से गुजरने के बाद अंतत: कागज कटवाने के लिए मैं उसे साइकिल पर लादकर बसई-दारापुर में अपने एक परिचित बाइंडर के पास ले गया। तेईस-छत्तीस-सोलह साइज की ये २५० सीट, यानी आधा रिम कागज था। ए-फॉर साइज में काटने पर दोनों ओर ढाई इंची की पट्टियाँ निकल सकती थीं, मगर इसके लिए दो-तीन छुरी का दाम ज्यादा देना पड़ता।

मैंने बाइंडर से कहा कि कोई बात नहीं, आप पट्टी निकाल दो, पर कागज छोटा नहीं होना चाहिए। उसने कहा कि कागज क्योंकर छोटा होगा! और उसने कागज काट दिया, मैंने बेदी साहब द्वारा दिए गए सैंपल कागज से अच्छी तरह नाप लिया। ए-फॉर साइज का कागज तथा पट्टियाँ लेकर मैं संस्थान लौट आया। बेदी साहब ने पुराने कागज से नएवाले कागज का साइज नापा तो संतुष्ट हो गए। फिर मैंने कागज की लंबी पट्टियाँ उनकी टेबल पर रख दीं। बेदी साहब चौंककर बोले, ''इन्हें कहाँ से ले आए, शर्माजी?'' मैंने कहा, ''पापाजी, ये इन्हीं सीट में से निकली हैं। आपके लिखने के काम आएँगी।'' बेदी साहब खुशी के मारे गद्गद हो गए और आँखों की दोनों कोर में आँसू छलक आए। सबको अपने कमरे में बुलाकर बोले, ''देखो, मेरे लिखने के लिए छह महीने का कागज मिल गया। शर्माजी तो गांधीजी के प्यारेलाल हैं। इससे पहले भूपसिंह ही कागज कटवाकर लाते थे तो पूरा दिन ही लगा देते थे, पर ऐसी पट्टियाँ कभी नहीं लाए।'' वन साइड कागज के प्रति तो उनका ऐसा मोह था कि रास्ते में कोई परचे या पैंफलेट बाँट रहा होता था तो मैं उससे यह कहकर बहुत सारे परचे ले आया करता था कि मैं इन्हें आगे बाँट दूँगा, और वे सब लाकर बेदी साहब को दे दिया करता था, इससे बेदी

साहब बड़े खुश होते थे। हम दोनों जुनून की हद तक काम में रम गए थे।

फिर उन्होंने हम सबको गांधीजी के प्यारेलाल का किस्सा सुनाया कि देश-दुनिया से गांधीजी के पास बहुत से पत्र आया करते थे। गांधीजी सब पत्रों को न तो पढ़ पाते थे और न ही सबके उत्तर दे सकते थे, अत: गांधीजी की डाक का काम उनके सहायक प्यारेलालजी देखा करते थे। वे सब पत्रों को इतमीनान से पढ़ते और गांधीजी इसका क्या उत्तर देंगे, अपने अनुमान से वैसा उत्तर लिख दिया करते थे, गांधीजी के पास तो बस पत्रों पर उनके हस्ताक्षर कराने जाते थे। तब गांधीजी उन पत्रों को पढ़ते तो उनकी सराहना किए बिना न रहते कि 'भाई प्यारेलाल, कमाल है, तुमने तो मेरे मन को पढ़ लिया है, मैं भी इन पत्रों का बिल्कुल यही जबाव लिखता।' मुझे भी शर्माजी के रूप में एक प्यारेलाल मिल गया है। इन्होंने मेरे मन को पढ़ लिया है। मैं जो और जैसा चाहता हूँ, ये बिल्कुल वैसा ही करते हैं।

कुछ भी बेकार नहीं होता

बेदी साहब के लिए कोई चीज कभी बेकार नहीं होती थी। घर में कोई सामान आता तो उसके डिब्बे, लिफाफे, गत्ते आदि सब बेदी साहब के पास आ जाते। यहाँ मोटे गत्तों को काटकर सीधा कर लिया जाता और उनके फाइल-कवर बना लिए जाते। दीपावली पर पटाखों के छोटे-बड़े डिब्बों का ढेर लग जाता। उन सबको बड़े धैर्य के साथ काटकर संस्थान के कार्यों में उपयोग किया जाता। यहाँ तक डाक में जो लिफाफे आते थे, उनको बड़ी तरतीब से उलटकर पुन: चिपकाकर संस्थान की डाक भेजने में उपयोग कर लिया जाता। मेरी जानकारी में डाक के लिए नए लिफाफे उन्होंने कभी नहीं खरीदे। यह विद्या उन्होंने हम सबको भी सिखा दी थी।

एक बार ऐसा ही एक मजेदार वाकया पेश आया। बेदी साहब अपने छोटे पोते अजय बेदी को लेकर राजौरी गार्डन के पार्क में कुछ वनस्पनियों के फोटो खींचने के लिए गए। जून की भरी दोपहरी में फोटो शूट करते हुए पोता और हमारा एक चित्रकार साथी धूप से व्याकुल हो गए तो पोते ने कहा, ''पापाजी, गरमी बहुत है, आइसक्रीम खाते हैं।'' और पोता सड़क पर जाकर आइसक्रीम की कटोरियाँ ले आया। आइसक्रीम खाई गई। पोते ने आइसक्रीम खाकर प्लास्टिक की कटोरी फेंक दी और जूते से दबाकर वह उसे तोड़ना ही चाहता था कि बेदी साहब ने रोक दिया, ''रुको बेटा!'' और कटोरी उठाकर अपने कुरते की जेब में रख ली, फिर अपनी भी रख ली। इस पर पोता थोड़ा बिगड़ते हुए बोला, ''पापाजी, इस पर लिखा है कि आइसक्रीम खाने के बाद इसे क्रश कर दें। यह बेकार है।'' ''नहीं बेटा'', बेदी साहब बोले, ''कोई चीज बेकार नहीं होती। हम इन्हें धोकर इनमें आलपिन रख लेंगे।'' और ऐसा ही हुआ, वहाँ से आकर उन्हें धो-सुखाकर उनमें आलपिन भर ली गईं। वे डिब्बियाँ भी संस्थान का हिस्सा बन गईं।

सेवा के बदले सेवा

बेदी शोध संस्थान मैं साइकिल से ही आया-जाया करता था। मेरी साइकिल भी बिल्कुल खटारा थी, बस चक्के सही-सलामत थे, ब्रेक नहीं थे। संस्थान के बाहर के कामकाज, जैसे बाजार से स्टेशनरी लेने जाना, पोस्ट ऑफिस, बैंक इत्यादि के लिए रिक्शा से जाना होता था, रिक्शा का भाड़ा संस्थान के दैनिक खर्च में जोड़ा जाता था। कोठीवाला पॉश इलाका होने के कारण रिक्शा जल्दी मिलता नहीं था, काफी-काफी देर इंतजार करना पड़ता था, सो इन कामों में भूपसिंहजी मेरी साइकिल का उपयोग कर लिया करते थे। दो महीने जब दैनिक खर्च में रिक्शा-भाड़ा नहीं लिखा गया तो बेदी साहब का ध्यान इस ओर गया। उन्होंने भूपसिंहजी से पूछा, ''आजकल बाजार जाना नहीं होता क्या?''

भूपसिंह ने बताया, ''हाँ पापाजी, बाजार जाना होता है।''

''परंतु तुमने रिक्शा-भाड़ा तो लिखा ही नहीं है, फिर कैसे जाते हो?''

''जी पापाजी, वो मैं शर्माजी की साइकिल ले जाता हूँ, वे मना नहीं करते।''

''देखो भूपसिंह, शर्माजी की अपनी व्यक्तिगत साइकिल है, उसे तुम संस्थान के कामों में इस्तेमाल करते हो। यह गलत है। क्या यह तुम्हारे लिए ज्यादा सुविधाजनक है? यदि ऐसा है तो हम उनकी साइकिल मुफ्त में इस्तेमाल नहीं करेंगे। हम हर महीने शर्माजी को ५० रुपए मेंटीनेंस के रूप में देंगे।'' और फिर मेरे बहुत मना करने के बावजूद बेदी साहब ने उसी महीने से ५० रुपए मेरे वेतन में जोड़ दिए। निशुल्क कोई भी सेवा उन्हें स्वीकार्य नहीं थी।

दया-मया से परे

इस घटना से आप यह न समझ लें कि बेदी साहब बहुत दयालु थे। वे दया-मया से परे एक सिद्धांतप्रिय इनसान थे। भारत विभाजन के समय उन्होंने भी काफी परेशानियाँ झेली थीं। सरकारी सेवा में रहते हुए भी उन्हें अपना परिवार लेकर इधर-उधर भटकना पड़ा था। आजकल उनकी बड़ी पुत्रवधु यानी श्रीमान नरेश बेदी की पत्नी श्रीमती वंदना बेदीजी घर की संचालक थीं। वे बड़ी उदारमना, दयालु, दूसरों की मदद में तत्पर रहनेवाली एक कुशल मैनेजर थीं। घर का रसोइया रामू भी घरेलू सामान के लिए बाजार आता-जाता था, सो जल्दी के चक्कर में वह भी मेरी साइकिल का उपयोग कर लिया करता था। एक दिन वह बाजार गया तो रोकते-रोकते भी साइकिल किसी के ऊपर चढ़ गई, चूँकि साइकिल में ब्रेक ही नहीं थे। लोगों ने उसकी पिटाई कर दी। घर आकर गुस्से में उसने सारी घटना मैडम (वंदनाजी) को बताई। मैडम ने उसे दिलासा दी कि जो हुआ सो हुआ, मैं कुछ करती हूँ। उन्होंने भूपसिंहजी को बुलाकर कहा कि पापाजी (बेदी साहब) से कहो कि शर्माजी की साइकिल ठीक करवा दें। भूपसिंहजी ने पापाजी से कहा तो वे बोले, ''वंदना से कहो, हम शर्माजी को ५० रुपया महीना देते हैं। साइकिल ठीक रखना शर्माजी की जिम्मेदारी है। हम इसमें कुछ नहीं कर सकते।''

वंदनाजी ने सारी बात सुनी तो बोलीं कि शर्माजी क्यों ठीक कराने लगे? वे इस स्थिति में होते तो साइकिल को ऐसी रखते ही क्यों? भूपसिंह, आप ऐसा करो, अभी इसी समय इसे किसी मिस्त्री को देकर आओ, और कहना कि इसमें जो-जो खराब है, सब बदल दे, पर यह बात पापाजी को पता नहीं लगनी चाहिए। भूपसिंह उसी समय रमेश नगर

में साइकिल एक मिस्त्री के पास डाल आए। उसने इसमें चार सौ रुपए का सामान डाल दिया, जबकि इतने रुपयों में एक अच्छी हालत की साइकिल आ जाती, लेकिन साइकिल नई के माफिक हो गई। वंदनाजी ने रुपए दे दिए। पर उन्होंने कभी ऐसा भाव नहीं दिखाया कि मेरे लिए कुछ किया है। वे बहुत परोपकारी हैं। पर बेदी साहब यों ही न किसी को कुछ देते और न लेते थे। एकदम व्यावहारिक और सिद्धांत पर अटल!

बेदी साहब ने बड़े दु:खी मन से अपने आँखों की कोरों को पोंछते हुए बताया कि अभागे का रात पिंजड़ा खुला रह गया, वह लॉन में टहलने निकल आया, कड़ाके की ठंड में अपनी जान गँवा बैठा। अरे, अभी था ही कितने दिन का, बच्चा ही तो था! बेदी साहब बहुत दुखी थे। हमने देखा, लगभग दो मीटर लंबा और मेरी कलाई से भी मोटा अजगर उलटा पड़ा था, उसकी सफेद त्वचा धूप में चमक रही थी।

सरस्वती के एकनिष्ठ उपासक

बेदी साहब लगभग सोलह-सत्रह घंटे काम करते थे। सेवा-निवृत्ति के बाद जब से वे बेदी वनस्पति कोश के प्रणयन में जुटे, सरस्वती की उपासना में ही लीन रहते थे। घर में कोई हारी-बीमारी, शादी-समारोह में जाना-आना से उन्हें कोई लेना-देना नहीं था। यहाँ तक कि घर में कोई रिश्तेदार या मिलने-जुलनेवाला कोई आता था, तो उनसे दो मिनट से ज्यादा वार्त्तालाप नहीं करते थे। बल्कि बड़ी निष्ठुरता से कह दिया करते थे कि 'अच्छा तो अब आप जाएँ, मुझे बहुत काम करना है।' वे अपने कमरे या अध्ययन-कक्ष में लेखन में व्यस्त ही दिखाई पड़ते थे। हमारे साथ दिनभर काम करते, दोपहर में भोजन करने नीचे जाते और घंटाभर में वापस आ जाते। साल-दर-साल कोठी तो क्या, वे अपने कमरे से भी बाहर नहीं निकले थे। उनके बड़े बेटे नरेश बेदी उनकी बहुत फिक्र किया करते थे। जब कहीं शूटिंग नहीं हो रही होती और वे घर पर होते तो दिन में एक बार हमारे ऑफिस में पापाजी तथा हमारा हाल-चाल पूछने जरूर आया करते थे। वे बहुत कम बोलते थे, लेकिन उनका शारीरिक सौष्ठव और व्यक्तित्व बड़ा प्रभावशाली था। वन्य जीवों पर बनी उनकी अधिकतर डॉक्यूमेंटरी फिल्मों को बड़े-बड़े पुरस्कार मिले। लगे हाथ बता दूँ कि बेदी साहब के दोनों बेटे नरेश बेदी व राजेश बेदी अंतरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त फोटोग्राफर हैं तथा वाइल्ड लाइफ पर डॉक्यूमेंटरी फिल्में बनाते हैं। बी.बी.सी. का चैनल चार उनके लिए रिजर्व था। शूटिंग के चलते लंबे समय तक भारत से बाहर ही रहते थे। 'बेदी फिल्म' के नाम से राजौरी गार्डन में उनका अलग ऑफिस था।

मजदूरी समय पर देने के पाबंद

बेदी साहब ने अपने फंड आदि बचत का लाखों रुपया बेदी वनस्पति कोश के प्रणयन पर खर्च कर दिया। वे उसूल के पक्के थे। जब हम पहली तारीख को प्रात: उपस्थिति दर्ज करने के लिए रजिस्टर उठाते तो सबसे पहले उसमें हमें अपने वेतन के चेक रखे हुए मिलते। रात को चेक बनाकर वे प्रात: वहाँ रख दिया करते। जब वे बीमार होकर अस्पताल में होते तो भी वेतन के चेक ३० तारीख को ही भिजवा दिया करते। मेरे कार्य-काल में वेतन देने में कभी विलंब नहीं हुआ था। हाँ, बाद के दिनों में जब बेदी साहब के बैंक एकाउंट में पैसा खत्म हो गया तो नरेश बेदीजी ने हमारे वेतन तथा संस्थान के खर्च की जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। उनका वर्क-शिड्यूल बड़ा टाइट रहता था। उनकी व्यस्तता के चलते वेतन ५-६ तारीख को मिल पाता था, वह भी रिमाइंडर देने के बाद।

एक बार यह बात पापाजी को पता चल गई कि संस्थान के कर्मियों का वेतन समय पर नहीं मिल रहा है, तो उन्होंने कोई लिहाज न करते हुए अपने बेटे को फटकार लगाई, ''नरेश, यह मैं क्या सुन रहा हूँ? मेरे बच्चों (यानी हम कर्मचारियों) को अभी तक वेतन नहीं मिला है। तुम्हारे ऑफिस में चाहे जो चलता हो, पर मेरे संस्थान में वेतन पहली तारीख को हर हालत में मिल जाना चाहिए। मेरे बच्चे वेतन के लिए तुम्हारे पीछे नहीं घूमेंगे। तुम ऐसा नहीं कर सकते हो तो कुछ लाख रुपए मेरे अकाउंट में डाल दो। बस, मैं कोई दलील सुनना नहीं चाहता।'' उस दिन हम लोगों ने पहली बार देखा कि जिस बेटे को वे अतिशय प्यार करते थे, उस पर बेहिसाब बिगड़े।

अनन्य पशु-प्रेमी और हिमायती

बेदी साहब जड़ी-बूटी विशेषज्ञ होने के साथ-साथ जंतुप्रेमी भी कमाल के थे। इस कोठी का परिसर एक छोटा-सा चिड़ियाघर ही था। इसमें झरना था, झील थी, जिसमें रंग-बिरंगी मछलियाँ तथा कछुए किलोल करते थे। कोठी की पूरब दिशा में मैना, तोता आदि पक्षियों के प्राकृतिक आवास जैसे घोंसले थे। कोठी के एक ओर बने दड़बों में कई साँप तथा एक अजगर भी था। अजगर को लेकर घर का रसोइया रामू बड़ा दुखी रहता था, उसके भोजन के लिए उसे चूहे पकड़कर लाने पड़ते थे। पाँच-छह तरह के छोटे-बड़े कद के और अलग-अलग नस्ल के कुत्ते थे, जो भोंक-भोंककर रोज ही हमारा स्वागत करते थे। पहले तो तेंदुए का एक शावक भी पाला हुआ था। एक लोमड़ी भी थी, जिसकी शरारतों से आजिज आकर उसे बेदी फिल्म्स के ऑफिस में छोड़ दिया गया था। वहाँ भी वह अपनी हरकतों से बाज न आती थी। मौका मिलते ही वह चमड़े के बैग, जूते आदि उठा ले जाती थी। भोजनावकाश में हम अकसर मैना से बातें किया करते, हम जैसा और जो बोलते, वह वैसा ही बोलती थी।

इनके साथ-साथ कोठी के लॉन तथा चहारदीवारी के गिर्द अनेक तरह की जड़ी-बूटियों के पेड़-पौधे तथा लताएँ फैली थीं। जनवरी का महीना था, कड़ाके की ठंड तथा कुहरा पड़ रहा था। एक दिन प्रात: जब हम ऑफिस पहुँचे तो देखा, कोठी में शोक सा छाया हुआ है। पता चला कि रात अजगर चल बसा। बेदी साहब ने बड़े दु:खी मन से अपने आँखों की कोरों को पोंछते हुए बताया कि अभागे का रात पिंजड़ा खुला रह गया, वह लॉन में टहलने निकल आया, कड़ाके की ठंड में अपनी जान गँवा बैठा। अरे, अभी था ही कितने दिन का, बच्चा ही तो था! बेदी साहब बहुत दुखी थे। हमने देखा, लगभग दो मीटर लंबा और मेरी

कलाई से भी मोटा अजगर उलटा पड़ा था, उसकी सफेद त्वचा धूप में चमक रही थी।

एक और वाकया है। लगभग जनवरी समाप्ति पर थी और अभी भी ठंड जवान थी। लगभग प्रातः के दस बजे मुलायम गुनगुनी धूप डरती-डरती सी फैल रही थी। सर्दियों में बेदी साहब कोठी के आगेवाले लॉन में बैठकर लिखा करते थे। मूढ़े तथा कुरसियाँ पास पड़ी रहतीं, लेकिन एक-दो कुत्ते उनके इर्दगिर्द जरूर बैठे रहते। एक दिन मुझे तथा भूपसिंह को फाइल लेकर वहीं बुला लिया। बेदी साहब टेबल के आगे कुरसी पर बैठे थे। दो मूढ़ा पड़े थे, एक पर लंबे कानोंवाला छोटा कुत्ता लेटा हुआ था। थोड़ा हटकर बरामदे में दो कुरसियाँ रखी थीं। मैं एक मूढ़े पर बैठ गया। भूपसिंह ने 'किट-किट' कर कुत्ते को भगा दिया और मूढ़े पर बैठना ही चाहते थे कि बेदी साहब ने लिखना रोककर गरदन ऊपर उठाई और भूपसिंह को खूब लताड़ा, ''अरे, ये तुमने क्या किया, बच्चा कितने आराम से धूप सेंक रहा था, तुमने उसे क्यों भगाया? तुम दूसरी कुरसी नहीं ले सकते थे क्या? जानवरों को ऐसे सताता है कोई!'' और भी बहुत कुछ कहा। यह सब सुनकर मैं तो सन्न रह गया और भूपसिंह को काटो तो खून नहीं।

इतना ही नहीं, जब वे ऊपर अपने ऑफिस में बैठे लिख रहे होते थे, तो एक-दो कुत्ते रोजाना वहाँ भी उनका हाल-चाल लेने जरूर आते। बेदी साहब हाथ रोककर उनसे बातें करते और कहते, 'बच्चो, जाओ नीचे जाकर खेलो, अब मुझे काम करने दो।' और वे पूँछ हिलाते इठलाते आज्ञाकारी बालक की तरह नीचे चले जाते। जानवरों से वे दिल से प्यार करते थे। अपनी किसी एक पुस्तक के समर्पण में उन्होंने लिखा भी है—

'वे चाहे कितने ही हिंस्र और खूँखार हैं
खंजर सरीखे दाँतों से लैस हैं
फिर भी मैं उनकी कद्र करता हूँ।'

कला (हुनर) के पारखी

बेदी साहब के मार्गदर्शन में लगन से कार्य करते हुए मैं शीघ्र ही संस्थान के कार्यों, कार्य-पद्धति, संदर्भ-ग्रंथों से परिचित हो गया। विगत आठ वर्षों से बेदी साहब और उनके सहायक अंधी सुरंग में काम कर रहे थे। किसी को नहीं पता था कि पुस्तक का स्वरूप क्या होगा और किस प्रकार सामने आएगा, बस फाइलों की संख्या-वृद्धि करते चले जा रहे थे, कोश-कार्य कोई फाइनल स्वरूप नहीं ले पा रहा था। आपको बताता चलूँ कि इनमें कोई भी व्यक्ति न तो प्रोफेशनल था और न ही इस कार्य से संबंधित, ज्यादातर अपनी सरकारी नौकरी लगने की प्रतीक्षा करते हुए केवल खर्च चलाने के लिए यह कार्य कर रहे थे। जैसा और जो बेदी साहब कहते, वैसा वे करते चले जा रहे थे, बिल्कुल लकीर के फकीर।

एक दिन मैं अपने आप को रोक नहीं पाया तो टोक ही दिया, ''पापाजी, आखिर इसको पुस्तक का आकार कब देंगे? इसका फॉण्ट साइज, पेज का साइज, उप-शीर्षक आदि का क्या साइज निश्चित किया है? जो प्रिंट निकलता है, अगले दिन उसमें आप नई प्रविष्टियाँ जोड़ देते हैं। ऐसे तो यह कार्य अनंतकाल तक चलता रहेगा।'' हालाँकि उनके बेटे भी पहले यह सलाह दे चुके थे, पर बेदी साहब ने कभी कान नहीं दिए। पर मेरी बात उनकी समझ में आ गई, बोले, ''ऐसा है तो आप जैसा चाहते हैं, वैसा एक पेज सेट करवाकर लाओ।'' कंप्यूटर का कार्य 'बेदी फिल्म्स' के ऑफिस में होता था, जो पार्क के दूसरी ओर स्थित है। वहाँ जाकर मैंने पेज सेट कराया तो पुरानेवाले पाँच पृष्ठों का मेरा एक पेज बना। पौधों के लैटिन या बॉटेनिकल नाम लिखने की पद्धति मैं सीख चुका था। किसी भी वानस्पतिक नाम के तीन भाग होते हैं—पहला जीनस (गण), दूसरा स्पशीज (प्रजाति), तीसरा इन्वेंटर (खोजकर्ता)। पहले भाग का पहला अक्षर कैपिटल लैटर से, दूसरा भाग लोअर केस से, मगर दोनों बोल्ड तथा तीसरे भाग का पहला अक्षर कैपिटल तथा नाम लाइट टाइप में लिखने का नियम है। यह बॉटनी लिखने की अंतरराष्ट्रीय पद्धति है। मैंने उसी के अनुसार पेज बनवा दिए और प्रिंट लाकर बेदी साहब को दिखाया।

पेज देखते ही बेदी साहब तो अचरज में पड़ गए, खुशी के मारे आँखों में पानी झलमलाने लगा। सभी को अपने कमरे में बुलाकर बोले, ''देखो, किताब तो बिल्कुल ऐसे ही बनती है। सुनो, अब से शर्माजी के निर्देशन में काम होगा। बिल्कुल इसी पैटर्न पर काम करेंगे।'' मगर इस पैटर्न से ऑपरेटर दुःखी हो गया। पहले दिनभर के काम के उसके २५ पेज गिने जाते, वहीं अब ये पाँच पेज गिने जाते। इसके बाद दो ऑपरेटर और रखे गए। कार्य युद्ध-स्तर पर शुरू हुआ। ऑपरेटरों को लगातार काम देने के लिए मुझे महीने के चार इतवार भी लगाने पड़े। पूरे तीस दिन काम किया। इसके साथ प्रूफ-रीडिंग का काम भी निरंतर चलता रहा।

बेदी साहब की पारखी नजर का एक और उदाहरण आपको सुनाना चाहता हूँ। वे व्यक्ति के हुनर की कद्र करते थे। एक बार संस्थान में कागज आदि काटने के लिए मैं एक लड़का लेकर आया। इसका नाम था राजकुमार लोहिया। यह दिल्ली के रंजीत नगर में रहता था। गृह-क्लेश से परेशान था। घर में रोटी का सबाल सबसे बड़ा था। ज्यादा पढ़-लिख न पाने के कारण वह बेकार इधर-उधर घूमा करता था। लेकिन उसकी ड्राइंग बहुत अच्छी थी। यह कला उसे ऊपरवाले ने खुश होकर बख्शी थी कि बैठे हुए व्यक्ति की हूबहू तस्वीर बना देता था।

एक दिन उसने कागज काटते हुए कागज के उल्टी साइड पेन से एक पुष्पगुच्छ बनाया। वह किसी तरह बेदी साहब के हाथ लग गया। उन्होंने मुझे बुलाकर वह दिखाया और फिर बोले, ''शर्माजी, इस लड़के का हाथ बड़ा साफ है, इसके लिए ड्राइंग का सामान मँगवा दीजिए, इससे कुछ चित्र बनवाकर देखते हैं।'' उसी दिन ड्राइंग के पेन, फट्टा आदि उसे लाकर दे दिए गए। राजकुमार ने गजब के चित्र बनाए। बस उसी दिन से वह आर्टिस्ट यानी चित्रकार बन गया, उसकी दुनिया बदल गई। बेदी साहब की सब पुस्तकों में उसी के बनाए हुए रेखाचित्र छपे हैं। मेरा वह बहुत सम्मान करता था, बल्कि आज भी करता है। गुरुदक्षिणा-स्वरूप उसने मेरी पुस्तकों के लिए भी बहुत सारे रेखाचित्र बनाए, जो प्रकाशित हुए हैं। वहीं रहते उसकी मनचाही लड़की से उसका विवाह हुआ। बेदी साहब की पारखी दृष्टि से गुजरकर आज वह अपने बाल-

बच्चों के साथ खुशहाल जिंदगी जी रहा है।

बहुमूल्य एवं उपयोगी नसीहतें

बेदी साहब के व्यक्तित्व एवं कृतित्व से संबंधित संस्मरणों का मेरे पास अकूत खजाना है। इस पत्थर कोठी में अब भी बेदी साहब का जन्मदिन मनाया जाता था। घर के सब लोग, उनके मित्र तथा दोनों ऑफिस के सब लोग इसमें शामिल होते थे। एक बार उनकी जन्मदिन की पार्टी में गुरुकुल काँगड़ी के उनके हमउम्र पुराने मित्र भी आए हुए थे। पार्टी में समोसा, कचौड़ी, पकोड़े, गुलाबजामुन तथा कोल्ड ड्रिंक आदि सब था। बेदी शोध संस्थान की स्टाफ निशि त्यागी ने भोजन के प्रारंभ में ही गुलाबजामुन परोस दिए। बड़े जोशो-उल्लास से पार्टी संपन्न हुई, इसमें दोनों भाई नरेश बेदी और राजेश भी उपस्थित रहे। उस समय तो बेदी साहब ने कुछ नहीं कहा, लेकिन अगले दिन हम सबको अपने कमरे में बुलाकर समझाया कि भोजन की समाप्ति पर ही मिष्टान्न परोसा या खाया जाना चाहिए। चरक, सुश्रुत तथा अन्य निघंटुकारों ने भोजन के विषय में क्या-क्या कहा है, इस पर उन्होंने एक अच्छा-खासा व्याख्यान दिया। चरक संहिता के बोले गए एक श्लोक की याद रही यह अर्धाली मुझे आज भी नसीहत देती है, '··· भोजने प्रथम कषाये मधु समाप्ते।'

बेदी साहब ऊँच-नीच को बिल्कुल नहीं मानते थे। जब वे भोजनावकाश में या अन्य कारण से नीचे जाते तो हम सबके चाय के जूठे गिलास खुद उठाकर ले जाते थे, जबकि इस कार्य के लिए कई-कई नौकर-नौकरानियाँ मौजूद होते थे। विश्वप्रसिद्ध व्यक्तित्व नरेश बेदी भी ऐसा ही करते थे, बल्कि कभी-कभी हम उन्हें मेन गेट की डस्टिंग करते हुए देख दंग रह जाते। बेदी साहब किसी कर्मचारी की टेबल पर जाकर ताका-झाँकी नहीं किया करते थे। छोटे से छोटा काम, यहाँ तक कि परची पर गोंद कितना और कैसे लगाना, यह भी सबको बताते थे।

पुस्तकों के नामकरण

'बेदी वनस्पति कोश' बेदी साहब की जीवन भर की तपस्या तथा महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। उन्होंने अपना पूरा साहित्य हिंदी में लिखा। वे बॉटनी जैसे विषय को हिंदी में लेकर आए। रंगीन तथा श्याम-श्वेत चित्रों के साथ यह कोश छह खंडों में किताबघर प्रकाशन, दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। पुस्तकों को शीर्षक देने में बेदी साहब का कोई सानी नहीं था। बच्चों की पुस्तकों में 'अमर हो गया मगर', 'तेंदुए ने इनसान के बच्चे को पाल लिया', 'हाथी के पैर का ऑपरेशन', 'लैला की उँगलियाँ, मजनू की पसलियाँ', 'प्रचंड धावक चीता' आदि-आदि। उनकी पुस्तक 'साँपों का संसार' तो इस विषय का इनसाइक्लोपीडिया ही है, जिसको पढ़कर अनेक लोग साँप पकड़ना सीख गए। एक बार तो राजस्थान के बाड़मेर के पास का एक व्यक्ति जब किसी भी तरह के साँप पकड़ने में माहिर हो गया तो नारियल आदि लेकर बेदी साहब की गुरुपूजा करने के लिए वहाँ से चलकर पत्थर कोठी आ पहुँचा था।

हालत इतनी गंभीर हो जाती कि चेहरा सूजा हुआ, सूजी हुई आँखों से निरंतर पानी गिरता रहता, बीच-बीच में जब होश आ जाता, तो न जाने कब अखबार पढ़ लेते और काम की खबर काटकर रख लेते। जब भूपसिंहजी उनसे मिलने जाते तो अपने तकिए के नीचे से जीव-जंतु या वनस्पति से संबंधित अखबार की कोई कटिंग निकालते और टूटे-फूटे शब्दों में कहते, 'इसे फाइल में जरूर लगा देना, आगे कभी काम आएगी।' एक बार नहीं, कई बार उन्होंने मौत से दो-दो हाथ कर बेदी वनस्पति कोश के कार्य को पूरा किया।

अद्‍भुत जीवटता के धनी

वर्षों तक उनके साथ काम करते हुए मैंने उनके बहुत सारे रंग देखे, पर एक रंग उनका सबसे चटख है—अद्‍भुत जीवटता का। जब वे गंभीर रूप से बीमार हो जाते, अस्पताल में भरती के दौरान मरणासन्न स्थिति में पहुँच जाते, घरवाले भी उम्मीद छोड़ बैठते। हालत इतनी गंभीर हो जाती कि चेहरा सूजा हुआ, सूजी हुई आँखों से निरंतर पानी गिरता रहता, बीच-बीच में जब होश आ जाता, तो न जाने कब अखबार पढ़ लेते और काम की खबर काटकर रख लेते। जब भूपसिंहजी उनसे मिलने जाते तो अपने तकिए के नीचे से जीव-जंतु या वनस्पति से संबंधित अखबार की कोई कटिंग निकालते और टूटे-फूटे शब्दों में कहते, 'इसे फाइल में जरूर लगा देना, आगे कभी काम आएगी।' एक बार नहीं, कई बार उन्होंने मौत से दो-दो हाथ कर बेदी वनस्पति कोश के कार्य को पूरा किया।

जब एक-दो खंड ही प्रकाशित हुए थे तो उन्हें अपने सामने की अलमारी में रखे देखते हुए बड़े खुश होकर कहा करते थे—शर्माजी, जब सारे खंड छप जाएँगे तो यहाँ रखे कितने सुंदर लगेंगे! तब हम कहा करते, 'पापाजी, तब तो वह नजारा देखने लायक होगा और इसमें अब ज्यादा समय नहीं लगेगा। वास्तव में आपने अद्वितीय काम किया है।' यह सुनकर बेदी साहब की आँखों की कोर खुशी के आँसुओं से भीग जातीं। फिर और भी खुश होते हुए अपनी बॉटनी की साहित्यिक भाषा में कहते, ''लेखक तो प्रशंसा के पादप होते हैं, उन्हें प्रशंसा के जल से जितना सींचा जाता है, उतने ही वे पुष्पित-पल्लवित होते हैं।''

स्मृतियाँ बहुत हैं, कहाँ तक सुनाऊँ! बेदी वनस्पति कोश का प्रोजेक्ट पूरा होने पर मैं उन्हें बिना बताए ही संस्थान छोड़कर आया था, वे मुझे आने ही न देते थे। फोरेस्टरी पर एक 'बेदी वानिकी कोश' भी तैयार कर रहे थे, जो अधूरा ही रह गया। महीनों तक मेरा इंतजार करते रहे, भूपसिंह को मेरे घर दौड़ाते रहे। मेरे संस्थान छोड़ने के एक वर्ष बाद वे इस संसार को अलविदा कह गए। मैं उनकी अंत्येष्टि में शामिल हुआ और बार-बार उनसे क्षमा माँगता रहा। विद्वान् लोगों ने 'शिष्य' शब्द के मायने बताए हैं—'जो गुरु से प्राप्त विद्या को सहस्र गुना बढ़ाए, उसका प्रसार करे, वही है शिष्य।' मैं आज भी बेदी साहब का शिष्य बनने की कोशिश कर रहा हूँ।

सा अ

जी-३२६ अध्यापक नगर,
नांगलोई, नई दिल्ली-११००४१
दूरभाष : ९८६८५२५७४१

तपन से त्रस्त जन व्याकुल

• राम सुमिरन पांडेय

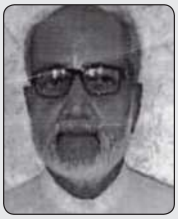

सुपरिचित साहित्यकार। हिंदी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। जे.सी.टी. इलेक्ट्रॉनिक लि. में ज्वॉइंट मैनेजर के पद से सेवानिवृत्त।

माँ

ममता के पालने में आशा की डोर से
कोमल मधुर कंठ से लोरी सुनाती माँ,
कभी मुसकानों पर, कभी चपल क्रंदन पर
भाव-विह्वल से बलि-बलि जाती माँ।

चूम-चटकारकर कभी बड़े लाड़ से
अनजान बातों का ज्ञान कराती माँ,
क्रोध के मधुर पुट में, आँख के इशारे से
सत्य आचरणों पर चलना सिखाती माँ।

पुत्र अरु कुपुत्र में भेदभाव रंच नहीं
अमृत-पियूष का पान करती माँ,
निस्स्वार्थ भाव से एक ही इशारे पर
बच्चों के सुख पर बलिदान होती माँ।

धर्म

मानवता की रक्षा खातिर धर्म हुआ स्थापित,
जियो और जीने दो सबको, धर्म करे संपादित।

प्रेम-सत्य-करुणा से प्रेरित, मानव नीति बनाएँ,
वेद ऋचाएँ उपनिषदों से, बनी धर्म गाथाएँ।

धर्म-अर्थ अरु काम-मोक्ष, पुरुषार्थ की परिभाषा,
विकृत रूप लिये फिरती है, जन-मन की अभिलाषा।

धर्म रूढ़ि के आडंबर ने, नग्न किया मानवता को,
हिंदू-मुसलिम-सिक्ख ईसाई, लड़े धर्म अस्मिता को।

धर्म बना साधक का साधन, मानव हित वह भूल गया,
खून बहाएँ इक दूजे का, धर्म विवेचन करें नया।

ग्रीष्म ऋतु

रौद्रता की ऊष्मा ले ग्रीष्म ऋतु आई है
तपिस के थपेड़ों से निढाल है वसुंधरा
वन की वनाली क्लांत मुरझाई है
प्यास से सिमट गए पंख उस पखेरू के
दिवास-मध्य नीरवता प्राण में समाई है।

कायाकल्प कर रहा तपन से धरा की मानो
जैसे कोई वैद्य उपवासी व्रत ध्यायी है
तपन से त्रस्त जन व्याकुल श्वेद बूँदों से
तरु की सघन छाँव शीतल मनभाई है

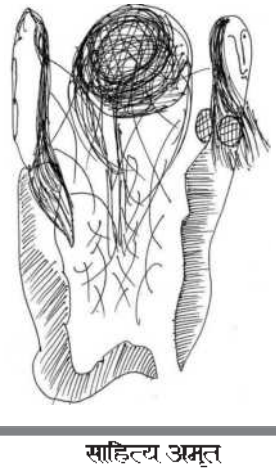

तप्त दोपहरी में ग्रीष्म की मरीचिका भी
रौद्र अपने प्रियतम के संग-संग धाई है।

गंगा माँ

भगवान् श्रीहरि के चरणों से निकलकर
परमपिता ब्रह्मा के कमंडल से होती हुई
शंकरजटा में समा गई गंगा माँ
भगीरथ प्रयत्नों से गोमुख के गह्वर से
कलकल निनाद करती आ गई गंगा माँ,
कितनी सरल दयामयी अपनी शीतलता से
सतत प्रवाहिनी, मंगल कारिणी
पापमोचनी आभा ले धरती पर आ गई गंगा माँ।

पुत्री हिमवंत की चंचल चपल वेगवती
हरि-हर की ध्वनि करती आ गई गंगा माँ,
श्वेत धवल वस्त्रों में मस्त नवयौवना सी
अलका सरस्वती, बहन तनूजा संग
कितने ही संगम बना गई गंगा माँ।

संत और ऋषियों की वेदमयी वाणी से
पुत्र देवव्रत को भीष्म बना गई गंगा माँ।
पावन प्रयाग हो अशोक की पाटलिपुत्र
आश्रम कपिल का हो या सगर पुत्रों का,
अपने ही नाम का सागर बना गई गंगा माँ।

बचपन

छल-प्रपंच से दूर दैव प्रतिमा सा बचपन,
एक बार यदि रूठा, कभी न आया बचपन।

न पीड़ाओं की चिंता, न चिंताओं का गम
स्वच्छंद विहार करे मन-मानस मराल सावन,
मन के कोरे कागज पर कैसी भी खींचो रेखा
चिरसंगी वह बन जाए जो कभी न मिटते देखा।

जिज्ञासापूर्ण आँखों में है भरा कौतूहल कितना
मूल्यवान् रत्नों-पूरित रत्नाकर गहरा जितना,
रोना और मचल जाना बहला-फुसला चुप हो जाना,
कर्तव्यों का कुछ भान नहीं है, जीवनपथ भी अनजाना
मृदुभाष तोतली बोली पर बलिहारी जीवन माँ का,
कैसे भूल सके मन वह प्रात:काल जीवन का।

ग्राम-मामपुर (पुरवा)
पो. लंभुआ, जिला-सुल्तानपुर-२२२३०२ (उ.प्र.)
दूरभाष : ०७५२३८९३४२३

मायावी मस्ताना मतवाला मेलबॉर्न

• फूलचंद मानव

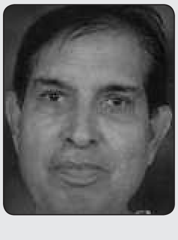

सुपरिचित कवि-कथाकार एवं अनुवादक। संपादित, अनूदित तथा मौलिक कुल ३४ कृतियाँ प्रकाशित। राष्ट्रीय स्तर पर तीन, प्रांतीय स्तर पर चार पुरस्कार प्राप्त। 'मोहाली से मेलबॉर्न' यात्रा-वृत्तांत। 'बीसवीं सदी का पंजाबी काव्य' प्रो. योगेश्वर कौर के साथ साहित्य अकादमी के लिए अनूदित।

विंधाम सिटी कौंसिल ने रख-रखाव के लिहाज से बहुत कुछ सुधारकर रखा है। सौंदर्य, व्यवस्था, निरीक्षण, सुचारु जनजीवन के वास्ते महानगर मेलबोर्न शहर के अपनी-अपनी तरह से सुनियोजित व सुनिश्चित प्रबंध किए हुए हैं। बैरिवी, पॉइंट कुक, सैंचुरी लेक्स आदि को जोड़कर यहाँ कौंसिल उपयोगी और सार्थक काम कर रही है। पहले शायद ऐसा नहीं था। याद है साल १९९८ में मेलबोर्न में सैलानी को विंधाम का नाम तक सुनने को नहीं मिलता था। आज जगह-जगह विंधाम के साइन-बोर्ड दिन भर की कार्यप्रणाली के लिए मार्गदर्शक की तरह तैनात हैं। इसे देखकर संतोष होता है।

हॉपर क्रॉसिंग बैरिवी, टारनेट या आसपास के इलाके में हमारे चार-पाँच आत्मीय परिवार हैं। इन्हीं परिवारों की मार्फत हमारा परिचय कई अन्य भारतीय पंजाबी या विदेशी परिवारों से होता रहा है। जन्मदिन, शादी की सालगिरह से लेकिर किसी की तरक्की, नियुक्ति, तबादला या शिशु-जन्म के उपलक्ष्य में वीकेंड, पार्टी जैसे माहौल में दिन बीतते रहे हैं। इन या ऐसी ही गैट टूगेदर पार्टियों के माध्यम से भी हमने जिस मेलबोर्न की भीतरी या बाहरी पहचान की है, वह अद्‌भुत है। रंगीनी, शोखी, आत्मीयता, आदरभाव या इस मिलनसारिता पर भला कौन निसार न हो जाए!

युवा वर्ग का एक अलग संसार है। यहाँ संस्कार और व्यवहार की परख-पड़ताल होती रही है। रूढ़ियों-संस्कारों से आगे भी बहुत कुछ है, जिसे समय की गति ने मुक्त कर दिया है। किशोर, बच्चे या बूढ़े भी अपनी-अपनी शैली में सहज ही प्रभाव छोड़ रहे हैं। रंग-तरंग की यह धुन भीतरी प्रसन्नता और बाहरी उमंग को प्रत्यक्ष, साक्षात् करनेवाली है। मेलबोर्न का यह पश्चिमी खंड एक अद्‌भुत संसार का परिचय देनेवाला है।

गहराती शाम को अधिक रंगीन करने के लिए रेस्तराँ, कॉफी हाउस, स्वीट शॉप के अंदर या बाहर आप बैठिए। प्रतीक्षा कीजिए, ऑर्डर दीजिए। हवा में बैठकर मोबाइल पर बतियाएँ। बीयर के गिलास उठाएँ। लगातार टकटकी लगा निहारते जाएँ, आपका समय सफल हो रहा होगा। बिकॉन हो या ला वैले, बरूनी हो या इंडियन गजल, डिनर के समय धूमधाम, भीड़भाड़ बढ़ती चली जाएगी। बूफे ले रहे हैं या ड्रिंक्स, एक लजीज स्वाद आपको माहौल से बाँधकर रखेगा। कोई प्रिपरेशन पसंद आए, न भाए, आप लौटा सकते हैं। नई डिश आपको ताजगी के साथ पेश कर दी जाएगी।

पाश्चात्य या भारतीय संगीत पंजाबी, हरियाणवी गीत आपको मंत्रमुग्ध कर रहे हैं। मैनेजर-मालिक या कैप्टन से शैफ तक किसी को भी आप सुझाव दें, तामील होगी। डिस्काउंट उपहार, भारतीय अखबार, पत्रिकाएँ आपको बोनस की तरह यहाँ मिल सकती हैं। एक उत्सव का माहौल दिखा पार्लियामेंट के अंदर। दर्जन भर देशों के नागरिक यहाँ ऑस्ट्रेलिया, सिटीजनशिप पा चुके हैं। कैमरों की चमक कौंधती बिजली-सी फ्लैश छोड़ रही है। चेहरे खूब खुश हैं। टी.आर., पी.आर. से आगे ये विश्व नागरिक का रुतबा प्राप्त करते जान पड़ते हैं। आने वाले समय के स्वप्न बुने जाते हैं। टेबलों पर थिरकती उँगलियाँ जैसे गुनगुना रही हों। ठहाके-लतीफे कमरे की दीवारें फाँदकर सड़क तक लहरा जाते हैं। गुब्बारे छोड़े या फिर फोड़े जा रहे हैं। होस्ट भी एक बार तो खुद को गेस्ट ट्रीट कर रहा है।

चेंडस्टन का संसार याद आ रहा है। बहूद्‌देशीय दुकानें, पेटेंट नाम, फेवरिट छाप और

अपनत्वपूर्ण व्यवहार। मोलभाव से दूर आप पसंद न आने पर खरीदी हुई चीज लौटा सकते हैं या एक्सचेंज कर सकते हैं। यहाँ मौज-मस्ती, सौंदर्य, खरीददारी और जानकारी के अनेक केंद्र हैं। एक के बाद एक आपको खींचते, लुभाते, बहलाते ये शोरूम दूसरे अर्थों में मिलनस्थल भी कहलाते हैं। दूर पार के किसी छोर से आप किसी एक को मिलने-बतियाने आ रहे हैं तो अंतरराष्ट्रीय या राष्ट्रीय स्तर के किसी भी नामी-गिरामी केंद्र (शोरूम) का नाम लें, दूसरी दिशा से आनेवाला आप तक पहुँच जाएगा।

फिर विक्टोरिया यूनिवर्सिटी का बैरिवी कैंपस हो या रेसकोर्स। बैरिवी रेलवे स्टेशन हो या हापर क्रॉसिंग बस स्टेशन या रेल पथ। बैरिवी का दक्षिणी बीच (तट) हो या शॉपिंग सेंटर, कई-कई आत्कर्षण आपको अपनी ओर खींच रहे होंगे। लिवास, लहजा, लज्जत या लड़कपन के अधीन जब कोई यहाँ शिकार हो जाता है तो उसकी सूरत-सीरत देखते ही बनती है। इधर के पार्क या ओपन रेंजेज इसलिए भी अहम हैं कि विश्व स्तर पर इनका कहीं खास स्थान तो है ही।

मेलबोर्न के नक्शे पर फैशन, नाइट-क्लब, खानपान, शॉपिंग, मनोरंजन के सारे स्थान अपनी अलग तरह की विविधता लिये हुए हैं। खास स्थान की खास चीज आपको यहीं मिले, यह जरूरी नहीं, अन्यत्र कहीं तो मिल ही जाएगी।

मायावी मेलबोर्न, मतवाला मेलबोर्न या मस्ताना मेलबोर्न महानगर की चारों दिशाओं में अपना सानी नहीं रखता। सामाजिक सुरक्षा, सेहत-सँभाल से लेकर हरे-भरे बगीचों, फव्वारों, पेड़ों तक एक तहजीब आपका स्वागत कर रही होगी।

सा/अ

२३९, दशमेश एन्क्लेव,
ढकौली-१६०१०४
(मोहाली-जीरकपुर) पंजाब
दूरभाष : ०९३१६००१५४९

कविता

जिसका जग में तोल नहीं

• रीता सिंह

नहीं सरल राजत्व निभाना

नहीं सरल राजत्व निभाना
राजा तुम्हें समझना होगा,
राजतिलक होते ही तुमको
राजधर्म को जीना होगा।

एक यज्ञ सा राजा का जीवन
जो जनहित आहुत ही होगा,
विचार सभी वर्गों का तुमको
धीरज धर सुनना ही होगा।

अनगिन भूपति हुए देश में
उसी क्रम में स्वयं को मानो
बंजर भू में प्रजाहित उन सम
हल जोतना सीखना होगा।

लोभ रहा न राजपाट का
ऐसे भी युवराज हुए हैं
राज्याभिषेक को त्यागकर
क्यों वन गए समझना होगा।

पिता पति के दायित्वों की
राजधर्म पर बलि चढ़ती है,
सिया त्याग पुरुषोत्तम का
आसां इतना हुआ न होगा।

यशोदा की ममता

मैया तेरा नटखट लाला
किशन द्वारकाधीश बना
कल तक जिसने मटकी फोड़ी
आज वही जगदीश बना।

कैसा माखन दिया, यशोदा!
राजबुद्धि उसको आई,
कैसे पाठ पढ़ाए उसको
राजशक्ति उसने पाई।

मैया तुम थी जादूगरनी!
हमको तनिक न भान हुआ।
नहीं पता था तेरे आँगन ,
योगी कृष्ण महान् हुआ।

ममता तेरी पावन-भावन,
जिसका जग में तोल नहीं,
जगहित में उसका तुमने तो
किया कभी भी मोल नहीं।

लेखिका परिचय
नवोदित साहित्यकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में काव्य रचनाओं, आलेखों व शोध पत्रों का प्रकाशन। आकाशवाणी नजीबाबाद से युव मंच में काव्य गोष्ठी व परिचर्चा का प्रसारण। 'काव्य प्रज्ञा' व 'साहित्य मनीषी सम्मान', अक्षर प्रकाशन, धामपुर (बिजनौर) द्वारा सम्मानित।

सा/अ

एफ-११, फेज-६
आया नगर, दिल्ली-११००४७
दूरभाष : ९७५९७४८६७३

‘रवांई’ में सरनौल का पांडव नृत्य

• महाबीर रवांल्टा

सुपरिचित लेखक। अब तक ‘पगडंडियों के सहारे’, ‘एक और लड़ाई लड़’ (कहानी-संग्रह), त्रिशंकु (लघुकथा-संग्रह), ‘सफेद घोड़े का सवार’, ‘खुले आकाश का सपना’ (नाटक); ‘आकाश तुम्हारा होगा’ (कविता-संग्रह) चर्चित। अनेक संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत एवं सम्मानित।

विश्व भर में देवभूमि के नाम से प्रसिद्ध उत्तराखंड राज्य का सीमांत जनपद उत्तरकाशी गंगा व यमुना की उद्गमस्थली होने के कारण सदैव से चर्चित रहा है। उत्तरकाशी वर्षों टिहरी-गढ़वाल रियासत का अभिन्न हिस्सा रहा। १ अगस्त, १९४९ को इसका भारतीय संघ में विलय हुआ और २४ फरवरी, १९६० को टिहरी गढ़वाल से पृथक् होकर उत्तरकाशी अलग जनपद बना।

उत्तरकाशी का पश्चिमोत्तर क्षेत्र रवांई क्षेत्र के नाम से विख्यात है। इस क्षेत्र में यमुना एवं टौंस (तमसा) नदियों के उद्गम स्थल होने के कारण इसे यमुना घाटी व टौंस घाटी क्षेत्र भी कहा जाता है। समुद्र-तल से २२२० मीटर की ऊँचाई पर अवस्थित ‘राड़ी डाँडा’ रवांई क्षेत्र का प्रवेशद्वार कहा जा सकता है। संपूर्ण रवांई क्षेत्र नौगाँव, पुरोला एवं मोरी विकासखंडों में बँटा हुआ है।

ईसा से लगभग ६७५० वर्ष पुराने माने जानेवाले रवांई क्षेत्र के बारे में कहा जाता है कि महाभारत काल में यह क्षेत्र ‘कुलिंद क्षेत्र’ के नाम से विख्यात था। कुलिंद का राजा सुबाहु था, जिसने वनवास के समय पांडवों का स्वागत किया था। कुलिंद जाति की सत्ता इस क्षेत्र में दूसरी शताब्दी तक रही। ग्रीक साहित्यकार टाल्मी ने भी कुलिंदों की मूलभूमि यमुना क्षेत्र में बताई है।

संपूर्ण उत्तराखंड की तरह रवांई क्षेत्र में भी अनेक देवी-देवता पूजे व माने जाते हैं। क्षेत्र के अलग-अलग हिस्सो में रह रहे लोगों के अपने अलग-अलग ईष्ट देव हैं—भद्रकाली, राज-राजेश्वरी, रेणुका, लुदेश्वर, रघुनाथ, कौंल, महासू, ओडारु, जखंडी, पोखू, सोमेश्वर, जमदग्नि, कपिल मुनि, कालिक नाग, नरसिंह, भूतराजा, कंडारिया, जाख के अलावा यहाँ महाराज कर्ण एवं शल्य भी माने व पूजे जाते हैं। यमुना घाटी पांडवों की वनवासस्थली मानी जाती है और यहाँ के वासी अपने आपको पांडवों का वंशज मानते रहे हैं। बताते हैं कि यहीं से पांडवों ने स्वर्गारोहण किया था। पांडवों की परंपरा में यहाँ बहुपति एवं बहुपत्नी प्रथा भी बहुत समय तक रही।

पांडव यहाँ के निवासियों के आराध्य रहे हैं, इसलिए उनके नाम पर गाँव-गाँव में पांडव नृत्य का आयोजन ‘पंडौं (पांडव) की सराद’ के रूप में होता है। यमुना घाटी में यक्ष को ‘जाख’ के रूप में पूजते हैं तो टौंस घाटी में दानवीर कर्ण को। देवरा गाँव में इनका भव्य मंदिर है। उनकी पूजा-अर्चना होती है, साथ ही शल्य भी यहाँ के निवासियों के ईष्ट देव हैं।

इस क्षेत्र में अनेक गाँवों में पांडवों के स्मृति स्थल ‘चौंरी’ के रूप में देखने को मिलते हैं, जहाँ लौह व काष्ठ से बनी गदाएँ, धनुष-बाण, दीपक व वल्ड़े रखी होती हैं। लोग इन्हें पांडवों से जुड़ा मानते हैं। चौंरी के समीप ही पांडव नृत्य होता है।

पांडव नृत्य के लिए कोई विशेष तैयारी नहीं करनी होती। गाँव के स्त्री-पुरुषों पर वे अवतरित होकर नृत्य करते हैं। इसके लिए गाँव के परंपरागत स्थानीय ढोल, रणसिंहा, तालकी, दमाड़ा बजानेवाले बाजगी ‘जुमरिया’ अपने अनूठे वाद्य कौशल का परिचय देकर उन्हें अवतरित कराते ‘औतारते’ हैं। अवतरित होनेवाले स्त्री-पुरुष पांडवों के ‘पसवा’ (पात्र) कहलाते हैं। प्रत्येक पसवा के लिए पृथक् ताल, लय व थाप का वाद्य बजता है। पहले एक-एक कर पसवा औतरते हैं, फिर यह सामूहिकता का रूप ले लेता है। स्थानीय बोली में अर्जुन के लिए ‘खाती’, द्रौपदी के लिए ‘द्रुपता’ एवं कृष्ण के लिए ‘नागरजा’ कहा जाता है। सारे स्त्री एवं पुरुष पसवा एक साथ औतरते हैं तो यही पांडव नृत्य का रूप ले लेता है। इसमें प्रत्येक की भाव-भंगिमा व शरीर संचालन का ढंग अपने-अपने ढंग का होता है, जो दर्शकों को रोमांचित किए बगैर नहीं रहता। प्रत्येक पसवा अपने नृत्य के चरम पर होता है। काष्ठ व लोहे के भारी-भरकम गदे से अपनी नंगी पीठ पर प्रहार, लोहे की गरम सलाखों को जीभ से चाटना, जहरीले साँप पकड़कर उन्हें अपने गले में लपेटकर नचाना जैसे उनके हैरतंगेज कारनामे देखकर आँखें फटी-की-फटी रह जाती हैं।

यों तो यमुना घाटी क्षेत्र के अनेक गाँवों में पांडव नृत्य होता है, किंतु सरनौल गाँव का पांडव नृत्य अपने अनूठेपन के कारण खासा

रोचक एवं प्रसिद्ध है।

सरनौल रवांई क्षेत्र के विकासखंड नौगाँव का सुदूर गाँव है, जो तहसील मुख्यालय बड़कोट से ४५ कि.मी. की दूरी पर बसा है। ठकराल पट्टी के बड़े से इस गाँव की ईष्टदेवी रेणुका है तथा गाँव के मध्य में इनका छत्र-शैली में बना प्राचीन मंदिर अवस्थित है। वर्ष भर में अनेक अवसरों पर इसी मंदिर के प्रांगण में पांडव नृत्य संपन्न होता है। मंदिर के एक छोर पर पार्श्व की ओर चौंरी भी विराजमान है।

यहाँ आयोजित होनेवाले 'पंडौं की सराद' में पांडवों के अज्ञातवास की स्थिति को दरशाते 'जोगड़ा नृत्य' के अलावा 'घोड़ी नृत्य', 'हाथी नृत्य' ऐसी प्रस्तुतियाँ हैं, जिन्हें देखकर अद्‍भुत रोमांच होता है। इनके साथ ही गैंड़ा वध का प्रसंग भी मन को मोह लेता है। स्थानीय बोली 'रवांल्टी में इसे गैंड़ी मारना' कहते हैं। लोक में प्रचलित कथा के अनुसार एक बार जब भगवान् को कोढ़ हुआ और उससे बचने के लिए बाण की आवश्यकता थी। बाण भगवान् शंकर के पास था। बाण की रक्षक एक राक्षसी थी, जो पाताल लोक में रहती थी। अर्जुन राक्षसी को लेने पाताललोक पहुँचा, जहाँ उसकी मुलाकात वासुदंता से हुई। अर्जुन से प्रणय के बाद वासुदंता ने एक पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम नागार्जुन रखा गया। पांडु के श्राद्ध के लिए गैंड़े की राख की आवश्यकता पड़ी तो अर्जुन उसे लेने चल पड़ा। उसने जाकर उस गैंडे का वध किया, जो नागार्जुन का पाला हुआ था। इस बात को लेकर अर्जुन व नागार्जुन में युद्ध हुआ, जिसमें नागार्जुन ने अर्जुन को मार दिया। वासुदंता को पता चला तो उसने सारी बात नागार्जुन को बताई। उसने अर्जुन को जीवित कर दिया और फिर पिता-पुत्र का परिचय हुआ। पांडव नृत्य को लेकर उल्लेखनीय है कि इसमें स्त्री व पुरुषों की भागीदारी समान रूप से होती है। प्रत्येक पसवा के लिए अलग अंदाज में वाद्य बजते हैं और अपने अनुरूप वाद्य सुनकर फिर नृत्य संचालन स्वत: लय व गति पकड़ने लगता है। पहले एक-एक, फिर सभी की सामूहिक भागीदारी इस नृत्य को मोहक बनाकर चरम की ओर ले जाती है। परंपरागत वाद्यों को बजानेवाले 'जुमरियों' की इस नृत्य में महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। एक तरह से वे ही पूरे नृत्य का संचालन करते हैं।

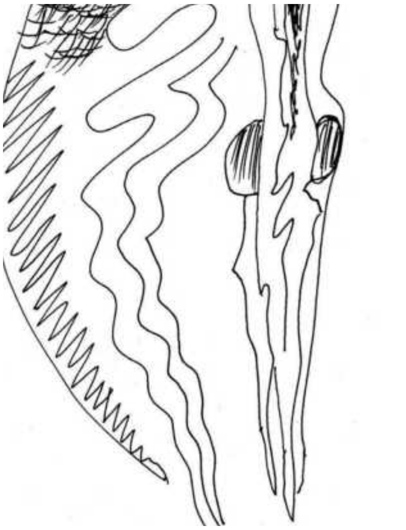

नंगी पीठ पर काँटेदार छड़ी का प्रहार, लोहे के 'गजा' (गदे) का प्रहार, गरम सलाखों को जीभ से चाटना, साँप पकड़कर उसे गले में लपेटकर नचाना, जलती आग में कूदने जैसे कृत्यों के अलावा मृत्यु के देवता यमराज से साक्षात्कार के लिए 'श्मशान साधना' जैसे करतब भी सरनौल के पांडव नृत्य में सम्मिलित हैं, जिन्हें देखकर सहज ही विश्वास होने लगता है कि पांडव नृत्य के चरम पर उनके साथ निश्चित रूप से दैवीय शक्तियाँ आरूढ़ हो जाती हैं, जो हमें आस्था और विश्वास की किसी और ही दुनिया की ओर ले जाती हैं।

आमतौर पर 'पंडौं सराद' की शुरुआत मुख्य आयोजन से एक दिन पूर्व ही हो जाती है, जिसे स्थानीय बोली में 'रात काटना' कहा जाता है। इसी रात्रि को 'ओसागड़ी' भरी जाती है। शाम को सभी 'पसवा' मुख्य देव स्थल 'मंदिर' अथवा 'थात' में इकट्ठे हो जाते हैं। ओसागड़ी भरने के लिए शाम को ही समय निश्चित किया जाता है। इसके लिए चावल के दानों की दो-तीन 'पूँजी' (ढेरी) रखकर उनमें से एक को छूकर तय किया जाता है कि इसे कौन भरेगा तथा समय क्या रहेगा। अधिकांशत: यह कार्य 'खाती' के जिम्मे होता है। शाम को जुमरिया अपने ढोल पर थाप देकर परंपरागत ढंग से पांडवों के लिए प्रचलित वाद्य बजाते हैं, जिसे 'चसिण देना' कहा जाता है और पांडव औतरता शुरू कर देते हैं।

मध्यरात्रि को खाती खाली लोटा लेकर गाँव के प्राकृतिक जलस्रोत 'नाले' पर जाता है और वहाँ से पानी भर लाता है। पानी भरने को लेकर यह बात खास होती है कि लोटा भरते ही उसे नाले से इस तरह हटा दिया जाता है कि पानी की एक बूँद भी बाहर न छलके। सराद वाले दिन सुबह ही ओसागड़ी में एक सिक्का डाला जाता है, जिसके ऊपर खाती द्वारा बारी-बारी से गाँव के प्रत्येक पसवा की कुशलक्षेम को लेकर चावल के दाने डाले जाते हैं। यदि वे सीधे ही सिक्के के ऊपर बैठ जाते हैं तो सबकुछ कुशल समझा जाता है, अन्यथा अपशकुन की आशंका रहती है।

दोपहर से पांडव नृत्य आरंभ हो जाता है। उस दिन सभी पसवा निराहार रहते हैं। दोपहर से ही वहाँ पर भोजन की भी व्यवस्था होने लगती है। यदि सराद गाँव के किसी एक परिवार की ओर से दी जा रही होती है तो खाद्य सामग्री की व्यवस्था उसकी ओर से होती है, अन्यथा सारा गाँव करता है। किसी एक परिवार की ओर से सराद दी जाने की स्थिति में भी गाँव का हर परिवार अपनी ओर से आटा, चावल देना नहीं भूलता। इस अवसर पर पकनेवाला भोजन एकदम सादा होता है—दाल-भात और पूड़ी।

सराद के लिए आटे के नन्हे गोले बनाकर तेल में तलकर तैयार किए जाते हैं, जिन्हें खाती को ही पकाना/तलना होता है। इन्हें लेकर यह बात महत्त्वपूर्ण होती है कि इन्हें खौलते तेल में हाथ से डाला, पलटा और निकाला जाता है। इन्हें 'फल' कहा जाता है। इन्हें चौंरी के ऊपर रखा जाता है और सराद के समापन पर प्रसाद के रूप में बाँटा जाता है, जिससे मनोकामना पूर्ण हो।

पांडव नृत्य में प्रत्येक पसवा को अपना परिचय परंपरागत लयबद्ध

शैली में एक हाथ में 'धुप्याना' (धूपदान) व दूसरे में चावल उछालकर गाते हुए देना होता है, जिसे 'छाड़्या' लगाना कहा जाता है। इसी से उसके परिचय की पुख्ता पुष्टि भी होती है।

अँधेरा घिरने के साथ ही पंडौं की सराद अपने चरम पर होती है, तभी स्थानीय वाद्यों के साथ सभी पसवा नाले की ओर जाते हैं और पूर्वजों को तर्पण देने के बाद वहाँ से पाजू (पारिजात) के पत्ते लेकर लौटते हैं तथा इन्हें ग्रामीणों में बाँटना शुभ माना जाता है। 'भात' के गोले बनाकर पिंडदान होता है, फिर लोगों में बाँटा जाता है। सभी पसवों को वहीं पर भोजन कराया जाता है और फिर प्रत्येक परिवार के लिए जहाँ से पसवा होता है, पूड़ी भेज दी जाती है। इसके गाँव के दूसरे लोग भी वहीं पर भोजन करने जाते हैं।

इसके साथ ही पंडौं की सराद का समापन हो जाता है। लोग अपने-अपने घरों की ओर लौटने लगते हैं।

हर्ष के अतिरेक में कुछ स्त्री-पुरुष एक-दूसरे से गुँथकर रवांई के सर्वाधिक प्रचलित ताँदी गीतों की शुरुआत कर देते हैं और फिर देखते-ही-देखते लोगों की भागीदारी बढ़ने लगती है। लोक संस्कृति के रंग में सभी सराबोर होने लगते हैं और यह सिलसिला देर रात्रि तक बराबर चलता रहता है।

अपनी अनूठी नृत्यकला व कौशल के कारण सरनौल का पांडव नृत्य अपने क्षेत्र व प्रदेश से बाहर अनेक स्थानों पर प्रशंसा बटोर चुका है। राष्ट्रीय मानव संग्रहालय भोपाल (म.प्र.) एवं इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र दिल्ली में महाभारत पर केंद्रित 'जय उत्सव' में सरनौल के पांडव नृत्य की सफल प्रस्तुतियाँ हो चुकी हैं। कहा जा सकता है कि सरनौल का पांडव नृत्य न केवल पांडवों के प्रति यहाँ के निवासियों की अगाध आस्था को दरशाता है, अपितु लोक में छुपी कलाओं के माध्यम से दुनिया के सामने अपनी पहचान को भी पुख्ता करता है। सा अ

संभावना-महरगाँव,
पत्रालय—मोल्टाड़ी, पुरोला,
उत्तरकाशी-२४९१८५ (उत्तराखंड)
दूरभाष : ०९४११८३४००७

लघुकथा

लत

• अशोक गुजराती

मेरे जीजाजी का मेडिकल स्टोर था। उस कस्बेनुमा ऐतिहासिक तहसील में अकेला, बहुत आमदनी थी। जीजाजी आयुर्वेद के डॉक्टर थे। वहीं पर अंदर की तरफ प्रैक्टिस करते थे। उनके दो छोटे भाई स्टोर सँभालते थे। उनका एक पुराना मकान था। पूरा परिवार वहीं रहता था। पैसा आ रहा था तो उन्होंने एक प्लॉट खरीदा और निर्माण कार्य प्रारंभ कर दिया। हुआ यों, जैसा कि लोग कहते हैं कि खुदाई में उन्हें भरपूर सोने की अशर्फियाँ मिलीं। अर्थात् उन्होंने एक विशाल इमारत खड़ी कर दी। एक-एक तल पर एक-एक भाई का परिवार स्थापित हो गया। नीचे के भाग में उन्होंने अपना दवाखाना शुरू कर दिया।

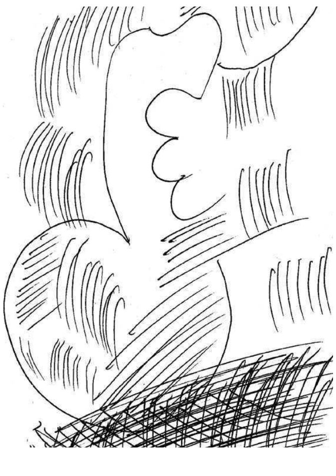

सबकुछ ठीक चल रहा था। नई इमारत में पीछे की ओर एक बड़ा गोदाम था, जिसमें यहाँ से वहाँ तक विभिन्न दवाइयाँ रखी होती थीं। सबसे छोटा भाई दिन में कई बार साइकिल से आता और थैले में भर-भरकर जरूरत की दवाइयाँ स्टोर ले जाता। इस सबके चलते हुआ ऐसा कि जीजाजी घर पर ही बने रहते और दोनों भाई मेडिकल स्टोर पर हमेशा व्यस्त रहते।

उनकी यह दुकान किराए पर थी। मालिक ने उनकी दिन-ब-दिन बढ़ती समृद्धि को देख ऐन चौक में स्थित इस दुकान को खाली करने के लिए कह दिया। इन्होंने इनकार कर दिया। वह कोर्ट में चला गया। और एक दिन इनकी दुकान को अदालत के आदेश पर ताला लग गया।

ताला लगना था कि दोनों भाइयों ने जीजाजी से संपत्ति का हिस्सा-बाँटा कर लेने पर जोर लगा दिया। जीजाजी मान गए। उनसे अलग होकर दोनों भाइयों ने एक बिल्डिंग खरीद ली और नया बड़ा मेडिकल स्टोर लगा लिया।

तब जाकर हमारे जीजाजी की समझ में आया कि पिछले कई वर्षों से दोनों भाई मेडिकल से पैसा मारकर अपनी जेब भरने में लगे हुए थे, वरना बँटवारे से मिली रकम से वे इतना निवेश कर ही नहीं पाते। खैर, अब क्या किया जा सकता था!

बहरहाल, बगैर किए वह हुआ, जो उन्होंने सोचा भी नहीं था। दोनों भाइयों को काउंटर से चोरी करने की आदत पड़ चुकी थी। वे अपनी दुकान में भी ऐसा करने से खुद को रोक नहीं पाए।

अंत में यही हुआ कि दोनों आपस में एक दिन झगड़ पड़े और गैर-तरीके से हासिल उनकी वह दुकान हमेशा के लिए बंद हो गई। सा अ

बी-४०, एफ-१, दिलशाद कॉलोनी, दिल्ली-११००९५
दूरभाष : ०९९७१७४४१६४

बाल-कविता

चाहत के सपने

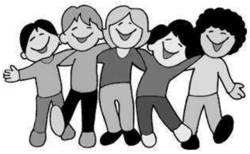

• फहीम अहमद

बस्ते में खजाना है

सबको यह बताना है
बस्ते में खजाना है।

हैं ज्ञान भरी बातें
बस्ते की किताबों में,
है प्यार भरी खुशबू
इन सारे गुलाबों में।

खुशबू के खजाने को
हर ओर लुटाना है।

बस्ता है बहुत छोटा
पर ख्वाब बड़े इसमें,
अनमोल उम्मीदों के
नगीने हैं जड़े इसमें।

हर एक नगीने का
सम्मान बढ़ाना है।

बस्ते में समझदारी
व सोच का समुंदर,
इक रंग भरी जादुई
दुनिया छिपी है सुंदर।

सबके लिए हमें ये
संसार सजाना है।

हिप-हिप हुर्रे

झूमें गाएँ हिप-हिप हुर्रे,
धूम मचाएँ हिप-हिप हुर्रे।

खबर उड़ी है बस्ती-बस्ती
बच्चों में है छाई मस्ती,
चेहरों से है खुशी बरसती।

पंख लगाकर सपनों वाले,
हम उड़ जाएँ हिप-हिप हुर्रे।

अपनी मुट्ठी में हों खुशियाँ
महक उठे मुरझाई कलियाँ,
चमक उठें चौबारे गलियाँ।

सारी दुनिया पर हम अपना,
रंग जमाएँ हिप-हिप हुर्रे।

अपने सारे खेल-तमाशे
लगते जैसे दूध-बताशे,
ढम-ढम बजते ढोलक-ताशे।

लड्डू-बरफी और समोसे,
खूब उड़ाएँ हिप-हिप हुर्रे।

हुल्लड़ के झूले में झूलें
उड़कर हम तारों को छू लें,
सारी बैर-बुराई भूलें।

भाईचारा और प्रेम की
अलख जगाएँ हिप-हिप हुर्रे।

रिमझिम फुहार

रिमझिम ऐसी पड़ी फुहार
धरती पे आ गई बहार,
बाँट रहीं बूँदें धरती को
हरियाली के नव उपहार।

उमड़-घुमड़ के बरसे बादल
बूँदों के संग बहे बयार,
हँसते हैं सब हिल-डुल पौधे
पाया सबने नया निखार।

पहन लताएँ झूम रही हैं
चमकीली बूँदों का हार,
ताल किनारे राग अलापे
मेढक चाचा का परिवार।

मिट्टी की सोंधी खुशबू पा
चले केंचुए बना कतार,
गालों को फुहार सहलाती
ज्यों माँ की मीठी पुचकार।

सुपरिचित बाल-रचनाकार। 'हाथी की बारात' (बाल काव्य-संग्रह); 'अनोखी दावत' (बाल कथा संग्रह) एवं पत्र-पत्रिकाओं में ६०० से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। १२ से अधिक राष्ट्रीय स्तर के संकलनों में रचनाएँ सम्मिलित। बाल साहित्य का 'सूर पुरस्कार', 'राष्ट्रीय युवा कवि अवार्ड', कई संस्थाओं से बाल-साहित्य सेवा के लिए सम्मानित। संप्रति असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, मुमताज पी.जी. कॉलेज, लखनऊ।

चुन्नी के सपने

चुन्नी के सपने हैं
रंगों भरे, नन्हे सही।

मस्त मगन पंछी-सी
उड़ने की चाह,
सपनों की नदिया की
कोई न थाह।

सपने निराले
तरंगों भरे, नन्हे सही।

फूलों-सा मुखड़ा है
बत्तक-सी चाल,
गाती है कोयल-सी
करती कमाल।

चाहत के सपने
पतंगों भरे, नन्हे सही।

मन में सँजोती है
खुशियों की आस,
जैसे हो सीप को
स्वाति की प्यास।

अरमान सारे
उमंगों भरे, नन्हे सही।

नन्ही शिकायत

मोबाइल में बिजी हैं पापा
लैपटॉप में मम्मीजी,
बात करेंगे कब वे मुझसे
आकर लेंगे चुम्मी जी।

खाना लगा दिया मम्मी ने
नहीं अकेला खाऊँ मैं,
कैसा तुम्हें लगेगा पापा
गर यूँ ही सो जाऊँ मैं?

पापा मुझसे बात करो न
बातें कई बतानी हैं,
मेरे प्यारे साथी कितने
सबकी कथा सुनानी है।

किस्से कई पाठशाला के
टीचरजी की बातें हैं,
मन में उठते कई सवालों
की लंबी बारातें हैं।

आगे-पीछे घूमूँ कब तक
मम्मी, समय निकालो न,
मुझको केवल प्यार चाहिए
नजर इधर भी डालो न।

पापा-मम्मी बोलो न अब
फैलाओ अपनी बाँहें,
मेरा नन्हा दिल देखेगा
आप मुझे कितना चाहें?

सा
अ

४८५/३०१, जेलर्स बिल्डिंग,
बब्बूवाली गली, लकड़मंडी,
डालीगंज, लखनऊ-२२६०२० (उ.प्र.)
दूरभाष : ०८८९६३४०८२४

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का मई अंक प्राप्त हुआ। सभी रचनाएँ ऊँचे स्तर की हैं। भा. परिपार्श्व में बँगला कहानी 'बड़े क्लोज अप का फ्रीज शॉट' ने अभिभूत कर दिया। प्राय: एक बार शिखर पर पहुँचा व्यक्ति अपने अधीनस्थ सहयोगियों की अवहेलना करता पाया जाता है। कलापक्ष भी इससे अछूता नहीं है, परंतु दुखित सहयोगी ने अपना स्वार्थ न देखकर उस दंभी व्यक्ति के अहं को चोट पहुँचाकर नहीं, बल्कि उसकी सहायता की पेशकश कर उसके मर्म को छू लिया। लेखक सुनीलदास बधाई के पात्र हैं। इसी प्रकार मंजरी शुक्ला कृत 'मिड-डे मील' ने भी संवेदना को नए आयाम दिए हैं। बाबूलाल शर्मा 'प्रेम' की कविताएँ बहुत भाईं। 'दिन बसंत के' कविता में उन्होंने शब्दों से ही वातावरण सुवासित कर दिया है।

—बी.डी. बजाज, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का अप्रैल अंक बहुत अच्छा लगा। संपादकीय में (२०१९ के आम चुनाव की ओर, पूर्व राष्ट्रपति के संस्मरण, आपातकाल की त्रासदी) संपादकजी ने अनूठे विचार प्रस्तुत किए हैं। प्रतिस्मृति में बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय पर आलेख बहुत उम्दा, प्रेरक, देशभक्ति के भावों से परिपूर्ण लगा। 'आई बसंत की बेला है' पाँचों गजलें अच्छी लगीं। 'साहित्य अमृत' पत्रिका वास्तव में हिंदी की चुनी हुई पत्रिकाओं में से श्रेष्ठ पत्रिका है।

—विजयपाल सेहलंगिया, महेंद्रगढ़

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक पढ़ा। आवरण पृष्ठ का ढोल, अबीर, पिचकारी, रंग सबों ने मिलकर दिल में गुदगुदी के साथ वसंत में अपना चेहरा भी रँगा नजर आया। दिल खिल गया। मुधमास की प्यास किसे नहीं होती। कोयल की कूक-सी हूक किसमें नहीं उठती। नशे में कौन नहीं होता, चाहे जिस उम्र का हो। पं. विद्यानिवास मिश्र का 'ब्रज में मनुष्य ईश्वर नहीं, ईश्वर मनुष्य है', अश्विनी कुमार दुबे का 'स्वप्नदर्शी', राजकुमार तिवारी का 'श्रद्धांजलि', अशोक गुलशन का 'खुलकर रोए बाबूजी', बालकवि बैरागी का 'यह असार संसार' (दोहे), दादूराम चौधरी का 'वन उपवन बौरा गए' बहुत अच्छे लगे। संपादकीय में चर्चित पुस्तकों को पढ़ने की जिज्ञासा जगी। होली में तो 'काँटे महक रहे हैं, फूलों के संग प्यारे/घूँघट की ओर देखो, तिरछे नयन निहारे/घायल न कौन होगा, पत्थर भी हिल रहा है, वन बाग आग में है, टेसू बता रहा है/पगडंडिया हँसे हैं, खेतों में खुलखुली है/सरसों लहरा रहे हैं, पीली पीतांबरी में।'

—नंद किशोर तिवारी, वाराणसी

'साहित्य अमृत' का हर अंक विरल होता है। कुछ कहता है, एक नया संदेश दे जाता है। संपादकीय तो सचमुच विश्लेषणात्मक व ज्ञानवर्धक होते हैं। संपादकीय पढ़ते हुए माननीय संपादक महोदय के विभिन्न विषयों में गहरी पैठ की झाँकी मिलती है, जिसे पढ़ने में मैं ऐसी डूबती हूँ कि उसे पूरा पढ़े बिना छोड़ा नहीं जा सकता। कहानियाँ भी मेरे लिए विशेष आकर्षण का केंद्र होती हैं। विद्या विंदु सिंह की 'बंदनवार', उषा यादव की 'एक छत के नीचे', अमिताभ शंकर रायचौधरी की 'झूठा सच' ने अंदर तक झकझोरा है। सामाजिक सरोकार, बनते-बिगड़ते रिश्ते, एक लड़की का अपनी माँ व पति की माँ के प्रति बदला दृष्टिकोण, झूठा सच में मन का अंतर्द्वंद्व साकार खड़ा दिखाई देता है। लघुकथा 'अहंकार का आवरण' व 'जीवन का गणित' बखूबी अपने मकसद को प्रस्तुत करने में सफल रही हैं। ललित निबंध 'नदी और मनुष्य' के माध्यम से लेखक ने मानव के भीतर की नदी को सभ्य समाज के निरंतर प्रवहमान रखने का सही परामर्श दिया है। आज हम कहीं-न-कहीं संवेदनहीन हो गए हैं, अपनी संस्कृति व मूल्यों को पीछे छोड़ केवल दिखावे की दुनिया में जी रहे हैं। कहने को बहुत कुछ है। 'साहित्य अमृत' की कविताएँ व लेख किसी-न-किसी रूप में मन को उद्वेलित करते हैं।

—रुक्मणी संगल, पटियाला

'साहित्य अमृत' का मई अंक प्राप्त हुआ। आरंभ से लेकर अंत तक 'साहित्य अमृत' का प्रत्येक अंक अपने विविध मुखी कलेवर द्वारा साहित्य प्रेमियों को परितृप्त करता आ रहा है। इस अंक में भ्रष्टाचार और बैंक घोटालों के अतिरिक्त पुस्तक चर्चा ने संपादकीय को और अधिक रोचक एवं समृद्ध बना दिया है।

—इंदिरा मोहन, गुरुग्राम (हरि.)

'साहित्य अमृत' का मई अंक प्राप्त हुआ। संपादकीय जीवंत मुद्दों पर आधारित है, जो मुझे बहुत अच्छा लगा। राहुल सांकृत्यायन को प्रतिस्मृति के अंतर्गत इस अंक में याद किया गया है, जो सराहनीय है। शकुंतला शर्मा का 'वैदिक वाङ्मय में जल का महत्त्व' आलेख, जो हमें जल की महत्त्वता बताता है, बहुत उत्कृष्ट लगा। राजेश सहाय की कहानी 'बाबू साहब' हमारे समाज को आईना दिखाने का कार्य करती है। अन्य कहानियाँ, कविताएँ, संस्मरण एवं व्यंग्य भी हम पाठकों को रोमांचित तथा शिक्षा प्रदान करनेवाले हैं।

—तुलसी कुमार, पटना

'साहित्य अमृत' का मई अंक प्राप्त हुआ। 'अभिव्यक्ति का अधिकार व सहनशीलता' विषय पर संपादकीय अच्छा और विचारक लगा। प्रतिस्मृति में राहुल सांकृत्यायन के जन्मदिवस पर लिखा विशेष लेख 'अमृताश्व' वैचारिक उत्कर्ष लिये है। शकुंतला शर्मा का 'वैदिक वाङ्मय में जल का महत्त्व' एवं सुरेश शर्मा का 'नैतिक-सामाजिक मूल्य और साहित्य' आलेख ज्ञानवर्धक हैं। अकसर ऐसे लेख बहुत कम पढ़ने को मिलते हैं, परंतु यह पत्रिका अपने आप में ही बहुत कुछ समेटे हुए है। रंजना किशोर की 'अपना-पराया', राजेश सहाय की 'बाबू साहब' एवं लक्ष्मी रूपल की 'संवेदना' कहानियाँ पठनीय हैं। साहित्य का विश्व परिपार्श्व के अंतर्गत रेमन डेल वालेक्लेन की 'भाग्यवान् लड़का' रोचक लगी। कविताओं में बाबूलाल शर्मा 'प्रेम' की 'झुकाता शीश जिसे संसार', मालिनी गौतम की 'ईश्वर तेरी दुनिया में', बसंता की 'उसको बारंबार प्रणाम', रीमा मौर्या की 'नारी ईश्वर की अवतार' श्रेष्ठ लगीं। अन्य सभी रचनाएँ, लेख, हैं, कहानियाँ, कविताएँ, संस्मरण भी पठनीय, रोचक एवं ज्ञानवर्धक हैं।

—रंजना राय, कोलकाता

वर्ग पहेली (१५३)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० जून, २०१८ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते अगस्त २०१८ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली**', **साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१५१) का शुद्ध हल

१ दा	२ द	■	३ खु	फि	४ या	५ पु	लि	६ स
७ ह	म	द	र्द	■	८ च	ट	■	न
■	क	■	९ बी	ज	क	■	१० जू	स
११ बा	ल	१२ प	न	■	१३ ता	१४ व	आ	ना
व	■	ति	■	■	■	ह	■	ह
१५ र	१६ सा	त	१७ ल	■	१८ ज	म	१९ घ	ट
२० ची	नी	■	२१ बा	द	ल	■	ट	■
खा	■	२२ मू	ल	■	२३ पा	रा	वा	२४ र
२५ ना	जु	क	ब	द	न	■	२६ ना	मा

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री जयंत नाहड़िया**
ग्रा.पो.-कारोता, तहसील-नारनौल
जिला-महेंद्रगढ़-१२३००१ (हरि.)
दूरभाष : ९४१६३२१५३४

२. **श्री शिवानंद सिंह 'सहयोगी'**
'शिवाभा', ए-२३३ गंगानगर
मेरठ-२५०००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१२११२२५५

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १५१ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री मोहन उपाध्याय (अजमेर), कुसुम गोयनका, पुखराज वार्ष्णेय (दिल्ली), उषा गोयल (गुरुग्राम), विजयपाल सेहलंगिया, ब्रह्मानंद खिच्ची (महेंद्रगढ़), फकीरचंद ढुल (कैथल), रीमा मौर्या (गोरखपुर), रामप्रकाश राय (फैजाबाद), रमेश पुंडीर (अल्मोड़ा), सुमति कुमार (मोहाली), देव प्रकाश जांगिड़ (उदयपुर), सुरेश राम भाई (अहमदाबाद), तिलकराज मानू (कटनी)।

बाएँ से दाएँ—

१. आजादी, आत्मनिर्भरता (४)
३. सहनशीलता (४)
६. मनौती (३)
७. जो किसी विषय पर भली प्रकार सोच सकता हो (५)
१०. बेचैनी, आशंका या डर से परेशान (३)
११. किसी वास्तु का बहुत छोटा अंश (२)
१२. चिकित्सा, इलाज (४)
१४. जलाशय में होनेवाला एक फूल, पद्म (३)
१६. धनराशि (३)
१९. मृत और घायल (४)
२१. दुर्गंध (२)
२३. शुद्धता (३)
२४. भूमि पर पेड़-पौधे लगाने की क्रिया (५)
२६. अर्चन, उपासना (३)
२८. टेसू का वृक्ष (४)
२९. ज्यामिति में जीरो और नब्बे डिग्री के बीच का कोण (२,२)

ऊपर से नीचे—

१. प्रकृतिजन्य, कुदरती (४)
२. बहुत बड़ी बस्ती, शहर (३)
३. चेतनाहीन, जड़-जैसा (२)
४. हितैषी (५)
५. न्यूनाधिक्य (४)
६. कूड़ा-कर्कट (३)
८. धूर्त (३)
९. ठंडक (४)
१३. पात्र (४)
१५. आवश्यक, जरूरी (५)
१७. राजा (३)
१८. तत्काल कविता रचने में समर्थ कवि (४)
२०. अग्नि में आहुति देने की क्रिया, होम (३)
२२. कंकण का स्वर (२-२)
२५. रासायनिक लेप, वार्निश (३)
२७. जिद, सुख, आराम (२)

वर्ग पहेली (१५२) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (१५३)

१		२		■	३	४		५
	■		■	६			■	
७	८		९		■	१०		
११		■	१२		१३		■	
■	१४	१५		■	१६		१७	■
१८	■	१९		२०		■	२१	२२
२३			■	२४		२५		
	■	२६	२७		■		■	
२८				■	२९			

प्रेषक का नाम : ....

पता : ....

....

....

दूरभाष : ....

लोकार्पण और परिचर्चा कार्यक्रम संपन्न

२१ अप्रैल को नई दिल्ली के फिक्की फेडरेशन हाउस के कमीशन रूम में सुश्री अरुणा मुकिम के वाणी प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उपन्यास 'दक्षायणी' का लोकार्पण एवं परिचर्चा समारोह आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री जावेद अख्तर, नफीसा अली, महेश भट्ट, वेदप्रताप वैदिक, सैफुद्दीन सोज, अरुण माहेश्वरी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री सुरेंद्र शर्मा ने किया तथा धन्यवाद सुश्री अदिति माहेश्वरी गोयल ने ज्ञापित किया। □

लोकार्पण समारोह संपन्न

८ अप्रैल को वाराणसी के अग्रवाल कन्या इंटर कॉलेज में श्री भगीरथ प्रसाद त्रिपाठी की अध्यक्षता में 'सोच विचार' के १११वें अंक (डॉ. रामदरश मिश्र 'एकाग्र') का लोकार्पण किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि डॉ. रामदरश मिश्र, विशिष्ट अतिथि श्री ओ.एन. सिंह व प्रो. राजेश्वर आचार्य तथा सर्वश्री अशोक अग्रवाल, जयशीला पांडेय, स्मिता मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर मुख्य अतिथि एवं विशिष्ट अतिथि का सर्वश्री निरंकार सिंह, श्रीराम माहेश्वरी, वशिष्ठ अनूप, मुक्ता, चंद्रकला त्रिपाठी, भगवंती सिंह, माधवी तिवारी द्वारा उत्तरीय, पुष्पगुच्छ तथा स्मृति-चिह्न प्रदान कर सम्मान किया गया। संचालन डॉ. जितेंद्र नाथ ने किया तथा धन्यवाद श्री वासुदेव उबेराय ने दिया। □

सम्मान समारोह संपन्न

२९-३० अप्रैल को भोपाल में 'स्पंदन' संस्था की ओर से श्री रमाकांत श्रीवास्तव की अध्यक्षता में स्पंदन सम्मान समारोह आयोजित किया गया। 'हमारा समय और कहानी' विषयक प्रथम सत्र में सर्वश्री संतोष चौबे, मुकेश वर्मा, हरीश पाठक, वीणा सिन्हा, तरुण भटनागर ने रचना पाठ किया। प्रथम दिवस मुख्य अतिथि श्री संतोष चौबे एवं अध्यक्ष श्री रमेशचंद्र शाह रहे। इस अवसर पर श्री मंजूर एहतेशाम को 'स्पदंन कथा शिखर सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप इकतीस हजार रुपए की राशि, शॉल तथा स्मृति-चिह्न भेंट किए गए। सर्वश्री भगवानदास मोरवाल व पवन करण को 'स्पंदन कृति सम्मान', शैलेंद्र सागर को 'स्पंदन साहित्यिक पत्रिका सम्मान', शिवनारायण को 'स्पंदन आलोचना सम्मान', यतींद्र मिश्र को 'स्पंदन ललित कला सम्मान' से सम्मानित किया गया। सभी को ग्यारह हजार रुपए की राशि, शॉल तथा स्मृति-चिह्न भेंट किया गया। श्री सत्येंद्र सिंह सोलंकी को 'स्पंदन युवा पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप इक्यावन सौ रुपए, शॉल तथा स्मृति-चिह्न भेंट किया गया। संचालन डॉ. आनंद कुमार सिंह ने किया। द्वितीय दिवस पर हिंदी भवन के महादेवी कक्ष में श्री मंजूर एहतेशाम की अध्यक्षता में सम्मानित रचनाकारों ने रचना पाठ किया। संचालन श्री पंकज सुबीर ने किया तथा आभार सुश्री उर्मिला शिरीष ने व्यक्त किया। □

रसवंती काव्य-संध्या आयोजित

२७ अप्रैल को नई दिल्ली के हिंदी भवन सभागार में पूर्व राज यपाल एवं 'साहित्य अमृत' के संपादक श्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी के सान्निध्य एवं श्री रामनिवास जाजू के मुख्य आतिथ्य में रसवंती काव्य-संध्या का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री माहेश्वर तिवारी, चंद्रसेन विराट, राजेश रेड्डी, बनज कुमार 'बनज' ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर सर्वश्री त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी, राजनारायण बिसारिया, बालस्वरूप राही, गोविंद व्यास, अनीस अहमद, इमरोज व मीरा जौहरी द्वारा श्री रामनिवास जाजू के समग्र कविता-संग्रह 'अंतरिक्ष' का लोकार्पण भी किया गया। संचालन श्री नरेश शांडिल्य ने किया। □

विश्वशांति कवि-सम्मेलन संपन्न

१ मई को हैदराबाद में श्री नेहपाल सिंह की अध्यक्षता में आयोजित गीत चाँदनी संस्था के ३५वें वर्ष के छठे मासिक कवि-सम्मेलन में सर्वश्री चंद्रप्रकाश दायमा, जी. परमेश्वर, एल. रंजना, उमा देवी सोनी, संतोष कुमार मिश्र 'माधुर्य', सूरज प्रसाद सोनी, नीलम कुमार बिड़ला, शिव कुमार तिवारी 'कोहिरी', दयाकृष्ण गोयल, रत्नकला मिश्र, कुमुद बाला ने काव्य पाठ किया। संचालन श्री गोविंद अक्षय ने किया तथा धन्यवाद सुश्री रत्नकला मिश्र ने ज्ञापित किया। □

लोकार्पण समारोह संपन्न

७ मई को नई दिल्ली के अशोका होटल में डॉ. दामोदर खड़से के उपन्यास 'खिड़कियाँ', डॉ. ऋता शुक्ल की कृति 'कथा लोकनाथ की' व श्रीमती बी.वाइ. ललितांबा द्वारा संपादित 'कन्नड़ की लोकप्रिय कहानियाँ' का विमोचन प्रधानमंत्री कार्यालय के राज्यमंत्री डॉ. जितेंद्र सिंह द्वारा किया गया। इस अवसर पर सांसद श्री जनार्दन मिश्रा और श्री अजय मिश्रा टेनी उपस्थित थे। □

साहित्यिक गोष्ठी संपन्न

१५ मई को हैदराबाद के गांधी दर्शन मंडप सभागृह में श्री बृहस्पति शर्मा की अध्यक्षता में हिंदी लेखक संघ की ५२१वीं साहित्यिक गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री चंद्रप्रकाश दायमा, दुर्गाराज पटून, पुरुषोत्तम कडे, रहमान राहत, इमरान हुसैन, एल रंजना, लतीफुद्दीन लतीफ, साजिद संजिदा, सीताराम माने, गजानंद संगेवार, रोहिताश्व, दयाकृष्ण गोयल, प्रदीप नाँदगांवकर, शकील हैदर, दर्शन सिंह, दिवाकर शर्मा, विकास महिपति, दिनेश अग्रवाल, प्रेमलता श्रीवास्तव, दीपक चिंडालिया वाल्मीकि, सुधेश कुमार 'निराला', जईम जुमेरा, जाहिद हरियाणवी, अंजनी कुमार गोयल, असलम फरशोरी सहित लगभग ४० साहित्यकारों ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री गोविंद अक्षय ने किया तथा धन्यवाद सुश्री रत्नकला मिश्र ने ज्ञापित

किया। ☐

समीक्षा गोष्ठी संपन्न

विगत दिनों जबलपुर में मानकुँवर बाई महिला महाविद्यालय में साहित्य परिषद् की स्थानीय इकाई पाठक मंच के तत्त्वावधान में डॉ. कृष्णकांत चतुर्वेदी की कृति 'अनुवाक्' पर समीक्षा गोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री रंजन श्रीवास्तव, चंद्रा चतुर्वेदी, अमरेंद्र नारायण, नीना उपाध्याय, स्मृति शुक्ला, सी.बी. श्रीवास्तव, कृष्णकांत चतुर्वेदी ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री विवेक रंजन ने किया। ☐

डॉ. सुशील कुमार पांडेय 'साहित्येंदु' सम्मानित

१४ अप्रैल को जयपुर के रोटरी क्लब में अखिल भारतीय साहित्य परिषद् राजस्थान, जयपुर महानगर द्वारा डॉ. सुशील कुमार पांडेय 'साहित्येंदु' की रचना 'तुलसी तत्त्व चिंतन' को 'श्री शुकदेव शास्त्री अखिल भारतीय निबंध-संग्रह पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। सर्वश्री मथुरेश नंदन, सत्यनारायण वर्मा, देवर्षि कलानाथ शास्त्री द्वारा उन्हें प्रशस्ति-पत्र, स्मृति-चिह्न, इक्कीस हजार रुपए की राशि भेंट की गई। ☐

श्री रमाकांत शर्मा सम्मानित

विगत दिनों रायपुर में श्री रमाकांत शर्मा 'उद्भ्रांत' द्वारा रचित व अंग्रेजी, ओड़िया सहित कई भाषाओं में अनुवाद के साथ बहुचर्चित काव्यकृति 'राधामाधव' पर प्रथम गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर अंतरराष्ट्रीय साहित्य पुरस्कार से सम्मानित करने की घोषणा की गई। सर्वश्री नित्यानंद तिवारी, कर्ण सिंह, खगेंद्र ठाकुर एवं जयप्रकाश मानस द्वारा इक्यावन हजार रुपए की राशि, मानपत्र, प्रतीक-चिह्न २ जून को आयोजित १५वें अंतरराष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन, रूस में भेंट किए जाएँगे। ☐

प्रविष्टियाँ आमंत्रित

पटना के डॉ. शंकर दयाल सिंह स्मृति पुस्तकालय के तत्त्वावधान में अखिल भारतीय लेखन प्रतियोगिता का आयोजन किया जा रहा है। डॉ. महाराज कृष्ण जैन की स्मृति में आयोजित इस प्रतियोगिता में 'नवोदित प्रतिभाओं को उभारने में डॉ. महाराज कृष्ण जैन का योगदान' विषय पर इच्छुक प्रतिभागी ३१ दिसंबर, २०१८ तक डॉ. शंकर दयाल सिंह स्मृति पुस्तकालय, कामता सदन (ग्राउंड फ्लोर) रायजी की गली, पूर्वी बोरिंग कैनाल रोड, पटना-८००००१ पते पर भेज सकते हैं। तीन सफल प्रतिभागियों को क्रमश: तीन हजार, दो हजार और एक हजार की राशि के पुरस्कार से सम्मानित किया जाएगा। दूरभाष : ९९३९३००४३८ ☐

परिसंवाद आयोजित

२३ अप्रैल को नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी द्वारा अपने सभागार में 'पुस्तकें, जिन्होंने बदला मेरा जीवन' विषय पर परिसंवाद का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री देश दीपक, जतिन दास, मनोहर बाथम, राजेंद्र धोड़पकर, सईद अंसारी, राजेंद्र नाथ, सुजाता प्रसाद, सोनल मानसिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन एवं धन्यवाद डॉ. देवेंद्र कुमार देवेश ने किया। ☐

लोकार्पण समारोह संपन्न

विगत दिनों पटना में भारतीय युवा साहित्यकार परिषद् एवं स्टेशन राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा सुश्री उषा ओझा की अध्यक्षता में आयोजित समारोह में सुश्री नीतू सुदीप्ति नित्या के कथा-संग्रह 'छँटते हुए चावल' का लोकार्पण किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि श्री राजमणि मिश्र, विशिष्ट अतिथि डॉ. सतीशराज पुष्करणा व श्री आर.पी. घायल, सर्वश्री भगवती प्रसाद द्विवेदी, सिद्धेश्वर, जयंत, अशोक प्रजापति, पुष्पा जमुआर, लता परासर, राजेश शुक्ल, शशिकांत शर्मा, अशोक मनोरम, अर्चना त्रिपाठी, संजीव कुमार श्रीवास्तव, कुमार विकास, चंपा देवी, बीना गुप्ता, प्रभात कुमार धवन, मधुरेश नारायण, हरेंद्र सिन्हा, शमाँ कौसर ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री सिद्धेश्वर ने किया तथा धन्यवाद मो. नसीम अख्तर ने ज्ञापित किया। ☐

'भीतर का सच' कृति लोकार्पित

विगत दिनों पटना में वातायन प्रकाशन द्वारा डॉ. सतीशराज पुष्पकरणा की अध्यक्षता में डॉ. उषा किरण खान के नवीनतम लघुकथा संग्रह 'भीतर का सच' का लोकार्पण किया गया, जिसमें सर्वश्री शिवदयाल, भगवती प्रसाद द्विवेदी, संतोष दीक्षित, पुष्पराज, भगवत शरण अनिमेष, पुष्पा जमुआर, जयंत, मेहता नागेंद्र सिंह ने अपने विचार रखे। संचालन डॉ. अर्चना त्रिपाठी ने किया तथा धन्यवाद श्री राजेश शुक्ल ने ज्ञापित किया। ☐

सन्निधि संगोष्ठी आयोजित

विगत दिनों नई दिल्ली में गांधी हिंदुस्तानी साहित्य सभा एवं विष्णु प्रभाकर प्रतिष्ठान के संयुक्त तत्त्वावधान में डॉ. सुरेश चंद्र शर्मा की अध्यक्षता एवं श्री राकेश रेणु के मुख्य आतिथ्य में श्री धीरेंद्र प्रसाद सिंह की पुस्तक 'समुद्र की पीड़ा' पर सन्निधि संगोष्ठी का आयोजन किया गया, जिसमें सर्वश्री विनोद बब्बर, बलराम अग्रवाल, विद्यानंद ठाकुर व राहुल ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री अतुल प्रभाकर ने किया। ☐

डॉ. कमलकिशोर गोयनका सम्मानित

१५ अप्रैल को कोलकाता में श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय के तत्त्वावधान में ओसवाल भवन सभागार में पं. बंगाल के राज्यपाल मान. श्री केशरीनाथ त्रिपाठी की अध्यक्षता में डॉ. कमलकिशोर गोयनका को '२९वें डॉ. हेडगेवार प्रज्ञा सम्मान' से सम्मानित किया गया। सम्मानस्वरूप उन्हें श्रीफल, शॉल, मानपत्र एवं एक लाख रुपए की राशि भेंट की गई। सर्वश्री अवनिजेश अवस्थी, जिष्णु बसु, ब्रजकिशोर शर्मा व सज्जन कुमार तुलस्यान ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन

डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी ने किया तथा धन्यवाद श्री विमल लाठ ने ज्ञापित किया। □

'तेरा होना तलाशूँ' कृति लोकार्पित

विगत दिनों अलवर में 'अलाव' पत्रिका के संपादक श्री रामकुमार कृषक की अध्यक्षता तथा नाटककार एवं आलोचक प्रो. असगर वजाहत के मुख्य आतिथ्य में गजलकार श्री विनय मिश्र के सद्य:प्रकाशित गजल-संग्रह 'तेरा होना तलाशूँ' का लोकार्पण किया गया, जिसमें विशिष्ट अतिथि प्रो. शंभूनाथ तिवारी थे। इस अवसर पर सर्वश्री जीवन सिंह, दिनेश कुमार, ज्योत्स्ना प्रवाह, लवलेश दत्त, अनु जसरोटिया, हरिशंकर शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. सीमा विजयवर्गीय ने किया तथा आभार प्राचार्य डॉ. रमेश चंद्र खंडूड़ी ने व्यक्त किया। □

संस्कृति संवाद शृंखला-८ आयोजित

२१ अप्रैल को नई दिल्ली में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र की ओर से कला केंद्र के मुख्य सभागार में कलाऋषि बाबा योगेंद्र पर केंद्रित संस्कृति संवाद शृंखला-८ का आयोजन किया गया, जिसमें मुख्य अतिथि गोवा की राज्यपाल श्रीमती मृदुला सिन्हा, प्रो. सच्चिदानंद जोशी एवं श्री मनोज तिवारी ने अपने विचार व्यक्त किए। इस अवसर पर सर्वश्री बाबा योगेंद्र, मृदुला सिन्हा, उस्ताद वसीफुद्दीन डागर, मालिनी अवस्थी, मनोज तिवारी, माधव भान द्वारा बाबा योगेंद्र पर केंद्रित पुस्तक 'कला साधना के वटवृक्ष' का लोकार्पण किया गया। प्रथम सत्र का संचालन श्री अतुल जैन ने किया। द्वितीय सत्र में श्री श्याम शर्मा की अध्यक्षता में श्री उदय इंदुरकर एवं सुश्री मालिनी अवस्थी ने अपने विचार व्यक्त किए। तृतीय सत्र में सर्वश्री उस्ताद वसीफुद्दीन डागर, हीरालाल प्रजापति, चेतन जोशी, नलिनी, दयाप्रकाश सिन्हा, टी.एस. नागभरना, अमीर चंद, गजेंद्र सोलंकी, स्वर्ण अनिल एवं रामबहादुर राय ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्री राहुल चौधरी नील ने किया। □

संग्रह कक्ष का शुभारंभ

विगत दिनों नई दिल्ली में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र के कलानिधि विभाग में वरिष्ठ पत्रकार एवं इतिहासविद् प्रो. देवेंद्र स्वरूप की निजी पुस्तकों की अमूल्य धरोहर हेतु 'व्यक्तिगत ग्रंथ संग्रह कक्ष' का शुभारंभ उनके करकमलों से किया गया। इस अवसर पर संघ के सह-सरकार्यवाह मान. डॉ. कृष्ण गोपाल तथा सर्वश्री सच्चिदानंद जोशी, गोविंद आर्य, आर.सी. गौड़, वेदप्रताप वैदिक, रामबहादुर राय आदि विद्वान् वक्ताओं ने अपने विचार व्यक्त किए। □

पुरस्कार घोषित

४ मई को ओ.टी.एस. के भगवत सिंह मेहता सभागार में के.के. बिड़ला फाउंडेशन की ओर से हिंदी और राजस्थानी भाषा के लेखकों को प्रतिवर्ष दिए जानेवाले 'बिहारी पुरस्कार' से डॉ. सत्यनारायण को पद्मश्री डॉ. विजयशंकर व्यास द्वारा प्रशस्ति-पत्र और दो लाख रुपए की राशि प्रदान कर सम्मानित किया गया। वर्ष २०१७ के बिहारी पुरस्कार के लिए श्री विजय वर्मा के निबंध-संग्रह 'लोकावलोकन' को एवं पंद्रह लाख रुपए के 'सरस्वती सम्मान' के लिए श्री सितांशु यशश्चंद्र के गुजराती काव्य संग्रह 'वखार' को चुना गया। □

'अभिशप्त कथा' उपन्यास का मंचन

१ मई को वाराणसी में नागरी नाटक मंडली प्रेक्षागृह में पद्मश्री डॉ. सरोज चूड़ामणि के मुख्य आतिथ्य में प्रख्यात साहित्यकार पद्मश्री डॉ. मनु शर्मा के उपन्यास 'अभिशप्त कथा' का मंचन किया गया, जिसमें सर्वश्री मोती लाल गुप्ता, अवनीश द्विवेदी, हरिश्चंद्र पाल, अजय रोशन, शिवेंद्र राय, आशुतोष द्विवेदी, शिव कुमार चौहान, भोला सिंह राठौर, धन रतन यादव, रोली दीक्षित, नैन्सी सेठ, ऋचा पांडेय, ज्योति सिंह, सोनम सेठ की विशेष भूमिका रही। संचालन डॉ. राम सुधार सिंह ने किया तथा धन्यवाद डॉ. एस.एस. गांगुली ने ज्ञापित किया। □

स्मारिका विमोचित

१५ मई को नई दिल्ली के इंद्रप्रस्थ विश्व संवाद केंद्र में राष्ट्र सेविका समिति की तृतीय प्रमुख संचालिका श्रीमती उषा ताई को समर्पित स्मारिका का विमोचन वर्तमान संचालिका मा. वी. शांता कुमारजी द्वारा किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्रीमती किरण चोपड़ा तथा विशिष्ट अतिथि डॉ. बजरंगलाल गुप्त ने अपने विचार व्यक्त किए। □

साहित्यिक क्षति

श्री बालकवि बैरागी नहीं रहे

१३ मई को हिंदी के प्रतिष्ठित साहित्यकार श्री बालकवि बैरागी का निधन हो गया। उनका जन्म १० फरवरी, १९३१ को मंदसौर जिले की मनासा तहसील के रामपुर गाँव में हुआ। वे ८७ वर्ष के थे। साहित्य के साथ-साथ वे राजनीतिक जगत् में भी काफी सक्रिय रहे। दो बार सांसद व मध्य प्रदेश सरकार में मंत्री रहे। वे हिंदी काव्य मंचों पर बहुत लोकप्रिय रहे। उनकी लिखी कुछ प्रमुख रचनाएँ हैं—'दरद दीवानी', 'जूझ रहा है हिंदुस्तान', 'ललकार', 'भावी रक्षक देश के', 'दो टूक', 'रेत के रिश्ते', 'वंशज का वक्तव्य', 'कोई तो समझे', 'ओ! अमलतास', 'आओ बच्चो', 'गाओ बच्चो', 'गौरव गीत', 'सिंड्रेला', 'गुलिवर', 'दादी का कर्ज', 'मन-ही-मन', 'शीलवती आम', 'चटक म्हारा चंपा', 'अई जावो मैदान में', 'सरपंच', 'कच्छ का पदयात्री', 'मनुहार भाभी'। उनकी चर्चित बाल कविताएँ हैं—'शिशुओं के लिए पाँच कविताएँ', 'विश्वास', 'चाँद में धब्बा', 'चाय बनाओ', 'आकाश', 'खुद सागर बन जाओ' आदि।

साहित्य अमृत परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि।